ओ अर्हन्

शुक्ल जैन रामायण

(पूर्वार्द्ध)

लेखक
जैन मुनि श्री पं० शुक्लचन्द जी महाराज

प्रकाशक
भीमसेनशाह रावलपिंडी वाले
सदर बाजार, देहली

द्वितीयवार २०००   वीर संवत् २४८०   मूल्य ३)

मुद्रक—जगदेवसिंह शास्त्री, सम्राट् प्रेस, पहाडी धीरज देहली।

प्रकाशकीय वक्तव्य

प्रिय पाठक गण !

चिरप्रतीक्षा के पश्चात् रामायण का दूसरा संस्करण आपके हाथों तक पहुंच रहा है। सं० २०१० के चातुर्मास मे पंडित प्रवर मन्त्री मुनि श्री शुक्लचन्द्र जी ने अपनी शास्त्रीय अमृतवर्षा के साथ-साथ रामायण की ऐतिहासिक कथा का भी रस प्रवाहित किया। श्रोतृवर्ग मे सर्वश्री ला० बोधराज जी (रावलपिण्डी वाले), ला० वृद्धिशाह जी, ला० बालमुकुन्द शाह जी, ला० रोचीशाह जी तथा ला० प्यारेलाल जी निरन्तर उपस्थित रहे। आप महानुभावो के मन मे रामायण का द्वितीय सस्करण निकालने की महती इच्छा जागृत हुई। आप लोगों ने स्वयं तथा अपने भाइयो से सहायता प्राप्त करके इस गुरुतर कार्य को सम्भाला। इसी प्रकार श्री किशनलाल गुप्ता मालिक कृष्णा हौजरी लाजपतनगर से भी अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ। जिसके फलस्वरूप यह पुस्तक प्रस्तुत है। इसके लिये उपर्युक्त महानुभावों के प्रति समाज सदा कृतज्ञ रहेगा। इसमे महाराज जी ने कुछ नवीन प्रकरण भी जोड़ दिये है, जैसे—परशुराम संवाद, अहिल्या प्रकरण आदि। आशा है इस अपूर्व रचना से समाज पूरा-पूरा लाभ उठायेगा।

विनीत

भीमसेनशाह

दान दाताओं की सूची

इस पुस्तक के प्रकाशनार्थ निम्नलिखित दानी महानुभावो ने दान दिया—

१०००) श्री पूज्य सोहनलाल जैन धर्मोपकरण सामग्री भण्डार अम्बाला शहर।

१०००) श्री लाला भीमसेन शाह सुपुत्र श्री लाला देवाशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१५१) श्री रामनाथ उत्तमचन्द जैन आढ़ती नया बाजार देहली।

१५०) गुप्तदान एक व्यक्ति से

१२५) श्री मुन्नालाल रामधारी तेल वाले नया बाजार, देहली।

१०१) श्री लाला बोधराज सुपुत्र लाला नानकूशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री रोचीशाह सुपुत्र श्री लाला कन्हैयाशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

(श्री लालशाह जैन के द्वारा)

१०१) श्री देशराज टेकचन्द सुपुत्र श्री लाला राधुशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला उत्तमचन्द सुपुत्र श्री लाला काकुशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला फकीरचन्द सुपुत्र श्री लाला काकुशाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला डोडेशाह सुपुत्र श्री लाला केसर शाह जैन रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला इन्द्रमोहनलाल त्रिलोकचन्द जैन
रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला बालमुकुन्द सुपुत्र श्री लाला तेजेशाह जैन
रावलपिण्डी वाले।

१०१) श्री लाला वकीलचन्द सुपुत्र श्री लाला तेजेशाह जैन
रावलपिण्डी वाले।
(उनके भाई श्री लाला मुन्शीराम जैन के द्वारा)

१०१) तिलकचन्द जी जैन ज्वेलर्स चांदनी चौक।

१०१) इन्द्रकौर धर्मपत्नी लाला भगवानदास अमृतसर वाले।

१०१) श्री मास्टर सन्तराम जैन थाना रोड देहली।

५१) श्री रूपचन्द जैन नया बाजार देहली।

५१) डा० प्रेमनाथ की धर्मपत्नी शान्तिदेवी बारहटूटी, देहली।

२६) श्री खजानचन्द जैन देहली, राजा खेड़ी वाले।

१०) श्री लाला हुकमचन्द सुपुत्र श्री लाला अर्जुनदास अरोड़ा सौगन्ध, स्थान खुड़ियां, तहसील चुनियां, जिला लाहौर। वर्तमान—कोल्हापुर रोड, मकान नं० ४७ सब्जी मण्डी कमलानगर देहली।

५) गुप्तदान एक व्यक्ति से

योग ३७८१)

इन सब दानी महानुभावों का समस्त जैन समाज की ओर से हार्दिक धन्यवाद।

भूमिका

भारतीय संस्कृति की विशेषता उत्सर्ग है। इसमें ग्रहण का नहीं त्याग का महत्त्व है। महान् सम्राट् त्यागियों और लंगोटी धारियों के सामने घुटने टेकते आए है। प्रस्तुत जैन रामायण इसी भारतीय संस्कृति का संक्षिप्त संस्करण है। वह समस्त देश और समस्त जाति की स्थायी सम्पत्ति है। इसमें जातीय सभ्यता तथा संस्कृति का सार अन्तर्निहित है। धर्म और समाज की व्यवस्था, माता-पिता, भाई-बहिन, भाई-भाई, पति-पत्नी, शत्रु-मित्र, राजा-प्रजा आदि सम्बन्धों के आदर्श निर्वाह के ज्वलन्त उदाहरण यहाँ विद्यमान हैं। मानव जीवन की सर्वाङ्गपूर्ण झाँकी देखने को मिलती है। जीवन की सरलतम तथा जटिलतम समस्याओ का समाधान तथा पूर्ण विवेचन सर्वत्र बिखरा पड़ा है। लोक-परलोक संग्रह का जो विलक्षण प्रदर्शन इस कथा-काव्य मे है वह अन्यत्र दुर्लभ है। "यन्नेहास्ति न तत्कचित्" वाली बात यहाँ चरितार्थ होती है। पं० प्रवर मुनि श्री शुक्लचन्द जी महाराज की पैनी दृष्टि से प्रायः कुछ बच नहीं सका है।

किसी राष्ट्र अथवा जाति की महती परम्पराओ का प्रतीक उसका धन या शारीरिक बल कदापि नही। वे तो उसके गौरवमय अतीत के इतिहास मे व्याप्त है। जिस राष्ट्र का इतिहास जितना उज्ज्वल और गौरवशाली होता है, वह राष्ट्र भी उतना ही अधिक

विकसित माना जाता है। जंगली जातियो तथा सभ्य जातियों के बीच यही एक विभाजक रेखा है। बूढ़ा भारत अपनी पराधीनता की अवस्था में भी विजेताओं का श्रद्धा-पात्र बना रहा, इसमे यही रहस्य अन्तर्निहित है। जैन रामायण हमारे गौरवमय अतीत की सजीव गाथा है। इसमें साहित्य और इतिहास का विलक्षण समन्वय है। इतिहास जब साहित्य में से छनकर आता है तब वह और भी प्राणप्रद हो उठता है। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि अपने वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन के आदर्श तथा स्फूर्ति के लिए जैन रामायण का पठन-पाठन बनाए रक्खें। इस महती गौरवगाथा का अभाव समाज को चिरकाल से खटक रहा था। प्रस्तुत ग्रन्थ उन्हीं सब भाइयों की प्रेरणा का फल है।

द्विजकुमार शास्त्री, एम. ए.
न्यायतीर्थ

विषय सूची

—: प्राक्कथन :—

(१) इस अनादि संसार मे सर्वज्ञ देव ने काल के दो विभाग किये है। एक का नाम अवसर्पणि काल और दूसरे का नाम उत्सर्पणि काल। अपसर्पणि काल के छः विभाग किये है। जिनको छः आरे भी कहते है। प्रथम आरा चार क्रोडाक्रोड सागरोपम का होता है। इस मे जो मनुष्य होते है वे अकर्म भूमिज युगलिये कहलाते है। दश प्रकार के कल्प वृक्षा से ही जिन्हो की इच्छाये पूर्ण होती है। धर्म नीति राजनीति व्यवहारिक कार्य कुछ नहीं होते। भद्र शान्त परम सुख भोगने वाले होते हैं, इस लिये इसका नाम सुखमा सुखमा है।

२ दूसरा सुखमा यह तीन क्रोडाक्रोड सागर का होता है। इसमे भी उपरोक्त सब बाते होती है। इतना विशेष है कि अनन्ते वरुण गंधरस स्पर्श को न्यूनता के कारण सुखमा कहलाता है।

३ तीसरा आरा सुषमा दुखमा कहलाता है, यह दो क्रोडाक्रोड सागरोपम का होता है। इसके पहिले दो भागो मे प्रायः दूसरे आरे के समान स्थिति रहती है। और तीसरे मे जब चौरासी लाख पूर्व से अधिक समय शेष रह जाता है उस समय पदार्थो की कमी होने के कारण मनुष्यो मे झगड़ा पैदा हो जाता है। झगड़ा मिटाने के लिये उन मे से पांच मनुष्य नियत होते है और 'है' ऐसा दण्ड स्थापन करते है। कुछ समय बीत जाने के बाद और पांच मनुष्य नियत होते है और 'मा' ऐसा दंड स्थापन करते है। कुछ समय बाद पांच मनुष्य और नियत होते है

और ('धिक्कार') दंड स्थापन करते है। इस तरह झगड़ों को शान्त करते हैं। जब इस से भी आगे अधिक झगड़ा बढ़ गया तो १५ वें श्री नामक अपर नाभि नामक कुलकर को विशेष अधिकार दिये गये। इस लिये इनका नाम कुलकर है और (मनु) भी इनको कहते है। इन मे १५ वे कुलकर को नाभिराजा भी कहते है। नाभिराजा की स्त्री मरुदेवीजी ने एक श्रेष्ठ और अति उत्तम पुत्र को जन्म दिया। जिनका नाम श्री आदिनाथ रखा गया। जब ये बड़े हुए तब इनके पिता ने इनकी शादी दो सुन्दर कन्याओ से की। एक का नाम सुमंगला और दूसरी का नाम सुनन्दा। श्री सुमंगला के बड़े पुत्र का नाम भरत था और पुत्री का नाम ब्रह्मो। सुनन्दाजो ने एक पुत्र का जन्म दिया उनका नाम बाहुबली था और कन्या का नाम सुन्दरी था। वैसे तो अकर्भ भूमि से कर्म भूमि पन्द्रहवे कुलकर से ही प्रारम्भ हो गई थी, परन्तु श्री आदिनाथ जी ने जनता को अनाज बोना बर्तन बनाना, खाना पकाना मकानादि बनाना, वास्त्रदि बनाना, आवश्यक शिल्प कला व्यवहार आदे की शिक्षा दी। इस तरह रुर्व प्रकार के सुधारो का प्रादुर्भाव श्री ऋषभदेव जी ने किया। इसी कारण इस काल के आदिनाथ कहलाये। प्रजा ने आदिनाथ को अपना राजा बना लिया। आदिनाथ ने राजनीति चलाने के बाद धर्म नीति स्थापना की, धर्म दान से होता है। इस कारण एक वर्प तक ऋषभदेवजी ने निरंतर दान दिया, स्वयं आदर्श दानी बनने के पश्चात् अपने पुत्रों को राजपाट बांट कर संसार का त्याग कर मुनिपद को धारण किया। बहुत काल भ्रमण के बाद चार घातिक कर्मो का नाश कर केवल ज्ञान को प्राप्त किया। और चार तीर्थ की स्थापना करके मुनि और गृहस्थ दो प्रकार का धर्म संसार रूपी समुद्र से तैरने को बतलाया। तीसरा आरा कुछ शेष रहने पर सर्व कर्मों को काट कर मोक्ष को प्राप्त हुए। सिद्ध बुद्ध सच्चिदानंद हुए।

आदिनाथजी के पुत्र भरतजी इस काल के प्रथम चक्रवर्ती हुए। भरत क्षेत्र के छः खण्डों का राज किया। इन्होंने भी अपने पुत्र सूर्य कुमार को अपना उत्तराधिकारी बना के राज को छोड़ कर केवल ज्ञान को प्राप्त किया और मोक्ष मे पहुचे। सूर्य कुमार से सूर्यवंश की स्थापना हुई और इस प्रकार तीसरे आरे मे एक तीर्थंकर प्रथमावतार श्री आदि नाथ जी और एक चक्रवर्ती प्रथम भोगा वतार भरत हुए।

४ चौथा आरा दुखमा सुखमा कहलाता है। इस मे सुखकी अपेक्षा दु.ख अधिक होता है। इसका समय प्रमाण ४२ हजार वर्ष कम एक क्रोडाक्रोड सागर का होता है। इस आरे में २३ तीर्थंकर धर्मावतार, ११ चक्रवर्ती भोगावतार, ९ बलदेव, ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव, यह २७ कर्मावतार हुए है और इनके समकालीन ९ नारद, २४ कामदेव अवतार ११ रुद्रावतार (क्रर-कर्मी) होते है।

५ पांचवां आरा दुखमा कहलाता है, इस मे दुःख ही दुःख होता है। समय प्रमाण २१ हजार वर्ष का होता है। इसको पचम काल और कलियुग भी कहते है। चौथे आरे के अन्तिम तीर्थ-कर धर्मावतार भगवान् महावीर स्वामी के निर्वाण मोक्ष जाने के तीन वर्ष साढे आठ महीने पश्चात् पंचम आरा कलियुग लगा है और यह अवनति काल है।

६ छठा आरा दुखमा दुखमा कहलाता है। काल प्रमाण २१ हजार वर्ष का होता है। इस आरे का प्रथम दिन लगते ही भरत क्षेत्र के वैताड पर्वत के आसपास क्षेत्र को छोड़कर अर्ध भरत से न्यून सर्व क्षेत्रो मे प्रलय होती है। २१ हजार वर्ष तक प्रलय रहती है। इस मे राजनीति धर्मनीति कुछ नहीं होती है। वैताड पर्वत के आसपास भी प्राणी मात्र क

महा कष्ट होता है। सब मिलकर दश क्रोडाक्रोड सागर का अवसर्पणि काल है। इसी तरह १० क्रोडाक्रोड सागर का उत्सर्पिणी काल है ; वह इस तरह है—

पहिला दुषमा-दुषमा अवसर्पणि के छठे आरे की मानिन्द यह भी २१ हजार वर्ष का होता है और प्रलय काल भी रहता है। दूसरा आरा दुषमा २१ हजार वर्ष का अवसर्पणि काल के पांचवे आरे के समान विशेषताएं होती है। उन्नति कर समय है। तीसरा आरा ४२ हजार वर्ष कम एक क्रोडा क्रोड सागर का होता है, अवसर्पिणि काल के चौथे आरे का तरह २३ धर्मावतार ११ चक्रवर्ती ६ बलदेव, ६ वासुदेव आदि होते है। चौथा आरा दो क्रोडा क्रोड सागर का होता है। दुखमा सुखमा अवसर्पणि काल के तीसरे आरे की तरह एक धर्मावतार एक चक्रवर्ती होता है। इसके पिछले भाग में अकर्म भूमि युगलिए मनुष्य हो जाते है।

पांचवा आरा सुखमा अवसर्पणि के दूसरे आरे की तरह तीन क्रोडा क्रोड सागर का।

छठा आरा—सुखमा-सुखमा अवसर्पणि के प्रथम आरे की तरह चार क्रोडा क्रोड सागरोपम का होता है।

दश क्रोडा क्रोड सागर का अवसर्पिणी काल और दश क्रोडा क्रोड सागर सागर का उत्सर्पणि काल २० क्रोडा क्रोड सागर का एक काल चक्र होता है। ऐसे अनन्त काल चक्र बीत गये और अनन्त बीतेंगे। अनादि अनन्त यही नियम है।

※ चौबीस तीर्थंकरों (धर्मावतार) का परिचय ※

भगवान् ऋषभदेवजी तीसरे आरे के अंत मे हुए इनके सौ पुत्र थे, जिस मे भरत महाराज प्रथम चक्रवर्ती हुए। भरत

महाराज के बड़े पुत्र सूर्यकुमार राज्य के अधिकारी हुए। इन से सूर्यवंश चला है। रामचन्द्रजी भी इसी वंश के थे।

भगवान् ऋषभदेवजी के निर्वाण पद को प्राप्त करने के पश्चात् लाख करोड़ सागरोपम के पश्चात् दुषम सुषमा नामक चौथे आरे मे स्वर्ग से चवकर दूसरे तीर्थंकर पद के भावी अधिकारी श्री अजितनाथ अयोध्या नगरी के राजा जितशत्रु की रानी विजया की कोख में पधारे। इनका जन्म माघ शुक्ला ८ को हुवा। वहां उन्होने एकहत्तर लाख पूर्व तक गृहस्थोचित राजसुखों का उपभोग किया। तदुपरान्त माघ शुक्ला ६ को अपनी राजधानी ही के उपवन मे संसार के प्रति उपराम हो जाने पर इन्होने दीक्षा व्रत ग्रहण किया। दीक्षा व्रत के बारह वर्ष पीछे पौष कृष्ण ११ को इन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। तदनन्तर एक लाख पूर्व तक चरित्र का पालन करते रहे और जब सम्पूर्ण कर्मों का नाश कर चुके तब चैत्रशुक्ल ५ को मोक्ष पधारे। गुण संपन्न नाम इस कारण रक्खा कि जब यह गर्भ में थे तो इनकी माता इनके पिता के साथ सदा पासों का खेल खेला करती थी। उसमें वह कभी भी पराजित नहीं हुई और यही कारण है कि उसका नाम 'अजितनाथ' रखा गया। इनके समय में इनके चचा सुमित्र का सुपुत्र सागर हुआ जो आगे चक्रवर्ती राजा हुआ।

दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ जी के निर्वाण पधारने के ३० लाख करोड़ सागरोपम के पश्चात् तीसरे तीर्थंकर श्री सभवनाथ जी इस लोक मे पधारे। इनका जन्म माघ शुक्ला १४ को हुआ था। श्रावस्ती नगरी के जितारी राजा और सेवा रानी इनके पिता माता थे। उनसठ लाख पूर्व गृहस्थाश्रम मे बीते। अगहन शुक्ल १५ को अपनी जन्म भूमि ही के उपवन में जाकर दीक्षा ग्रहण की। यों जब दीक्षित होने को पूरे चौदह वर्ष हो गये।

कार्तिक कृष्ण ५ को इन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। इस के पश्चात् एक लक्ष पूर्व तक आपने चारित्र का पालन किया और जब सारे कर्म क्षय हो गये तब वह चैत्र शुक्ल ५ को मुक्ति मे पधारे। जब आप गर्भ में आये थे, उस समय चारो ओर सुकाल सुख और शान्ति की संभावना होने लगी। बस इमी तत्कालीन परिस्थिति को देखकर इनका नाम संभवनाथजी दिया गया।

इन तीसरे तीर्थंकर के निर्बाण पद को प्राप्त करने के बाद दश लाख करोड सागरोपम का समय बीत जाने के बाद माघ शुक्ल १ को अयोध्या मे राजा संवर की सिद्धार्थ रानी की कोख से श्री अभिनन्दन जी चौथे तीर्थंकर का जन्म हुआ। कहते है कि इनके गर्भ मे पधारने और जन्म ग्रहण करने के बीच वाले अवसर में राजा संवर की शासन नीति से अति ही प्रसन्न होकर चारो ओर के आश्रित माण्डलिक राजाओ ने उन को अभिनन्दन पत्र भेंट कर उनके लिये अपनी कृतज्ञता प्रकट की। इस के लिए उनकी प्रजा ने उन दिनो बड़ा ही आनन्द मनाया और उसी उमड़े हुए चहुं ओर के आनन्द का अनुमान कर माता पिता ने नवजात राज कुमार का नाम अभिनन्दन रख दिया। एक दिन माघ शुक्ला १२ को अपनी पैतृक सम्पत्ति का उनचास लाख पूर्व तक राजोचित सुख भोगने के पश्चात् इन्होने अयोध्या के निकटवर्ती उपवन मे दीक्षा ग्रहण की। इस के अठाईस वर्ष बाद पौष कृष्णा १४ को केवल ज्ञान की इन्हे प्राप्ति हुई। यो एक लाख पूर्व के अपने दीक्षा व्रत से सम्पूर्ण कर्मो का क्षय कर वैशाख शुक्ल ८ को मोक्ष पधारे।

चौथे तीर्थंकर मुक्ति मे पधार जाने के नौलाख करोड सागरोपम के पीछे एक दिन वैशाख शुक्ल ८ को अयोध्या के तत्कालीन राजा मेघ की रानी मंगला की कोख से पांचवें तीर्थंकर

सुमतिनाथ का जन्म हुआ। आप उनतालीस लाख पूर्व तक गृहस्थाश्रम मे रहे फिर वैशाख शुक्ल ६ को अयोध्या के उपवन मे आपने दीक्षा व्रत लिया। उसके ठीक बीस वर्ष पश्चात चैत्र शुक्ला ११ को आपने केवल ज्ञान प्राप्त किया। इस के पश्चात् इन्होंने भी एक लाख पूर्व तक दीक्षाव्रत का पालन कर और अपने शुक्ल ध्यान के बल से सम्पूर्ण कर्मो का क्षय कर चैत्र शुक्ला ६ के दिन मुक्ति मे पधारे। जब आप गर्भ मे थे, इनकी माता ने बड़ा ही सुन्दर न्याय किया था। वह इस प्रकार था—एक मनुष्य के दो स्त्रियां और एक पुत्र था। इस बालक का पिता बचपन से ही मर चुका था। उपमाता माता से भी अधिक स्नेह उस बालक पर करती थी। बालक माता और उपमाता को भी मार कह कर ही पुकारता था। कुछ समय बाद उन दोनो स्त्रियो में विरोध हो गया। अन्त मे दोनो के बीच झगड़ा इतना बढ़ा कि उन दोना मे से प्रत्येक पुत्र को मेरा-मेरा कह कर बड़े ही जो से झगड़ने लगी। अन्त मे निश्चय आपस मे कोई भी न होता देख उन मे से हर एक न्यायाधीश के पास गई। राजा ने विद्वानो की सभा में बैठ कर दोनों की अलग अलग बाते सुनी। बालक से पूछा गया। बालक ने उत्तर मे दोनो को अपनी माताएं बताई यहां उपमाता पर और भी गहरा प्रेम प्रकट किया। राजा और उसकी सभा के विद्वान् बडे ही आश्चर्य मे पड़ गये और अतिम निर्णय नही दे सके। रानी ने भी यह विचित्र घटना राजा द्वारा सुनी। रानी ने इस उलझन का सुनते ही सुलझा लिया।

उसने कहा दोनो स्त्रियो से कह दिया जाय कि जो उसके पति की सम्पत्ति है उसके और इस पुत्र के यो दोनों वस्तुओं के समान दो-दो भाग कर दिये जांय । पश्चात् जो भाग जिसको स्वीकार हो वह ले ले। यह बात सुनकर जो उपमाता होगी वह चुप रह जायगी। परन्तु जो बालक की माता होगी वह शीघ्र कह देगी कि मुझको तो सम्पत्ति भी चाहे न दी जाय परन्तु मेरे बालक को किसी भी प्रकार सुरक्षित रखा जाय। उसके दो विभाग किसी हालत मे न किये जांय। चाहे फिर उसे भी उपमाता को ही सौंप दिया जाय। उसके जीवित रहने से किसी समय देख तो लूंगी। इस प्रकार से माता एवं उपमाता दोनो का पता लग जायगा। रानी की यह सम्मति राजा ने भी स्वीकार कर ली। उसने जा कर वैसा ही फैसला किया। रानी के कथनानुसार फैसला सुनाते ही बालक की माता और उपमाता का पता लग गया। तब तो राजा एवं राजसभा ने एक स्वर से रानी की बुद्धि की प्रशंसा की। उसी दिन से राजा और उसके दरबारियो के द्वारा रानी के भावी पुत्र का नाम सुमति रखने का निश्चय हुआ।

पांचवे तीर्थंकर सुमतिनाथ जी के निर्वाण के नव्वे हजार करोड़ सागरोपम के पश्चात् कार्तिक कृष्णा १२ को कौशाम्बी नगरी के राजा, श्रीधर की रानी सुसीवा की कोख से भगवान् पद्म प्रभु छठे तीर्थंकर का जन्म हुआ। आप उनतीस लाख पूर्व तक गृहस्थाश्रम में रहे। फिर आपने कौशम्बी के उपवन में जाकर कार्तिक कृष्णा ३१ को दीक्षा ग्रहण की, चैत्र शुक्ल १५

को अनुमान छः मास बाद आपको केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। एक लाख पूर्व चरित्र पाला और अपने कर्मों का क्षय कर मार्गशीर्ष कृष्णा ११ के दिन मुक्ति को प्राप्त किया था।

नौ हजार करोड सागरोपम जब छठे तीर्थंकर के निर्वाण का काल बीत चुका, उस समय ज्येष्ठ शुक्ला १२ को वाराणसी नगरी जिसे आज काशी या बनारस भी कहते है—मे राजा प्रतिष्ठ के घर एक बड़े ही सुन्दर सबल और दिव्य शरीरी बालक की उत्पत्ति हुई। माता और पुत्र के नाम क्रमशः पृथ्वी देवी और सुपार्श्व थे। यह ही आगे चलकर सुपार्श्वनाथ नाम के सातवें तीर्थंकर हुए। इन्होने उन्नीस लाख पूर्व गृहस्थाश्रम में रह कर वाराणसी के उपवन मे ज्येष्ठ सुदि १३ को दीक्षा ग्रहण की। इसके नौ मास बाद फाल्गुण कृष्णा ६ के दिन आपको केवल ज्ञान की प्राप्ति हो जाने पर सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके फाल्गुण कृष्णा ७ को निर्वाण पद प्राप्त किया।

सातवें तीर्थंकर के निर्वाण पद मे पधारने को जब सौ करोढ़ सागरोपम बीत चुके थे तब पौष कृष्णा १२ को चन्द्रपुरी नगरी मे महासेन राजा के यहां रानी लक्ष्मणा के गर्भ से आठवें तर्थंकर भगवान् चन्द्रप्रभु का जन्म हुआ। ये नौ लाख पूर्व संसार मे रहे। पौष कृष्णा १३ को चन्द्रपुरी के उपवन मे दीक्षा ग्रहण की। उसी वर्ष फल्गुण कृष्णा ७ को इन्हे केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। एक लाख पूर्व चारित्र पाला फिर अपने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर, यह भाद्रपद कृष्णा ७ को परम पद मोक्ष के अधिकारी बने।

आठवें तीर्थंकर के निर्वाण पद की प्रप्ति के न०वे करोड़ सागरोपम के बाद अगहन कृष्णा ५ को काकन्दी नगरी मे राजा सुग्रीव के घर उनकी रामा नामक रानी की कोख से नवे तीर्थंकर श्री सुविधिनाथ जी का जन्म हुआ। आप एक लाख पूर्व तक संसार मे रहे फिर उसी नगरी के उपवन मे अगहन कृष्णा ६ को दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा ग्रहण करने के चार मास बाद कार्तिक शुक्ल ३ को केवल ज्ञान प्रप्त हुआ। एक लाख पूर्व तक चारित्र पाला और अपने सम्पूर्ण कर्मो का क्षय कर भाद्रपद शुक्ला ६ को मोक्ष मे पधारे।

दशवे तीर्थंकर श्री शीतलनाथ जी थे। इनका जन्म नौवें तीर्थंकर के परम पद प्राप्त करने के करोड सागरोपम के पीछे का है। उस दिन माघ कृष्णा १२ का दिन था। इनके पिता दृढ-रथ और माता नन्दादेवी थी। गृहस्थाश्रम मे रह कर इन्होने पचहत्तर हजार पूर्व बिताये। तब संस.र से चित्त की उपराम अवस्था मे अपनी राजधानी ही के उपवन में माघ कृष्णा १२ को दीक्षा ग्रहण की। इसके पश्चात् दूसरे वर्ष के पौष कृष्णा १४ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई और पच्चीस हजार पूर्व चारित्र पाला फिर यह अपने सम्पूर्ण कर्मो का क्षय करके वैशाख कृष्णा २ को मुक्ति मे पधारे।

ग्यारहवे तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जी थे, इन का जन्म फाल्गुन कृष्णा १२ को दशवे तीर्थंकर के निर्वाण काल के सौ सागर छियासठ लाख छब्बीस हजार वर्ष न्यून एक करोड सागरोपम के

पश्चात् सिंहपुरी नगरी मे हुआ। इनके पिता विष्णु जी एव माता श्रीमती विष्णुदेवी थे। ६३ लाख पूर्व तक संसार में रहे। फाल्गुण कृष्ण ३ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई और इक्कीस लाखपूर्व चारित्र पाला। फिर अपने सम्पूर्ण कर्मों का नाश करके मोक्ष पद को प्राप्त किया। इन के समय मे त्रिपृष्ठ नामके वासुदेव हुए जिन के भाई का नाम अचल था। उसी काल मे रत्नपुर मे अश्वग्रीव नामक प्रतिवासुदेव राज्य करते थे। त्रिपृष्ठने अश्वग्रीव को पराजित कर उसके सारे राज्य को अपने राज्य मे मिला लिया था। इस बात का विशेष उल्लेख श्री वीर-चरित्र भगवान् महावीर के पूर्व भवो का परिचय मे पाठको क मिलेगा।

ग्यारहवे तीर्थकर के निर्वाण पद प्राप्त कर लेने के चौपन सागरोपम के पश्चात् फाल्गुण कृष्ण १४ के दिन चम्पापुरी नाम की नगरी मे बारहवे तीर्थकर श्री वासुपूज्य जी का जन्म हुआ। इनके वसुदेव पिता और जयदेवी माता थी। और यह उसी के राजा रानी थे। भगवान् वासुपूज्य ने अठारह लाख पूर्व तक संसार मे रह कर फाल्गुण कृष्ण १५ को अपनी ही राजधानी के उपवन मे दीक्षा ग्रहण की। उसके बाद माघ शुक्ल २ को इन्हे केवल ज्ञान हुवा। इन्हो ने चौपन लाख पूर्व तक चारित्र पाला। आषाढ शुक्ल १४ को मोक्ष पद मे पधारे। इन्हो के समय मे द्वारिका के राजा ब्रह्मदेव की रानी सुभद्रा से विजय नामक बलदेव का जन्म हुआ। उमा इसी राजा की दूसरी रानी थी उसके

गर्भ से द्विपृष्ठ पैदा हुआ ।दूसरी ओर विजयपुर में श्रीधर राजा राज्य करता था। श्रीमती उसकी एक रानी का नाम था। इसी श्रीमती रानी से तारक नामक बालक पैदा हुआ। जिन्होने आगे चलकर प्रति वासुदेव का पद पाया। इसी तारक को युद्ध मे पराजित कर और मारकर द्विपृष्ठ ने तीन खंड का राज्य पाया और वह दूसरे वासुदेव बने।

तेरहवे तीर्थंकर श्री विमलनाथ जी थे। इनका जन्म बारहवे तीर्थंकर के निर्वाण हो जाने के तीस सागरोपम के पश्चात् माघ शुक्ल ३ को हुआ था। काम्पिलपुरी इनकी जन्म भूमि थी। इनकी माता वहां की रानी थी और पिता राजा थे। कृतवर्मा पिता का नाम और श्यामादेवी माता का नाम था। पैतालीस लाख वर्ष तक राजपाट का सुख भोगा। फिर भव बंधन से छुटकारा पाने के लिये माघ शुक्ल ४ को अपनी राजधानी ही के उपवन मे जाकर उन्होंने दीक्षा ली। पश्चात् पौष शुक्ल ६ को केवल ज्ञान इन्हें हुआ। पन्द्रह लाख वर्षो तक चारित्र पाला। बाद मे सम्पूर्ण कर्मो का क्षय करके आषाढ कृष्ण ७ को मोक्ष पधारे। जब ये गर्भावस्था मे थे, उसमय एक पुरुष अपनी स्त्री को ससुराल से लेकर आ रहा था। मार्ग मे एक स्थान पर वह प्यास से व्याकुल हो पानी पीने के लिये उतरी। इतने मे एक व्यन्तरी उस स्त्री की भांति रूप बनाकर उसके पति के पास आकर बोली--चलो–यहां ठहरने की जगह नहीं है। इस ठौर व्यन्तरियो का भयंकर प्रचार है। तब तो यह पुरुष और

व्यन्तरी शीघ्र ही वहां से चले। इतने मे ही उस पुरुष की वह असली स्त्री जा दूर ही से इस सारी बात को देख रही थी, हांपते कांपते उनके पास आई और बोली–अजी मुझ अनाथिनी को इस निर्जन बन मे आप कहां छोड़ रहे हो। आपके साथ जो स्त्री लग गई है वह आपकी स्त्री नही है। अब तो व्यन्तरी ने अपने वचनो को सत्य सिद्ध करने के लिए समय विचारा और तत्काल ही उस पुरुष के प्रति बोली–मैने जो कहा था वही हुआ ना। अब भी यहां से जल्दी निकल भागो नही तो जीना भी कठिन हो जायगा। इस आश्चर्य वाली बात को देखकर वह बड़ा भयभीत हो गया एवं असमजस में पड़ गया। वह वहां से चलने की तैयारी ही मे था कि इतने मे उसकी असली स्त्री ने उस व्यन्तरी का हाथ पकड़ लिया, तब तो परस्पर वाद विवाद करने लग पड़ी कि मैं हूँ मुख्य स्त्री और दूसरी कहती है कि मैं हूँ मुख्य स्त्री। ऐसा कहकर हाथा पाई करने लगी, अ·त मे वह पुरुष न्याय की याचना करने के लिये उन दोनो को राजा के पास ले गया और सारा वृत्तान्त कह सुनाया, उनका रंग-ढग बोल एक सा देखकर राजा भी आश्चर्य मे पड़ गया कि न्याय क्या दया जाय। अन्त मे राजा ने रानी को यह बात कही दूसरे दिन रानी ने उसका ठीक न्याय कर दिया।

भद्र नाम का बलदेव इन्हीं का समकालीन था। द्वारावती के राजा रुद्र और उनकी रानी सुभद्रा उन के माता पिता थे। स्वयंभू नामक वासुदेव का जन्म इसी राजा की दूसरी रानी

पृथ्वी के गर्भ से हुआ था। मेरक नामक प्रतिवासुदेव भी पूर्वजात हुवा था। यह वंदन पुर निवासी और समर केशी राजा के पुत्र थे। माता का सुन्दरी नाम था स्वयंभू मेरक नामक प्रतिवासुदेव को युद्ध मे संहार करके तीन खण्ड के अधिपति बने। यह तीसरे वासुदेव थे।

तेरहवें तीर्थकर के मोक्ष पधारे ६ सागरोपम व्यतीत हो चुका। बाद मे वैशाख कृष्ण १३ को अयोध्या मे १५ वें तीर्थकर श्री अनत नाथ जी का जन्म हुआ। इन्होने साढ़े बारह लाख वर्ष राज सुख भोगा, फिर संसार के आवागमन से छूटने के लिये वैशाख कृष्ण १४ को उपवन मे दीक्षा अंगीकार की। वैशाख कृष्ण १४ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। सिंहसेन पिता और सुयशा माता थी। साढे सात लाख वर्ष तक श्री अनंतनाथजी ने दीक्षा व्रत पाला अन्त मे सम्पूर्ण कर्म क्षय करके चैत्र शुक्ला ४ को मोक्ष पद को प्राप्त हुए।

द्वारावती के राजा सोम की रानी सुदर्शना के सुप्रभ नाम का बलदेव इन्ही के समय हुआ था। इसी राजा की दूसरी रानी सीता के गर्भ से पुरुपोत्तम नामक चौथे वासुदेव का जन्म हुवा, उस समय पृथ्वीपुर का विलास राजा गुणवती रानी से पैदा हुआ मधुक नामक प्रतिवासुदेव राज करता था। पुरुपोत्तम वासुदेव ने मधुक प्रतिवासुदेव को मारकर तीन खण्ड का राज किया। चार सागरोपम का समय जब चौदहवें तीर्थकर को निर्वाण पद प्राप्त किये हो गया तब माघ शुक्ल ३ के दिन रतनपुरी नगरी मे १५

वें तीर्थंकर श्री धर्मनाथजी का जन्म हुवा, भानु राजा पिता और सुव्रता रानी माता थी। अनुमान नौ लाख वर्ष तक संसार में रहे। रतनपुरी के उपवन मे दीक्षा ग्रहण की। माघ कृष्ण १३ को दो वर्ष के आसपास दीक्षा को हुवे ही होगे तो पौष शुक्ल १५ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हो गई। एक लाख वर्ष चारित्र का पालन किया अंत मे कर्म क्षय करके ज्येष्ठ शुक्ल ५ का मोक्ष-पधारे। इन्ही के समय अश्वपुर के राजा शिव के दो रानियो से दो पुत्र पैदा हुए। विजया के गर्भ से सुदर्शन बलदेव और अम्बिका के गर्भ से पुरुषसिह नामक पांचवे वासुदेव हुए। और हरिपुर मे निशुम्भ प्रति वासुदेव हुआ। पुरुषसिंह ने निशुम्भ को मार के तीन खंड का राज किया।

पंद्रहवे तीर्थंकर के पश्चात् और सोलहवे तीर्थंकर के पहले श्रावस्ती नगरी मे राजा समुद्र विजय को भद्रा रानी के गर्भ से माधवा नामक तीसरे चक्रवर्ती का जन्म हुवा। इनके मोक्ष मे जाने के कुछ समय बाद हस्तिनापुर में अश्वसेन राजा सहदेवी रानी के संतकुमार सम्राट् ४ चौथे चक्रवर्ती हुऐ।

पंद्रहवे तीर्थंकर के मोक्ष मे जाने के पौन पल्योपम न्यून तीन सागरोपम के पश्चात् ज्येष्ठ कृष्ण १३ को शांतिनाथजी ने गज-पुर मे विश्वसेन राजा पिता और अचिरादेवी रानी माता के यहां जन्म लिया। आप पांचवे चक्रवर्ती हुए। ७५ हजार वर्ष गृहस्थ मे रहे, फिर एक वर्ष दान देकर नगरी के उपवन मे ज्येष्ठ कृष्णा ४ को दीक्षा ली। अनुमान १ वर्ष के बाद पौष शुक्ल ६ को केवल

ज्ञान हुआ। आप १६ वें तीर्थकर हुए। २५ हजार वर्ष तक दीक्षा पाली। अन्त मे सर्व कर्म क्षय करके ज्येष्ठ कृष्णा १३ को मोक्ष मे गये।

श्री शांतिनाथ जी सोलहवें तीर्थकर के निर्वाणकाल के आधा पल्योपम का समय बीत जाने के पश्चात् गजपुर में सूर राजा और श्री नाम की रानी से वैशाख कृष्ण १४ को सतरहवे तीर्थकर श्री कुंथुनाथजी का जन्म हुवा। आप इकहतर हजार दोसौ पचास वर्ष गृहस्थाश्रम मे रहे। पश्चात् गजपुर के उपवन मे चैत्र कृष्ण ५ को दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के १६ वर्ष बाद चैत्र शुक्ल ३ को केवल ज्ञान हुआ। २३ हजार सात सो पचास वर्ष तक दीक्षा पाली फिर वैशाख कृष्ण १ को मोक्ष प्राप्त किया। आप तीर्थकर पद से पहले ६ ठे चक्रवर्ती थे। भारत वर्ष के सम्पूर्ण छः खंडों का राज किया।

१७ वे तीर्थंकर को निर्वाण पद प्राप्त किये जब एक करोड़ एक हजार वर्ष न्यून पाव पलोपम का समय बीत गया तब अगहन शुक्ल १० को गजपुरी मे राजा सुदर्शन की रानी देवी देवकी से १८ वे तीर्थंकर श्री अरहनाथ जी का जन्म हुआ। आप ६३ हजार वर्ष गृहस्थ मे रहे। सातवे चक्रवर्ती बनकर छः खण्डो का राज किया। पश्चात् अगहन शुक्ल ११ को गजपुर के उपवन मे दीक्षा ली। दीक्षा के ३०० वर्ष पीछे कार्तिक शुक्ला १२ को केवल ज्ञान हुआ। इक्कीस हजार वर्ष तक चारित्र का पालन किया। अगहन शुक्ला १० को मोक्ष पधारे। इनके निर्वाण होने के पश्चात्

और उन्नीसवें तीर्थंकर के जन्म से पहिले कीर्तिवीर्य राजा तारा रानी माता के संभुम नामा चक्रवर्ती हुआ। ६ खण्ड का राज किया, सातवां खंड साधना की लालसा में समुद्र में डूब कर मर गये। सातमी नर्क में जा पहुचे। इस घटना के कुछ ही समय पश्चात् काशी के राजा अग्निसिंह की रानी जयंति से नन्दन नामक सातवे बलदेव, दूसरी रानी शीलवी के गर्भ से दत्त नामक सातवें वासुदेव उत्पन्न हुए और पूर्वजात इनका समकालीन सिंहपुर में प्रह्लाद राजा प्रति वासुदेव राज करता था। दत्त वासुदेव ने प्रलहाद को मार कर ३ खंड का राज किया।

अठारहवे तीर्थंकर के निर्वाण पद पाने के एक करोड़ एक हजार वर्ष पीछे मिथिला नगरी के कुम्भकार राजा की प्रभावती रानी से अगहन शुक्ल ११ को उन्नीसवे तीर्थंकर श्री मल्लीनाथ जी का जन्म हुआ। सौ वर्ष तक गृहस्थ में रहे। मिथिला के उपवन में अगहन शुक्ला ११ को दीक्षा ली। उसी दिन केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। तब से पूरे ५३ हजार ६ सौ वर्ष तक दीक्षा पाली। फाल्गुन शुक्ल १२ को मोक्ष प्राप्त किया।

चौपन लाख वर्ष समय जब उन्नीसवे तीर्थंकर को मोक्ष पधारे बीत गया तब राजग्रही नगरी में सुमित्र राजा के पद्मावती रानी से बीसवे तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी ज्येष्ठ कृष्णा ८ को जन्म। यह साढे बाईस हजार वर्ष गृहस्थाश्रम मे रहे। पश्चात् फाल्गुन शुक्ला १२ को अपनी राजधानी के उपवन में दीक्षा ली। अनुमान ११ महीनो के पश्चात् केवल ज्ञान प्राप्त

किया। साढे सातसौ वर्ष तक दीक्षा पाली। सर्व कर्म क्षय करके ज्येष्ठ कृष्ण ६ को मोक्ष मे पधारे।

इन्हीं के समकालीन ६ नौवे चक्रवर्ती महापद्म हुवे। हस्तिनापुर नगर पद्मोत्तर राजा ज्वाला रानी माता थी। अन्त में दीक्षा धारण कर के मोक्ष मे गये। महापद्म चक्रवर्ती के कुछ ही काल के पश्चात् अयोध्या के राजा दशरथ पिता अपराजिता रानी की कूख से आठवें बलदेव श्री रामचन्द्रजी पैदा हुए। दूसरी रानी सुमित्रा इसका वास्तव मे कैकेयी नाम था परन्तु जब कैकेयी रानी भरत की माता का विवाह राजा दशरथ से स्वयंवर मंडप करके हुआ उस समय दो कैकयी होने के कारण प्रथम का सुमित्रा रख दिया। इसलिए यह सुमित्रा के नाम से प्रसिद्ध हुई। सुमित्रा के अष्टम वासुदेव श्री लक्ष्मणजी हुवे। (इन को नारायण भी कहते है)। तीसरी रानी कैकेयी के भरत राजकुमार हुआ। चौथी सुप्रभा रानी से शत्रुघ्नजी हुवे उस समय इन से पूर्वजात लकापुरी मे राजा रत्नश्रवा पिता और कैकसी माता से पैदा हुवा दशकन्धर राजा प्रतिवासुदेव लंका का क्या तीन खंड का अधिपति था। लक्ष्मण जी रावण को मार और तीन खंड के अधिपति बने।

बीसवे तीर्थकर को मोक्ष मे गये छः लाख वर्ष हुवे ही थे कि श्रावण कृष्णा अष्टमी को मथुरापुरी मे विजय राजा और विप्रा देवी माता के इक्कीसवे तीर्थकर श्री नमिनाथ जी का जन्म हुवा। ६ हजार वर्ष तक गृहस्थ मे रहे। फिर आषाढ़ कृष्ण ६ को मथुरा

नगरी के उपवन मे दीक्षा ग्रहण की। नौ महीने बाद अगहन शुक्ला ११ को केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। एक हजार वर्ष तक चारित्र पाला। पश्चात् वैशाख कृष्ण १० को मोक्ष मे पधारे।

इक्कीसवे श्री नमिनाथ तीर्थकर के ही समय कम्पिल नगर में महा हरी राजा मेरा देवी माता के हरीषेण नामक १० वे चक्रवर्ती हुवे। दीक्षा लेकर यह भी मोक्ष मे गये।

इनके कुछ समय बाद राजग्रही नगरी मे विजय राजा वप्रावती रानी के जयसेन नामक राजकुमार हुआ और आगे चल कर ११ वे चक्रवर्ती जयसेन हुआ। यह भी राज छोड़ दीक्षा लेकर मोक्ष पहुँचे।

इक्कीसवे तीर्थकर के निर्वाण पाने के पांच लाख वर्ष के पश्चात् राजा समुद्र विजय की शीवादेवी रानी से श्रावण शुक्ला ५ को २२ वे तीर्थकर श्री नेमिनाथ जी हुए। आप ३०० वर्ष गृहस्थाश्रम मे रहे। विवाह न करते हुए एक वर्ष दान देकर अपनी राजधानी के उपवन मे श्रावण शुक्ला ६ को दीक्षा ली। ५४ दिन के पश्चात् क्वांर कृष्ण अमावस्या को केवल ज्ञान होगया। सात सौ वर्ष तक दीक्षा पाली। सर्व कर्म क्षय करके, आषाढ़ शुक्ला ८ को मोक्ष पधारे। ग्यारहवें चक्रवर्ती महाराज जयसेन के निर्वाण के हजारो वर्ष बीत जाने के पश्चात् हरीवंश मे यदुनामक राजा हुआ। यदु के शौरी और सुवीर नाम के दो पुत्र हुए। शौरी के पुत्र अंधक विष्णु। अंधक के दश पुत्र हुए। जो शास्त्र मे दशोदशार के नाम से प्रसिद्ध है। इन दशो मे से छोटे एक भाई का नाम वसुदेव

था। वसुदेव की रोहिणी नाम की रानी से नौवे बलदेव बलभद्र जी हुए। और दूसरी देवकी रानी से नौवे वासुदेव श्रीकृष्ण महाराज हुए। दूसरे सुवीर के पुत्र का नाम भोज विष्णु था। उसके उग्रसेन और देवक दो पुत्र थे। उग्रसेन के एक पुत्र कंस, और दूसरी पुत्री राजुलमति नाम की हुई। उधर देवक के देवकी नाम की पुत्री हुई। इसी देवकी का विवाह वसुदेव जी से हुआ था। कृष्ण ने कंस को मार मथुरा पर अधिकार जमाया ही था कि जरासिंध के भय से, समुद्र विजय आदि सब दौड़-भाग कर समुद्र के किनारे आये। वहा द्वारिका नगरी बसाई। दशो दशारों मे वड़े भाई समुद्र विजय थे। कृष्ण महाराज के ताया और यही राजा थे। समुद्र विजय की शिवादेवी रानी से बाइसवे तीर्थकर श्री अरिष्टनेमि जी जन्मे। अरिष्टनेमि भगवान् के पास कृष्ण महाराज के छोटे भाई गजसुकुमाल ने दीक्षा ली और जल्दी ही कर्म काट के मोक्ष मे पधार गये।

जरासिध प्रतिवासुदेव से कृष्ण महाराज का युद्ध हुआ। जरासिंध को मार कर कृष्ण वासुदेव तीन खंड के राजा बने।

अरिष्टनेमि के मोक्ष मे पधारने के कुछ समय ही पीछे ब्रह्म नामक राजा चुलनी रानी माता के ब्रह्मदत्त का जन्म हुआ। समय पाकर ब्रह्मदत्त बारहवे चक्रवर्ती हुवे। और भोगो मे आसक्त बन कर अन्त मृत्यु पाकर सातमी नर्क मे गये। जहां उत्कृष्टी तेतीस सागर की उम्र है।

बाइसवें तीर्थंकर के मोक्ष मे पधार जाने के पौने चौरासी हजार वर्ष के पश्चात् बनारसी नगरी मे अश्वसेन राजा रानी वामादेवी के तेईसवे तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ जी पौप कृष्ण १० को हुए। ३० वर्ष पर्यन्त गृहस्थाश्रम मे रहे। बाद मे पौष कृष्ण एकादशी को बनारसी के पास उपवन मे दीक्षा ली। दीक्षा के चौरासी दिन बाद केवल ज्ञान हुआ चैत्र कृष्ण ४ को और सत्तर वर्ष तक संयम पाला। सब कर्म क्षय करके श्रावण शुक्ला अष्टमी को मोक्ष पधारे। दीक्षा धारण के बाद देवता द्वारा पार्श्व-नाथ भगवान् को उपसर्ग हुआ था।

ईसा से ८०० वर्ष पूर्व का अनुमान लगाया जाता है कि ऐतिहासिक लोग गहरी छानवीन के बाद पार्श्व संवत् तक पहुंचते है।

तेइस २३ वे श्री पार्श्वनाथ भगवान् के मोक्ष प्राप्त करने के अनुमान २५० वर्ष के बाद श्री महावीर स्वामी मोक्ष में पधारे। क्षत्री कुंड नगर मे सिद्धार्थ भूप एवं त्रिशला देवीजी की कुख से महावीर का जन्म हुआ। तीस वर्ष पर्यंत गृहस्थाश्रम में रहे। बाद मे संयम लेकर साढ़े बारह वर्ष तक घोर तपस्या करके कर्म नाश किये। केवल ज्ञान को प्राप्त किया। बहत्तर ७२ वर्ष की आयु भोगकर मोक्षपद को प्राप्त किया। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के रोज आपका जन्म एवं कार्तिक अमावस्या को मोक्षपद प्राप्त हुआ।

चौबीसवें धर्मावतार श्री महावीर स्वामी के मोक्ष प्राप्त करने

के पश्चात् हुवे राजों का वर्णन। श्री महावीर स्वामी के निर्वाण के दूसरे ही दिन अवंती नगरी मे पालक का राज्याभिषेक हुवा। पालक ने ६० वर्ष राज किया। पश्चात् १५० वर्ष नन्दो ने राज किया। १६० वर्ष मौर्यों ने राज किया। ३५ वर्ष पुष्यमित्र ने राज किया। ६० वर्ष बल मित्र भानुमित्र ने राज किया। ४० वर्ष नभसेन ने राज किया। १०० वर्ष गर्धभिल्लोका राज रहा। पश्चात शक राजो का राज हुवा। श्री महावीर स्वामी के निर्वाण हुए ६०५ वर्ष वीतने वाद शक राजा उत्पन्न हुवा।

भरत क्षेत्र के वर्तमान प्रसिद्ध .....१२ चक्रवर्ती।

इस भरत क्षेत्र के छः विभाग है, दक्षिण मध्य भाग को आर्य खण्ड व शेष ५ को म्लेच्छ खण्ड कहते है। काल का परिवर्तन आर्य खण्ड मे ही होता है। म्लेच्छ खण्डो मे दुखमा सुखमा काल की कभी उत्कृष्ट और कभी जघन्य रीति रहती है। जो इन छः खण्डो के स्वामी होते है उनको चक्रवर्ती राजा कहते हैं। चक्रवर्ती के चौदह रत्न होते है। जिस मे सात एकेन्द्रिय रत्न अचेतन होते है। १ सुदर्शन चक्र, २ छत्र, ३ दण्ड, ४ खड्ग, ५ मणि, ६ चर्म, ७ काकिनी, सात पंचेन्द्रिय चेतन रत्न होते है। १ सेनापति, २ गृहपति, ३ शिल्पी, ४ पुरोहित ५ पटरानी, ६ हाथी, ७ अश्व। नौ निधान होते है १ काल, २ महाकाल, ३ नैसर्व, ४ पाण्डूक, ५ पद्म, ६ माणक, ७ पिंगल, ८ शख, ९ सर्वरत्न। जो क्रम से पुस्तक असिमसी साधन, भाजन, धान्य, वस्त्र, आयुध, आभूषण वादित्र वस्त्रो के भण्डार होते है। इन

सब के रक्षक देवता हैं। बतीस हजार देश और बतीस हजार मुकुटबध-राजा इन्हो के आधीन होते है। बतीस हजार देवता आधीन होते है, बतीस हजार रानियां, बतीस हजार दासियां यह वास्तव मे रानियां ही होती हैं। प्रथम बतीस हजार रानियों से इन का दर्जा कुछ मध्यम होता है। इस लिये ६४००० रानियां होती है। बतीस प्रकार के नाटक तीन सौ साठ रस हुए। अठारह श्रेणि प्रश्रेणि आदि राजे, चौरासी लाख अश्व, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख सग्रामी रथ, चौरासी लाख विकट गाड़ियां, विमानादि का समावेश है। छियानवे करोड़ पदाति सेना, बहत्तर हजार राजधानी, छियानवे करोड ग्राम, निन्यानवे हजार द्रोणमुख जैसे वम्बई, कराची आदि आजकल है ऐसे नगर, अड़तालीस हजार पट्टन तिजारती नगर जैसे देहली, अमृतसर की तरह, चौबीस हजार कर्वट सेना स्थान (छावनी), चौबीस हजार मंडल बीस हजार सोन चान्दी रत्न लोहादि की खाने, सोलह हजार खेड़े, चौदह हजार सवाद, छप्पन हजार अन्तरोदक अखंड भरतक्षेत्र का ऐश्वर्य भोगने वाले को चक्रवर्ती कहते है। छः खंडो के राजाओं को दिग्विजय के द्वारा अपने आधीन करते है और न्याय से प्रजा को सुखी करते हुए राज्य करते है। ऐसे १२ चक्रवत्ती २४ तीर्थंकरों के समय में नीचे लिखी रीति से हुए हैं।

(१) भरत—ऋषभदेव जी के पुत्र वे बड़े धर्मात्मा थे। एक समय इनको तीन समाचार एक साथ मिले। ऋषभदेव का

केवल ज्ञानी होना आयुधशाला मे सुदर्शन चक्र का प्रकट होना, अपने पुत्र का जन्म होना। अपने धर्म को श्रेष्ट समझकर पहिले ऋषभदेव के दर्शन किये फिर लौट कर दोनो लौकिक काम किये। भरत ने दिग्विजय करके भरत खण्ड को वश किया, मुख्य सेनापति हस्तिनापुर का राजा जयकुमार था, छोटे भाई बाहुवली ने इनको सम्राट् नही माना, तब इनसे युद्ध ठहरा। मंत्रियो की सम्मति से सेना की व्यर्थ मे जिससे किसी भी प्रकार की क्षति न हो, इस कारण परस्पर तीन प्रकार के युद्ध ठहरे। दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध एवं मल्लयुद्ध तीनो युद्धो मे भरत ने बाहुवली से हारकर क्रोधित हो बाहुवली का कुछ विगाड़ न सका तो भरत बहुत लज्जित हुए। उधर बाहुबली अपने बड़े भाई भरत की राज्य लक्ष्मी की निन्दा कर तुरन्त साधु हो गया और बहुत कठिन तपश्चर्या करने लगे। एक वर्ष तक लगातार ध्यान में खड़े रहने से इनके शरीर पर बेले चढ़ गई। अन्त मे केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष पधार गये।

भरत बड़े न्यायी थे, इनका बड़ा पुत्र अर्ककीर्ति (सूर्यकुमार) जिससे सूर्यवश चला है। काशी के राजा प्रकम्पन ने अपनी पुत्री सुलोचना के सम्बन्ध के लिये स्वयम्बर मण्डप रचा तब सुलोचना ने भरत के सेनापति जयकुमार के गले मे माला डाली। इस पर अर्ककीर्ति ने रुष्ट होकर झगड़ा किया किन्तु चक्रवर्ती भरत ने अपने पुत्र की अन्याय प्रवृत्ति पर बहुत खेद किया और उसका किसी प्रकार का पक्ष न लेकर उचित न्याय किया।

भरत बड़े आत्मज्ञानी व राज्य करते हुए भी वैरागी थे।

एक बार एक धार्मिक वक्ता ने कहा कि भरत महाराज छः खंड जैसे राज्य मे महान् आरम्भ करता है और महा आरम्भ करने वाले की गति नरक होती है। इस बात को भरत जी ने भी सुना उसको समझाने के लिये आपने एक तेल का कटोरा दिया और कहा तू मेरे कटक मे घूम आओ किन्तु इस कटोरे मे से यदि एक बूंद भी गिरी तो तुझे मृत्यु दण्ड मिलेगा। वह कटोरे को ही देखता लौट आया महाराज ने पूछा कि क्या देखा ? उसने कहा कि मै कुछ नही कह सकता क्योकि मेरा ध्यान कटोरे में था। यह सुनकर भरत ने कहा कि इसी तरह मेरा ध्यान आत्मविकाश में रहता है। मैं सब कुछ करते हुए भी अलिप्त रहता हूँ। एक दिन प्रातःकाल स्नान करके एवं वस्त्राभूषण धारण करके महाराज भरत अरिसा भवन मे गये वहां एक उंगली मे से अगूठी गिर गई। विना अ गूठी के उंगली भद्दी लगने लगी। तब आपने विचार किया कि यह सब शोभा शरीर की नहीं किन्तु आभूषणो की है। मिथ्या मोह मे मुझे क्यो मुग्ध होना चाहिये, ऐसा सोचकर आपने अन्य उगलियो से अ गूठियाँ निकालना प्रारम्भ किया इससे हाथ विशेष भद्दा हो गया। फिर आपने सब वस्त्र और आभूपण उतार दिये। इससे आपको ज्ञात हुआ कि सब शोभा वस्त्रो और आभूषणो की है। शरीर तो असार है ऐसा विचार करते करते आप शरीर की अनित्यता का चिन्तवन करने लगे और शुक्ल ध्यान की श्रेणी तक चढ़ गये, उसी समय आप के घनघाती कर्मों का

क्षय हो गया। तथा आप कवल ज्ञानी मुनि वन गये। आपक साथ और वहुत भव्य प्राणियों ने दीक्षा ली और सब ने आत्म कल्याण किया।

(२) सगर—यह अजितनाथ जी के समय में हुए। इक्ष्वाकु वंशी पिता समुद्र विजय माता सुवाला थी, सगर के ६०००० पुत्र थे। एक वार इन पुत्रो ने सगर से कहा कि हमे कोई कठिन काम वताइये, तब सगर ने कैलाश के चारो ओर खाई खोदकर गगा नदी वहाने की आज्ञा दी। वे गये। खाई खोदी तब सगर के पूर्व जन्म के मंत्री मुनिकेतु देव ने अपन वचन अनुसार सगर का वराग उत्पन्न कराने के लिये उन सर्व कुमारों को अचेत करके सगर के पास आकर यह समाचार कहे कि आपके पुत्र सब मर गये। यह सुनकर सगर को वैराग्य हो गया और भगीरथ को राज्य दे आप साधु हो गये। पुत्र जब सचेत हुए और पिता का साधु होना सुना तो यह भी सर्व त्यागी बन गये।

(३) माघव—यह चक्रवर्ती सगर से बहुत काल पीछे श्री धर्मनाथ जी के मोक्ष हो जाने के वाद हुए। इक्ष्वाकुवंशीय राजा सुमित्र और सुभद्रा के पुत्र थे, अयोध्या राजधानी थी, वहुत काल राज्य कर प्रियमित्र पुत्र को राज देकर साधु हो तप कर मोक्ष पधारे।

(४) सनत्कुमार—कुछ काल वीतने के वाद चौथे चक्रवर्ती अयोध्या के इक्ष्वाकु वशीय राजा अनन्त वीर्य और रानी सहदेवी के पुत्र आप बड़े न्यायी सम्राट् थे, तथा बड़े रूपवान् थे। एक दिन आपके

रूप की प्रशंसा इन्द्र के मुख से सुनकर एक देव देखने को आया, और देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। फिर राज सभा मे प्रकट होकर मिलने को गया। उस समय मान के कारण उनकी सुन्दरता मे कमी देखकर मस्तक हिलाया, सम्राट् ने मस्तक हिलाने का कारण पूछा। उत्तर में देव द्वारा अपने रूप की क्षण मात्र मे ही कम हो जाने की बात सुनकर चक्री को संसार की अनित्यता देख कर वैराग्य हो गया, उसी समय पुत्र देवकुमार को राज्य देकर शिव गुप्त मुनि से दीक्षा ले तप करके मोक्ष पधारे। तप के समय एक बार कर्म के उदय से कुष्ठादि भयंकर रोग हो गये। एक देव परीक्षार्थ वैद्य के रूप मे आया और कहा कि औषधि ले। मुनि ने उत्तर दिया कि आत्मा के जो जन्म मरणादि रोग है यदि उन्हे आप दूर कर सकते है तो दूर करे। मै आपकी दी हुई अन्य वस्तुऐ लेकर क्या करूँगा? देव ने मुनि को चारित्र में दृढ़ देखकर उनकी स्तुति की और अपने स्थान को वापिस चला गया।

(५) १६ वे तर्थकर श्री शान्ति नाथ जो। यह एक दिन दर्पण मे अपने दो मुंह देख ससार को अनित्य विचार अपने नारायण पुत्र को राज्य दे साधु हो गये। आठ वर्ष पीछे ही केवली हो अन्त में मोक्ष पधारे।

(६) १७ वे तीर्थकर श्री कुंथुनाथ जी एक दिन बन मे क्रीड़ा करने गये थे। लौटते समय एक साधु को देखकर वैरागी हो गये। १६ वर्ष तक तप करके केवल ज्ञानी होकर मोक्ष पधारे।

(७) १८ वें तीर्थंकर श्री अरहनाथ जी राज्यावस्था में एक दिन शरद् ऋतु मे मेघो का आकाश मे नष्ट होना देख आप वैरागी हो गये। १६ वर्ष तप कर अरिहन्त होकर उपदेश दे अन्त मे मोक्ष पधारे।

(८) संभौम—श्री अरहनाथ जी तीर्थंकर के मोक्ष के वाद में हुए। अयोध्या के इक्ष्वाकु वंशीय राजा सहस्रबाहु और रानी चित्रमती के पुत्र थे। आप का जन्म एक वन मे हुआ था। इन के पिता सहस्रबाहु के समय मे इन के वडे भाई कृतवीर्य ने एक बार किसी कारण से राजा जमदग्नि को मार डाला। तब जमदग्नि के पुत्रपरशुराम और श्वेतराम ने यह बात जान बहुत क्रोध किया। और सहस्रबाहु तथा कृतवीर्य को मार डाला तब सहस्रबाहु के बड़े भाई शांडिल्य ने गर्भवती रानी चित्रमती को वन मे रखा यहां संभौम उत्पन्न हुए। वह १६ वे वर्ष मे चक्रवर्ती हुए। एक दिन परशुराम को निमित्त ज्ञानी से मालूम हुआ कि मेरा मरण जिससे होगा वह पैदा हो गया है। निमित्तज्ञानी ने उस की परीक्षा भी बताई कि जिस के आगे मरे हुए राजाओ के दान्त भोजन के लिये रखे जावे और वह सुगन्धित चावल सम हो जावे वही शत्रु है। इसलिये परशुराम ने अनेक राजाओं को संभौम के साथ बुलाया। संभौम के सामने दांत चावल हो गये, संभौम को ही शत्रु समझ परशुराम ने संभौम को पकड़ा परन्तु उसी समय संभौम को चक्र रत्न की प्राप्ति हुई। इस चक्र से ही युद्ध कर संभौम ने परशुराम को मार डाला। परशुराम सातवीं

पृथ्वी के पांथड़े मे जाकर पैदा हुवा। दिग्विजय कर संभौम ने बहुत काल राज्य किया यह बहुत ही विपयी लंपटी था। एक वार इस को एक शत्रु देव ने व्यापारी के रूप में बड़े स्वादिष्ट अपूर्व फल खाने को दिये। जब वह फल न रहे तब चक्री ने और मागे। व्यापारी ने कहा कि यह एक द्वीप मे मिल सकेंगे। आप, जहाज पर मेरे साथ चलिये। वह लोलुपी चल दिया। मार्ग मे उस देव ने जहाज को डुबो दिया और चक्रवर्ती खोटे ध्यान से मर कर सातवीं नरक मे गया।

(६) नव वे चक्री २० वे तीर्थंकर मुनि सुव्रत स्वामी के समय मे काशी नगरी के स्वामी इक्ष्वाकु वंशी पद्मोत्तर और ज्वला रानी के सुपुत्र महापद्म थे। बादलो को नष्ट होते देख वैरागी हो गये और साधु होकर मोक्ष पधारे।

(१०) दशवे चक्री श्री हरिसेण भगवान् नेमिनाथ के काल मे भोगपुर के राजा इक्ष्वाकु वंशी पद्म और मेरादेवी के सुपुत्र थे। एक दिन आकाश मे चंद्र ग्रहण देख आप साधु हो गये तथा अन्त मे मोक्ष पधारे।

(११) ग्यारह वे चक्रवर्ती जयसेन श्री नेमिनाथ भगवान् के पीछे और अरिष्ट नेमि के पहिले कौशाम्बी नगर के इक्ष्वाकु वंशी राजा विजय और रानी वप्रावती के पुत्र थे। एक दिन आकाश मे उल्कापात देखकर वैराग्य हो साधु हो गये। तप करते हुए अन्त मे श्री सम्मेदशिखर पर पहुंचे। वहां चारण नाम की चोटी पर समाधि मरण कर सिद्धि को प्राप्त हुए।

(१२) श्री अरिष्ट नेमि जी के पीछे और श्री पार्श्वनाथ जी के पहले अन्तर मे चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त हुआ। यह ब्रह्म राजा व रानी चूल देवी का पुत्र था। यह विषय भोगों में फंसा रहा। अन्त मे मर कर सातवे नरक में गया।

कर्मावतार अर्धचक्री नारायण वासुदेव पद की प्राप्ति होने पर इन्हे सात रत्न प्राप्त होते है। वे निम्न है।

१ सुदर्शन चक्र
२ अमोघ शंख
३ कौमुदी गदा
४ पुष्प माला
५ धनुष्य अमोघ बाण
६ कौस्तुभमणि
७ महारथ

ये फलवान और महा सुन्दर होते है। इनकी ऋद्धि व सिद्धि चक्रवर्ती से आधी होती है।

इति शम्

मुनिवर श्री शुक्लचन्द्र जी महानुभाव
प्रशस्तिसूक्तम्

श्रीमान्मनस्वी मुनिः शुक्लचन्द्रः
श्वेताम्बरः स्थानकवासिनां यः ।
अग्रेसरः श्रीजिनपादसेवी
विराजते स्वीयगुणैरुदारैः ॥ १ ॥

दयालुमात्मानमसौ बिभर्त्ति
गजेषु कीटेषु च तुल्यवृत्तिम् ।
गणं गुणैराद्रियते बुधानां
विराजिपार्श्वो निकरैः कवीनाम् ॥ २ ॥

स पक्षपातोज्झितबुद्धिशोभी
शत्रौ च मित्रे च समानभावः ।
सदोपकार कुरुते जनानां
जिनाङ्घ्रिसेवी शरणागतानाम् ॥३॥

२ ५ ६
भुजाधिके तत्वमिते ग्रहाप्त-
१
चन्द्राङ्किते विक्रमवत्सरे सः ।
स्वजन्मना भूषितवान्द्विजाना
पञ्चापदेशे शुचिमन्ववायम् ॥ ४ ॥

२ ७ ६ १
नेत्रर्षिनन्देश्वरसंख्यवर्षे
आषाढशुक्लस्य च पूर्णिमायाम् ।
जग्राह दीक्षामयमार्हतीं स
प्रसन्नचेताः जिनमार्गगामी ॥ ५ ॥

विलोक्य चेमं जिनपादपद्मयो-
र्नतं मुनीन्द्रं मुनिवेषधारिणम् ।
तुतोष वाढं विशदाशया सती
समग्रदेशे मुदिता जनावली ॥ ६ ॥

यद्यप्यसौ पूज्यतमो विचारतो-
बभूव लोके स पुनरेष देहिनाम् ।
गृहीतदीक्षः पुनरेष सूर्य्यवद्
भृशं दिदीपे जिनसाधुलक्षणैः ॥ ७ ॥

सोऽयं मुनीन्द्रो मुनिशुक्लचन्द्रो-
रामायणं जैनमतानुसारि ।
लिलेख भाषामधुरे निबन्धे
भव्याशयं काव्यगुणानुयायि ॥ ८ ॥

इदं निगाद्यं जनसंकुले पथि
प्रपठ्यतां श्रावकमण्डलेऽपि तत् ।
कल्याणदं मङ्गलदं मदापहं
जनस्य सन्मार्गकरं परं वरम् ॥ ६ ॥

द्विजेन तेनागमवेदिनोदिता
विवेकविज्ञानसुधामयी कथा ।
व्यधायि सूक्तं च जयेन तन्मुने-
र्यदस्य मूल जिनशास्त्रवल्लरी ॥ १० ॥

इति श्री दिल्ली हीरालाल जैन हाईस्कूल भूतपूर्व-
संस्कृतप्रधानाध्यापकेन साहित्याचार्य्य-
पण्डित 'जयराम' शास्त्रिणा विरचितं सूक्तम् ।

॥ समाप्तम् ॥

मंगल-प्रार्थना

(तर्ज—बालम आय बसो मोरे मन में—)

प्रथम नमो देव अरिहन्ता ।—स्थायी

सुरनर मुनि जन ध्यान धरत है ।
प्रेमी जन नित नाम रटत है ॥
कल क्लेश छिन माहि कटत है ।
ऐसो नाम भगवन्ता ॥ १ ॥

संकट हारी मंगल कारी ।
सर्वाधार सर्व हित कारी ॥
किम वरणूं मै महिमा तिहारी ।
गाय थके श्रुति सन्ता ॥ २ ॥

दीन दयाल दया के सागर ।
त्रयी गुण धारी जगत उजागर ॥
कर ही कृपा प्रभु निज भगतन पर ।
सिद्ध रूप गुण वन्ता ॥ ३ ॥

"शुक्ल" प्रभु हम शरणागत है ।
विद्या बुद्धि वर मांगत है ॥
दीनों की बस आप ही पत है ।
केवल ज्ञान अनन्ता ॥ ४ ॥

—————o❀o—————

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

॥ ॐ असिआउसाय नमः ॥ ॥ परमेष्ठिभ्यो नमः ॥

॥ अथ रामायणम् ॥

शिष्य-प्रश्न

दोहा

जिन वाणी नित दाहिने, अरिहन्त सिद्ध जगदीश।
परमेष्ठी रक्षा करे, त्रिपद धार मुनीश ॥ १ ॥
श्री जिनवाणी शारदा, नमूं प्रथम हिय ध्याय।
मनो कामना सिद्ध हो, विघ्न समूह नस जाय ॥ २ ॥

विघ्न समूह नस जाय, ध्यान धरते ही जगदम्बा का।
केवल है आधार श्री, त्रिशला दे सुत नन्दा का ॥
स्वपुरुषार्थ कहा शास्त्र, छेदना कर्म फन्दा का।
सम्यक् ज्ञान निमित्त, राह दर्शक होता अन्धा का ॥

दौड़

गुरु चरणन सिर नाके, सिद्ध ईश्वर को ध्याके।
बात कुछ कहूँ पुरानी, क्या गौरव था भारत का
अब कथा सुनो सुखदानी ॥

दोहा

प्रथम शिष्य प्रभु वीर के, इन्द्र भूति शुभ नाम।
पाठी चौदह पूर्व के, आत्म गुणो के धाम ॥

प्रसिद्ध थे गोतम गोत्र से, श्रुत ज्ञान मे ऊंचा आसन्न था।
हितकारी प्राणी मात्र को, श्री महावीर का शासन्न था ॥
थे सर्वज्ञ ब्रह्मज्ञानी, और तीन काल के ज्ञाता थे।
सिद्धार्थ भूप के राजकुवर, नन्दी वर्धन के भ्राता थे ॥

विशेष ज्ञान के लिये पढ़ो, तुम इनके जीवन चरित्र को।
शान्त वीर रस धरताके, देखो शुद्ध ज्ञान पवित्र को ॥
कुछ प्रश्न पूछने के हेतु, एक रोज श्री गौतम स्वामी।
नमस्कार कर यो बोले, जहॉ बैठे थे अन्तरयामी ॥

दोहा

भगवन्! इस ससार में, कौन है पद प्रधान।
किस पद से निश्चय मिटे, आवागमन तमाम ॥

अवतार कौन कहलाते है, और क्या क्रम इनके होने का।
क्या सभी परस्पर एक रंग, या फरक है सोने सोने का ॥
वर्तमान मे कौन कौन है, कर्म मैल धोने वाले।
थे भूतकाल मे कौन भविष्यत् मे, कौन कौन होने वाले ॥
कितने कितने अन्तर से, इस काल के सब अवतार हुए।
कितने है भवधारी इनमे, कितने भवसागर पार हुए ॥
और काल का भी कुछ भाग पृथक करके स्वामी दर्शावेंगे।
मम इच्छा पूरण करने को, कृपया अमृत वर्षावेगे ॥

दोहा

नम्र निवेदन शिष्य का, सुन करके भगवान।
कृपासिन्धु फिर इस तरह, करने लगे वखान ॥
तीर्थकर पद को कहा, सब ही ने प्रधान।
पाकर यहॉ विशेषता, पहुँचे पद निर्वाण ॥

अब सुनो एकाग्र चित्त करके, कुछ काल विभाग बताते है।
जिस जिस क्रमसे जिस जिस गुण से, जैसे अवतार कहाते है॥
दश क्रोड़ाक्रोड़ सागर का, अब काल यह अवसर्पणि है।
उत सर्पणि दस का बीत गया, आगे भी उतसर्पणि है॥

दोहा

प्रतिसर्पणि मे हुए, होगे है अवतार।
त्रिषष्ठी प्रतिकाल मे समझो गणितानुसार॥

धर्मा अवतार हुए चौबीस, अब है आगे को होवेगे।
सब तारन तरण जहाज आगामी कर्ममैल को धोवेगे॥
बारा भोगावतार हुये, इसमे आगे होगे बारा।
निग्रन्थ बने सो मोक्ष लहे नहीं बास अधोगति मंझारा॥

दोहा

कर्मावितार होते सभी सम्मुख बचे जो शेष।
वरणन करते है सभी, जो जो फरक विशेष॥

उक्त काल के हिस्सा मे. नौ नौ बलदेव कहाते है।
यह उत्तम प्राणी त्यागशील से, स्वर्ग अपवर्ग पाते है॥
अनुज भ्रात इनके ही क्रम से, वासुदेव कहलाते है।
अपर नाम नारायण जो, दुनियां से नहीं दहलाते हैं॥
सग्राम मे इनसे बढ़ करके, दुनियां में नहीं कोई शूरा है।
क्योकि इनका पिछला बांधा, होता नहीं पुण्य अधूरा है॥
पूर्व पुण्य शुभ भोग यहाॅ, यहाॅ का आगे जा पाते है।
चलि के द्वारे के अतिरिक्त, ना और कहीं पर जाते है॥
इन अष्टादश के पूर्वजात, नौ प्रति नारायण होते है।
प्रति वासुदेव, कह दो चाहे, अवसान मे सर्वस्व खोते है॥

वासुदेव के हाथो से ही, क्रम से इनका मरना है।
बलके द्वारे बिना इन्हें भी, और नही कहीं शरणा है॥

दोहा

इन नौ नौ के ही समय, नौ नौ नारद जान।
भूमण्डल के भूपति, करते सब सम्मान॥

अद्वितीय कलह प्रिय होते, पर होते है शुद्ध ब्रह्मचारी।
इनसे जो कोई प्रतिकूल चले, उनको होते महाभयकारी॥
विग्रह करके उपशान्त बनाना, वामें करका खेल सभी।
भ्रात भले जामात बुरे के बद से भला न करें कभी॥
घर घर क्या सब रणवासो तक. ना रोक इन्हे कोई होती है।
और जिसने कुछ विपरीत किया. तो उसकी किस्मत सोती है॥
अन्त्यम् होता है स्वर्ग गमन, ब्रह्मचर्य गुण के कारण से।
और वासुदेव संगप्रेम इन्हो का, होता असाधारण से॥

दोहा

जिसने पूर्व जन्म में, किया धर्म हितकार।
रूप ऋद्धि उनको यहां, मिलती अपरम्पार॥

अतुल रूप धारी चौबीस ही, कामदेव अवतार हुवे।
सब कामदेव को जीत जीत, बहुते भव सिन्धु पार हुवे॥
नर नारी क्या शुभ रूप देख, सुर इन्द्राणी मुर्झाती है।
किन्तु विषयां में खुचे नहीं, चाहे सुरललना तक चाहती है॥

दोहा

एकादशरुद्र हुवे महाक्रूर अवतार।
जाते आप अधोगति फैला कर व्यभिचार॥

यह तप जप से हो भ्रष्ट सभी, खोटे कर्मों में लगते हैं।
फिर अशुभ कर्म भोगन कारण, जाकुम्भिपाक में गलते हैं॥

शुभ पुण्य रूप नरतन पाकर, सब क्रूर कर्म में चलते हैं।
अनमोल समय चिन्तामणि तन, खोकर अपने कर मलते हैं॥

दोहा

धर्म ध्यान शुभ शुक्ल दो प्राणी को सुखदाय।
नाम स्थानादिक सभी देखो यन्त्र मांय॥

२४ तीर्थंकर देवों का नाम और लक्षण

१	श्री ऋषभदेवजी	बैल का
२	,, अजितनाथजी	हस्ती का
३	,, संभवनाथजी	अश्व का
४	,, अभिनन्दनजी	कपि का
५	,, सुमतिनाथजी	चक्रवाक का
६	,, पद्मप्रभुजी	कमल का
७	,, सुपार्श्वनाथजी	साथिये का
८	,, चन्द्रप्रभुजी	चन्द्रमा का
९	,, सुविधिनाथजी	नाकु का
१०	,, शीतलनाथजी	कल्पवृक्ष का
११	,, श्रेयांसनाथजी	गैंडे का
१२	,, वासुपुज्यजी	भैंसे का
१३	,, विमलनाथजी	वराह का
१४	,, अनन्तनाथजी	सेही का
१५	,, धर्मनाथजी	वज्र दण्ड का
१६	,, शान्तिनाथजी	हिरण का
१७	,, कुन्थुनाथजी	अज का

दोहा

कथन आपका है प्रभु, प्रश्न व्याकरण मांय।
सीता कारण क्षय हुवा, महान जन समुदाय॥
अष्टम वासुदेव लखन श्री, रामचन्द्र और रावण का।
हनुमान और सुग्रीव बाध सीता का हाल चुरावन का॥

१८	,, अरहनाथजी	मत्स का
१९	,, मल्लिनाथजी	कलश का
२०	,, मुनिसुव्रतजी	कछुए का
२१	,, नेमिनाथजी	कमल का
२२	,, अरिष्टनेमीजी	शंख का
२३	,, पार्श्वनाथजी	सर्प का
२४	,, महावीर स्वामीजी	सिंह का

द्वादश भोगावतार चक्रवर्तियों के नाम

१	भरत चक्री	७	अरहनाथ चक्री
२	सगर चक्री	८	सम्भूम चक्री
३	माघव चक्री	९	महापद्म चक्री
४	सनत कुमार चक्री	१०	हरिषेण चक्री
५	शान्तिनाथ (तीर्थंकर) चक्री	११	जयनाम चक्री
६	कुन्थुनाथ चक्री	१२	ब्रह्मदत्त चक्री

कर्मावतार नौ वासुदेव नारायण

१	त्रिपिष्ट	६	पुण्डरीक
२	द्विपिष्ट	७	दत्त
३	स्वयम्भू	८	लक्ष्मण
४	पुरुषोत्तम	९	कृष्ण महाराज
५	पुरुषसिंह		

स्वामिन है इच्छा सुनने की, वह भी कृपा हम पर होगी ।
कौन कौन गये शुभ गति मे, गति को को हुए विषम भोगी ॥

कर्मावतार नौ प्रति वासुदेव प्रति नारायण

१ अश्वग्रीव
२ तारक
३ मेरक
४ मधुकेटक
५ निशुम्भ
६ बल
७ प्रह्लाद
८ रावण
९ जरासिन्ध

नव बलदेव

१ अचल
२ विजय
३ भद्र
४ सुपुत्र
५ सुदर्शन
६ आनन्द
७ नन्दन
८ पद्म (राम)
९ बलभद्र

नव नारद

१ भीम
२ महाभीम
३ रुद्र
४ महारुद्र
५ काल
६ महाकाल
७ दुर्मुख
८ नर्क मुख
९ अधोमुख

एकादश रुद्र

१ भीमबली
२ जीत शत्रु
३ रुद्र
४ विश्वनाथ
५ सुप्रतिष्ट
६ अन्तल
७ पुण्डरीक
८ अजित धर
९ जितनामी
१० पीठ
११ सात्यकि

भाइयो सें कैसा प्रेम और, मित्रो मे कैसी मित्रता थी।
पुत्रों में कैसा विनय और, चरित्र में क्या विचित्रता थी॥

चौबीस काम देवावतार

१ बाहुबलि	१३ कुन्थुनाथ
२ अमिततेज	१४ विजयराज
३ श्रीधर	१५ श्रीचन्द्र
४ दशभद्र	१६ राजा नल
५ प्रसेनजीत	१७ हनुमानजी
६ चन्द्र वर्ण	१८ बल राजा
७ अग्नि मुक्ति	१९ वसुदेव
८ सनत् कुमार (चक्री)	२० प्रद्यु म्न
९ वत्सराज	२१ नाग कुमार
१० कनक प्रभ	२२ श्री पालनृप
११ सेधवर्ण	२३ जम्बू स्वामी
१२ शान्तिनाथ (१६ जिन)	२४ सुदर्शन

चतुर्दश कुलकर (मनु)

१ प्रतिश्रुति	८ चक्षुष्मान
२ सम्मति	९ यशस्त्री
३ क्षेमंकर	१० अभिचन्द्र
४ क्षेमन्धर	१ गंद्राभ
५ सीमंकर	१२ मरुदेव
६ सीमन्धर	१३ प्रसेनजीत
७ विसलवाहन	१४ नाभिराजा

द्वादश प्रसिद्ध पुरुष हुए

१ नाभिराजा	७ रावण
२ श्रेयांस	८ कृष्णजी

क्या प्रेम था सासु बधुका, और पतिव्रता कैसी थी नारी ।
सत्यपथ पर कैसे मरते थे, कैसे थे दृढ़ धर्म धारी ॥

३	बाहुबली	९	महादेव
४	रामचन्द्र	१०	भीम
५	हनुमान	११	श्री पार्श्वनाथ
६	सीता	१२	भरतेश्वर

भूतकाल के तीर्थंकरो के नाम

१	श्री निर्वाणजी	१३	,, शिव गणजी
२	,, सागरजी	१४	,, उत्साहजी
३	,, महासिन्धुजी	१५	,, सानेश्वरजी
४	,, विमल प्रभुजी	१६	,, परमेश्वरजी
५	,, श्रीधरजी	१७	,, विमलेश्वरजी
६	,, दत्तजी	१८	,, यशोधरजी
७	,, अमल प्रभुजी	१९	,, कृष्णमतिजी
८	,, उद्धारजी	२०	,, ज्ञानमतिजी
९	,, अंगीरजी	२१	,, शुद्धमतिजी
१०	,, सनमतिजी	२२	,, भद्रजी
११	,, सिन्धुनाथजी	२३	,, अतिकान्तजी
१२	,, कुसुमांजलीजी	२४	,, शान्त स्वामीजी

भविष्यकाल के चौबीस अवतारों के नाम

तीर्थङ्करो के नाम		जिन्होने तीर्थङ्कर गोत्र उपार्जन किया	
१	श्री महापद्मजी	१	श्रेणिक राजा
२	,, सूर्यदेवजी	२	सुपार्श्वजी
३	,, सुपार्श्व जी	३	उदय जी
४	,, स्वयंप्रभजी	४	पोटिल अनगारजी

दोहा

अष्टम त्रक अवतारों का जो जो विवरण खास।
क्रम क्रम से होगा सभी, गति कर्म और वास ॥

भारत का गौरव दर्शाने को, यह भी एक महा चरित्र है।
कर्त्तव्य जिसे कहती दुनियां, इसमे भी महा पवित्र है ॥

५	,, सर्वानुभूति	५	दृढायु
६	,, देवश्रुत	६	कार्तिकसेठ
७	,, उदय	७	शंख श्रावक
८	,, पेढालपुत्र	८	आनंद
९	,, पोटिला	९	सुनंद
१०	,, शतकीर्ति	१०	सत्तक
११	,, मुनिसुव्रत	११	देवकी
१२	,, सत्यभाववित	१२	सत्याकी
१३	,, निषकषाय	१३	कृष्णवासुदेव
१४	,, निष्पलाक	१४	बलभद्र
१५	,, निर्मम	१५	रोहिणी
१६	,, चित्रगुप्ति	१६	सुलसा
१७	,, समाधि	१७	रेवती
१८	,, सम्बर	१८	सथाल
१९	,, यशोधर	१९	भयाल
२०	,, अर्नधिक	२०	द्विपायन
२१	,, विजय (माल्ली)	२१	नारद
२२	,, विमल	२२	अम्बड
२३	,, देवोपपात्त	२३	दासमृत-अमरजीव
२४	,, अनन्तविजय	२४	स्वातिबुद्ध

शिक्षाप्रद है इतिहास सभी, हर प्राणी को नरनारी क्या ।
यदि चातक को ना बुन्द मिले, क्या करे विचारा वारिवाह ॥

दोहा

आप्त के उपदेश मे, दोष नही लवलेष ।
आगे मति श्रुति ज्ञानि का, होगा कथन विशेष ॥

ग्यारह लाख छियासी सहस्र और साढ़े सौ सात ।
वर्ष पूर्व थे विचरते, मुनि सुव्रत जगनाथ ॥
साढ़े बाइस सहस्र वर्ष, बीते थे गृहस्थाश्रम मे ।
फिर साढ़े सात हजार वर्ष, भोगे थे सन्यासाश्रम मे ॥
निर्वाण बाद इस भारत मे था, विद्यमान इनका शासन ।
सत्य भूति कुल भूषण आदि, मुनियो का था ऊंचा आसन ॥

दोहा

पंच परमेष्ठी नमन से, पड़े अरि के त्रास ।
बदला ले अरु सुख मिले, फल निर्वाण निवास ॥

गाना नं० १

शोरो गुल को बन्द करके, लो मजा अब इस कहानी का ।
नेकों की नेक नामी और बदो की भी नादानी का ॥ स्थायी

थे भाई राम और लक्ष्मण, प्रेम दोनो प्राणी का ।
जमाना गौर कर देखा, मिला नहीं कोई शानी का ॥
पिता के ऋण को तारा था, जो था कैकयी महारानी का ।
आप बनवास को धाये, तजा सुख राजधानी का ॥
पर कारण ही तन मन धन, से था प्रयोग वाणी का ।
सार यह ही समझ रक्खा था, अपनी जिंदगानी का ॥

चौपाई

जम्बू द्वीप छोटा सब मांही। भरत क्षेत्र स्थानक सुखदायी।
चौथा आरा लम्बी आयु। उसका किंचित हाल सुनाऊं॥

दोहा

आप्त प्रणीत शास्त्रो मे, गिनती का शुम्मार।
सख्या पल सागर, सभी लेवो गुरू से धार॥

बीस क्रोड़ा क्रोड़ सागर का, शुभ काल चक्र एक होता है।
जिसके आधे छः हिस्सो मे, यह समय नाम शुभ चौथा है॥
बैतालीस सहस्र कम एक क्रोड़ा क्रोड़ का यह आरा होता है।
हो सर्वज्ञ जीव करनी कर, कर्म मैल को धोता है॥

दौड़

बड़ा होता सुखदाई, नही किसी को दुखदाई।
भेद इतना होता है वैसा ही फल मिले जीव को॥
जैसा कोई बोता है॥

दोहा

यथा काल के क्रम से होते है अवतार।
त्रिषष्ठि के पुरुष सब, पाते भव दधि पार॥

तीर्थकर चौबीस चक्रवर्ती, बारा ही पहचानो।
नौ बलदेव नौ वासुदेव, नौ नौ प्रति नारद जानो॥
लब्धि धारक मनपर्यव ज्ञानी, और केवल ज्ञानी मानो।
विद्याधर सुविशाल शूरमा, बहत्र कला सुविधानो॥

दौड़

चौबीस धर्म देव हैं, बाकी कर्म देव हैं।
नहीं कुछ पुण्य मे खामी, आठो कर्म संहार सभी॥
होते हैं मोक्ष के गामी॥

चौपाई

मुनि सुव्रत जिन बीसवे स्वामी, लोका लोक के अतरयामी ।
नमस्कार कर कलम चलाई, निर्विघ्न ग्रन्थ होवे सुखदायी ॥
अष्टम वासुदेव बलदेव, दिन दिन वढ़ता अधिक स्नेह ।

दोहा

पुरी अयोध्या मे हुए, दशरथ भूप उदार ।
सूर्य वंश मे आ लिया, राम लखन अवतार ॥

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता, रावण का हाल बताना है ।
थे योद्धा वलवान बड़े, शक्ति का नही ठिकाना है ॥
वानर वंशी सुग्रीवादिक, का भी सब हाल सुनाना है ।
थे आधीन सब रावण के, पर सत्य पक्ष को जाना है ॥

दौड़

तीन खंड के मांही, फैली हुई थी प्रभुताई ।
अन्त क्या रहा हाथ मे, अच्छे बुरे जो किये कर्म ॥
वो ही ले गये साथ मे ॥

दोहा

अष्टम त्रक का हाल अब, सुनो लगाकर कान ।
मुनि सुव्रत अरिहन्त का, शासन था विद्यमान ॥

बीसवे तीर्थंकर के बाद । पैदा का हाल इन्हो का है ।
आदि अन्त तक जो चरित्र । बतलाना सभी जिन्हो का है ।
घबरावे नहीं आपत्ति से । हो नाम प्रसिद्ध उन्हो का है ।
पर कारण सहे कष्ट मिला नहीं सुख कोई स्वल्प दिनो का है ।

दौड़

सुनो जो मन चित लाके, ध्यान एकाग्र जमाके।
यदि होवे चित खिलारी। तो सुनने की अभिलाष मत
करो सुनो नर नारी ॥

चौपाई

सच्चे मन से धारे सोई, शिक्षा मिले और सम्पति होई।
पावन महा नाम अभिराम, सिद्ध हुए सुख आठो याम ॥

दोहा

जो शूरा कर्त्तव्य मे वही धर्म मे जान।
पाकर यहॉ विशेषता, अन्त गये निर्वाण ॥

लक्ष्मण रावण जन्मान्तर मे, तीर्थंकर पद पावेंगे।
अष्टकर्म दल को क्षय करके, मोक्ष धाम मे जावेंगे ॥
अभी देर तक कर्म बन्ध, फल बल द्वारे भुगतावेंगे।
फिर अनुक्रम से मनुष्य जन्म, मे शुक्ल ध्यान ध्यावेंगे ॥

दौड़

बारवें स्वर्ग मंझारी बैठी है जनक दुलारी।
हुकम सब के उपर है, सीतेन्द्र हुवा नाम करी ॥
पूर्व करनी दुष्कर है ॥

दोहा

राम कथा अभिराम है, तजो निद्रा घोर।
जो जो कुछ बीतक हुआ, सुनो सभी कर गौर ॥

सुनो सभी कर गौर, यहां वृतान्त सभी है बतलाना।
अद्भुत रंग दमकता था, इतिहास सुनहरी है माना ॥

शूरवीर बांके दुर्दन्ते, योद्धाओं का वाना है।
इस को यहाँ पर करूं समाप्त आगे हाल सुनाना है॥

दौड़

विपत्ति जो आई है, दृढ वन सभी सही है।
सुन सुन कर होवोगे गुम, आदि अन्त पर्यन्त।
सभी धर कर के ध्यान सुनो तुम॥

चौपाई

भरतक्षेत्र मे देश पुरलंका, स्वर्ण मयी है कोट दुर्वक्का॥
अन्य नाम एक राक्षस द्वीप, अति अनुपम लक समीप॥
वर्तमान थे अजितजिनेश, "घन वाहन" हुए आदि नरेश।

दोहा

राक्षस सुत को राजदे, अजित स्वामी पास।
संयम ले करणी करी, पहुँचे मोक्ष निवास॥

पहुँचे मोक्ष निवास जिन्होसे, दुख ने किया किनारा है।
तप जप दुष्कर करनी कर, किया आत्म ज्ञान उजारा है॥
मानिन्द मिश्री मक्खी के, जिन दोनो लोक सुधारा है॥
अवसर प्राप्त देख राक्षस, सुत ने सयंम धारा है॥

दौड़

देव राक्षस अधिकारी, आप गये मोक्ष सिधारी।
असंख्य हुवे हैं राजा, दशवें जिनवर समय
कीर्ति धवल नरेन्द्र ताजा॥

—०%०—

❀ बालि-वंश ❀

दोहा

उसी समय उस काल में. मे "धामिदापुर" नाम ।
नगर अति रमणीक था, मानो है स्वधाम ॥

भूप "अतिन्द्र" विद्याधर, श्रीमती राणी अति सुन्दर ।
"श्री कंठ" पुत्र सुखदाई, "गुण माला" एक सुता कहाई ॥

दोहा

रत्नपुरी नगरी भली, "पुष्पोत्तर" तहां राय ।
पुष्पोत्तर सुत के लिये, गुणमाला की चाह ॥

गुणमाला की चाह, जिन्होने मांगी थी खगराजा से ।
बने परस्पर प्रेम हमारा, तेरा इस शुभ नाता से ॥
समझाया नृप ने अपनी, अति बुद्धि और वाचाला से ।
सन्तोष जनक नही मिला, उत्तर कोई अतिन्द्र भूपाला से ॥

दौड़

समझ उसको नही आई, लंक पति को व्याही ।
मूल दुःख की यह दाता, "पुष्पोत्तर" खेचर को
सुनकर दिल मे अमर्ष आता ॥

दोहा

पुष्पोत्तर की पुत्री, "पद्मावती" तसु नाम ।
चली सैर करने लिये, हुई जिस समय श्याम ॥

अपनी मस्तानी चाली से, भानु अस्ताचल जाता था ।
उदयाचल से चन्द्रमा भी, शुभ कदम बढाये आता था ॥
इस ओर मध्य भूमण्डल पर, चेरी जन से परिवारि हुई ।

पद्मा मस्तानी जाती थी, जौहर गौहर से भरी हुई ॥
मुख पर लाली थी सह स्वभाव, कुछ सूर्य ने चौचन्द करी।
कुछ शशी स्पर्धा के मारेने, अपनी किरण बुलन्द करी ॥
पक्षी गण गायन करते थे, फूलों ने हंसना शुरू किया।
यह अवसर देख हवा ने भी, अपना बहना तनु किया ॥
पद्मा को स्पर्श करने को, तरुवर भी टान झुकाते थे।
वह पत्र फूल स्वागत करने को, अपना आप मिटाते थे ॥
एक दूसरे से पहले, बस मार्ग में बिछ जाते थे।
यह सोच अंगना मैला हो, धूली समूह छिप जाते थे ॥
मोर नृत्य कर कूक शब्द से, मीठा वचन सुनाते थे।
जिसने देखा यह पुण्य तनु, सब शोक समूह मिट जाते हैं ॥
चाली गति हंस निराली सम, गिनगिदकर कदम उठातीथी।
वह चिन्ह कुदरती तनपर थे सुर ललना भी मुर्झाती थी ॥

दोहा

इसी मार्ग आरहा, था सन्मुख श्री कण्ठ।
ठहर बाग तटपर जरा, लगा लेन कुछ "ठण्ड" ॥

पुण्य रूप वह पद्मा का मुख, श्री कठने जब देखा।
कुछ सहसा झलक दिखाकर के जा धसी बागमें वह रेखा ॥
यहाँ मोह कर्म के उदय भाव से, पराधीन हुआ चोला है।
फिर मन ही मन मे श्री कण्ठ, अपने मुख से यो बोला है ॥

गाना नं० २

कहाँ गई वह कामिनी, दिल देख मतवाला हुआ।
मोहिनी मूर्त वदन, सांचे मे था ढाला हुवा ॥
प्यासा इसी के दर्शका, सूर्य भी अस्ताचल खड़ा।
आ रहा इन्दु उधर से, करता उजियाला हुआ ॥

देख मुखपर दमकता, दिलमे हुआ ऐसा विचार।
इस-पुण्य तनके सामने, दोनो का तन काला हुआ॥
शील लज्जा भोलापन, क्या गुण सर्व लक्षण अति।
चमन और संध्या से जिसका, रूप दो वाला हुआ॥
किस तरह संयोग अब, इस पुण्य तन से हो मेरा।
पूर्ण हो आशा तो मै भी, शुभ कर्म वाला हुआ॥

दोहा

मन ही मन मे इस तरह, करता रहा विचार।
सेवक जन लख आकृति, बोले गिरा उचार॥
स्वामिन् क्यो सहसा हुआ, चेहरा आज उदास।
किस कारण लेने लगे, लम्बे लम्बे स्वांस॥

है प्रकृति अनुकूल सभी के, शोक मोचनी बनी हुई।
संध्या भी अपना गौरव लेकर, सभी ओर से तनी हुई॥
वायु कुमार ने मरुत की शोभा, शीतल कैसी रची हुई।
जिसको लेकर ना चलती पवन, व सुगन्ध कौनसी बची हुई॥

गाना नं ३

मेरे इस मर्ज की, तुम्हें क्या खबर है।
यह दौरा मुझे सहसा, आया जबर है॥
यदि घर चला तो, यह दूनी बढ़ेगी।
मुझे आता निश्चय ही, ऐसा नजर है॥
इसी राजधानी मे, ठहरेगे कुछ दिन।
मेरे मर्ज की बस, मुझे ही फिकर है॥
सिवा एक के बाकी, "जावो" 'भिदापुर'।
मिटेगी यह कुछ दिन, मे जो भी कसर है॥

शुक्र सत्य जानो, कि दो तीन दिन मे।
चिकित्सा का होवेगा, मुझ पर असर है॥

दोहा

श्रीकण्ठ ने इस तरह, किया वहाँ विश्राम।
ढंग वही करने लगा, बने जिस तरह काम॥
मन ही मन मे सोच के, भिदापुर के नाथ।
कुशल पूछ दर्बान से, मिले प्रेम के साथ॥
प्रेम देख श्रीकण्ठ का, चकित हुआ दर्बान।
बोला श्री महाराज मै, हूं निर्धन अनजान॥

श्रीमान करना क्षमा, मैने श्रीमान को पहिचाना ही नही।
एक निर्धन ने ऐसे प्रेमी, धनवान को पहिचाना ही नही॥
जो राव रङ्क का मान करे, गुणवान को पहिचाना ही नही।
है कौन देश के आप रत्न, भगवान् को पहिचाना ही नही॥
बोले श्रीकण्ठ मैं परदेशी, यहाँ भूला भटका आया हूँ।
विश्राम के कारण ठहर गया, और भूखका अधिक सताया हूं॥
एक श्रमित बटोही परदेशी पर, इतना तुम उपकार करो।
भूखे की भूख मिटा कर तुम, एक अतिथि का सत्कार करो॥
कर भला भला होगा तेरा, मन मे न जरा विचार करो।
उपकार के बदले मे भाई, यह पुरस्कार स्वीकार करो॥

दोहा

मोहरे लेकर हाथ मे, भूल गया सब ज्ञान।
शीश नवा कर चल दिया, खुशी खुशी दर्बान॥
मोहरें लेकर चल दिया, जब यह पहिरेदार।
प्रेम पत्र लिखने लगा, श्रीकठ सुकुमार॥

गाना नं० ४

मन नहीं बस मे. रहा, जब सुन्दर सूरत देखली ।
मोहिनी जादू भरी एक, चन्द्र मूरत देखली ॥
प्रेम की वीणा लिये, प्रेमी गुणों को गा रहा ।
राग की झनकार ने भी, प्रेम की गत देख ली ॥
चूमते उपवन की चौखट, है खड़े दर्वान बन ।
क्या क्या अनुचित कर्म, करवाती है चाहत देख ली ॥
वैद्य के आगे न रोगी, रोये तो रोये कहां ।
प्रेम प्राणी मात्र की, करता है जो गत देखली ॥
प्रेम के सागर में, आशाओ की लहरे उठ रही ।
प्रेम बस बुद्धि हुई, कैसी है मदमत्त देखली ॥
प्रेम बस अनुचित, उचित का ज्ञान कुछ रहता नहीं ।
प्रेम के रंग मे रंगे, शब्दो की रंगत देखली ॥
देख तेरे दर्शनो की, भीख आये मांगने ।
दिव्य दृष्टि से जभी, दाता की आदत देखली ॥

दोहा

जहां सम्पत्ति तहाँ पराहुणे. और याचक गण जाय ।
मेघ वहाँ श्रावण जहां, बर्सन को तहां जाय ॥

सास जहां तक जीती है, तब तक सासरा कहाता है ।
तीनों का जहां अभाव वहाँ पर. कौन कहाँ कोई जाता है ॥
विद्या वचन वपु वस्त्र, अरु विभव पांच वकार जहां ।
शुक्र वहां जाना चाहिये, सुन्दर हों पांच वकार जहां ॥
जल रसना दोनों मीठे, दुखियो का दुख जानते हो ।
शुभ विद्या और मति शोभन, गुण अवगुण को पहिचानते हों ॥

अपने गौरव जैसा प्राणी, बस औरों का गौरव माने।
सब काम सरलता का अच्छा, चाहे कोई बुरा भला माने ॥
कल से यहाँ बाग तेरे की, आकर घूमन घेरी लाते हैं।
बस सौ बातो की बात यही, अंतितर हम तुमको चाहते है ॥
अनुकूल चाहे प्रतिकूल कहो, लिखना यह खास हमारा है।
इसका ना समझे दोष कोई, जो पहिरेदार तुम्हारा है ॥
यदि उत्तर हाँ मे है तो फिर कहना सुनना कुछ और नहीं।
गर उत्तर नामे होनी आगे, कुछ चलता जोर नही ॥

दोहा

पत्र ऐसा लिख दिया, कर चौतरफी बन्द।
पद्मा का ऊपर लिखा, नाम आप सानन्द ॥

आगे बढ कर दिया फैंक, जहाँ पर वह आती जाती थी।
और संध्या भी अपना सौन्दर्य, लेकर सन्मुख आती थी ॥
धमकल पहिरेदार उधर से, खाद्यपदार्थ लाया है।
आगे धर कर मिष्टान सभी, श्रीकंठ को वचन सुनाया है ॥

दोहा

पांच मोहर से अधिक, यह लीजे सब मिष्टान्न।
बैठ आप यहां कीजिये, भोजन और जलपान ॥

मेरा शृङ्गार मुझे दीजे, अपने पहरे पर डटता हूं।
सब कारण आप जानते है, सग खाने से जो नटता हूं ॥
राजकुमारी की संध्या अब, स्वागत करने आई है।
फिर हमतो उनके सेवक है, आजीविका जिनसे पाई है ॥
पराधीन सपने सुख नाही, सत्य किसी ने कह डाला।
कारण यह पूर्व जन्म मे नही, हमने कुछ शुद्ध धर्म पाला ॥

ना किसी मित्र या सज्जन का, स्वागत पूरा कर सकते है।
यदि परतन्त्रता तजे कही, तो पेट नहीं भर सकते है॥

दोहा (श्रीकंठ)

मित्र क्या कहने लगे, भोली भोली बात।
कभी श्याम दिन रात्रि, कभी होय प्रभात॥

जो भेद नजर आता यहाँ, बेशक, कर्त्तव्य पूर्व जन्म कैसे।
स्वतन्त्र और परतन्त्र बने, जैसा कोई कर्म करे कैसे॥
स्वतन्त्र होकर भी तुमने, सेवा की है चित्त लाकर के।
परतन्त्र कौन कर सकता है, स्वार्थ में मन फंसा करके॥
यदि कर्म तेरे सीधे होगे, कल स्वतन्त्र बन जावोगे।
क्यो पहिरेदार रहेगा यहाँ, निज घट में मौज उडावोगे॥
मित्र जो कह चुके तुम्हे, मित्र का अंग पुगावेगे।
अपना चाहे काम बने ना बने, पर बना तुम्हारा जावेंगे॥
जो पांच मोहर वापिस ले लूं, क्या तुम पर अविश्वासी हूं।
विश्राम यहां करने से मैं, बना चुका मित्र संग वासी हूं॥
तुझमे मुझमे ना भेद कोई, यदि है तो मन से दूर करो।
स्वावलम्बी हो बस अपने पर, इस निर्बलता को दूर करो॥

दोहा

पद्मा के रथ का सुना, जब सुदूर झंकार।
'धमकल' झटपट जा, हुआ पहिरे पर अवसार॥

श्री कंठ ने भी पद्मा के, सन्मुख ही प्रस्थान किया।
और पैदल चलने की सीमा पर, पद्मा ने तज यान दिया।
आ मेल परस्पर हुआ वहां, कुछ संध्या ने रंग बसाया।
कुछ बाग दुतर्फी फल फूलो, ने भी अपना रंग दर्शाया॥

कुछ श्रीकंठ के चेहरे का, पहिले ही रंग गुलाबी था।
कुछ संध्या रग से और खिल गया, सन्मुख अर्चिमाली था॥
लक्षण व्यञ्जन गुण अवगुण, विद्या के दोनो ज्ञाता थे।
संयोग मिलाने बन बैठे, मानो शुभ कर्म विधाता थे॥

दोहा

आकार और आभ्यन्तर में, जैसी चेष्टा होय।
भाषा नेत्र विकार से, जाने बुद्धि जन कोय॥

बस एक दूसरे के अन्तरगत, मन भावो को भाष गये।
कुछ मेरा है अनुराग इसे, उसको मेरा यह जांच गये॥
कुछ पूर्व जन्म का प्रेम, और आयु भी कुछ स्वीकारती है।
कुछ लक्षण व्यंजन आकर्षण, शक्ति भी हाथ पसारती है॥
चरित्र मोहनी कर्म उदय, जिस प्राणी का जब आता है।
उस काम से लाख यतन करने पर, भी नहीं हटना चाहता है॥
मन का मन साक्षी होता, यह उदाहरण भी जाहिर है।
जो मर्ज थी श्रीकंठ को यहां, पद्मा ना उससे बाहिर है॥

दोहा

दोनो निज रस्ते लगे, भाव हृदय में धार।
राज कुमारी जा धसी, अपने बाग मंभार॥

गाना नं० ५

मनोहर रूप पर मोहित ये, तबियत होई जाती है।
अनोखी देखकर रचना को, उल्फत होई जाती है॥
अगर आज्ञा बिना स्वामी के, वस्तु लेना चोरी है।
मनोहर मूर्ति से यों, महोब्बत होई जाती है॥
यदि मांगू मै राजा से, नहीं मानेगा हठ धर्मी।
हुआ अपमान जिसका उसको, नफरत होई जाती है॥

मेरी शक्ति नहीं ऐसी, कि मैं बल से उसे जीतूं।
शुक्ल निर्बल पुरुष को, छल की आदत होई जाती है॥

दोहा

करता करता जा रहा, निज विचार श्रीकंठ।
इधर आईये बाग मे, लगे जरा कुछ ठंड॥
पद्मा की दृष्टि पड़ी, उसी पत्र पर जाय।
आज्ञा पा चेटी दिया, उसी समय कर लाय॥

जब पढ़ा पत्र सहसा विचार, चक्कर मस्तक मे घूम गया।
या यो कहिये कि श्रीकंठ के, सिर से बुरा मक्सूम गया॥
निवास गृह मे जा बैठी, चेरी जन को निज काम लगा।
ले हाथ लेखनी कागज पर, उत्तर लिखने लगी ध्यान जमा॥

दोहा

स्वस्ति श्री सर्वोपमा, गुणिजन मे प्रवीण।
आकर्षण गुण लेखने, लिया कलेजा छीन॥

सम्बन्ध सभी पीछे होगा, पहिले परिचय कराने से।
कोई कष्ट पड़े उसको सहने मे, अपना साहस बढ़ाने से॥
कर्त्तव्य जो हो अपना उसपर भी, दृष्टि जमा लेनी चाहिये।
प्रकृति मिले परस्पर परीक्षा, लेनी और देनी चाहिये।
क्या नाम आपका धाम सहित, और किसके राज दुलारे हो।
अर्धाङ्गनी है कौन आपकी, या कि अभी कुंवारे हो॥
आसान सभी कर्त्तव्य कठिन, होता दिल लेना देना है।
मन मिले बिना क्या कहो आप, कब प्रेम का दरिया बहना है॥
अनमेल का मेल मिला लेना, बुद्धिमानी से बाहिर है।
बिगड़े पय कांजी की छींट पड़े, यह भी मिसाल जग जाहिर है॥

सिक्के से मेल मिला करके, सोना निज गौरव खोता है ।
उस बीज का नाश निशक बने, जो कि कल्लर में बोता है ॥
बिन सोचे जो कोई काम करे, सो ही पीछे फिर रोता है ।
जो द्रव्य काल अनुसार चले, सो ही जन विजयी होता है ॥
आशा निश्चय पूरण होगी, अनुमान नजर यह आते हैं ।
पर उद्यम सब का मूल यही, सर्वज्ञ देव बतलाते हैं ॥
यह बात सोचने वाली है, स्वार्थ ना कोई निकल आवे ।
सब रंग भंग हो जाय यदि, कोई समस्या निकल विकट आवे ॥
जो भी कुछ करना बुद्धिमान को, प्रथम सोच लेना चाहिये ।
आ स्वार्थ के अंकुरो को, हृदय से नोच देना चाहिये ॥

दोहा

सज्जन ऐसे चाहिये, जैसे रेशम तन्द ।
धागा धागा खंड हो, कभी न छोड़े बंध ॥
ऐसे सज्जन परिहारो, जैसे अर्कज फूल ।
ऊपर लाली चमकती, अन्दर विष का मूल ॥

नीति और व्यवहार की दृष्टि, से कुछ लिखना पड़ता है ॥
पर प्रेम संस्कारी सबको तज, निश्चय आन जकडता है ॥
किन्तु फिर भी व्यवहार मुख्य, लिये सब के खास जरूरी है ।
खाली निश्चय पर तुल जाना, यह भी तो एक गरूरी है ॥
व्यवहार यदि दुनिया का साधा, जावे तो क्या हानि है ।
क्यों कि फिर मात पिता की भी, इच्छा होवे मन मानी है ॥
इस तरह परस्पर दोनो की, व्यवहारिक शादी हो जावे ।
प्रतिकूल मे ऐसा संशय है, कोई जान मान ना खो जावे ॥
बस इत्यलं कर के प्रतिज्ञा, एक आप के दर्शन की ।
यह ख्याल ना करना इच्छा है, पद्मा को उत्तर प्रश्न की ॥

दोहा

ऐसा लिखकर लेख बस, किया बन्ध तत्काल ।
'धमकल' को बुलवा लिया, समझाने को हाल ॥
धमकल पहिरेदार शीघ्र, पद्मा के पास सिधाया है ।
और विनय सहित अपना मस्तक, भूमि पर आन निमाया है ॥
कुछ बनावटी मुख मंडल, पद्मा ने भी मुर्झाया है ।
सब बात पूछने के कारण, यों मुख से वचन सुनाया है ॥

दोहा

क्या कोई आया यहां, सच सच कहो बयान ।
झूठ न कहना तनिक भी. समझ मुझे अनजान ॥
सत्य कहने वाले की परीक्षा, सत्य के ही आधार पे है ।
और मृषा भाषण वाले के लिये, दण्ड भी इस संसार पै है ॥
कोई आता-जाता जैसा भी, देखा हो वैसा बतलाओ ।
यह सत्य सभी को अच्छा है, तुम भय ना कोई मन में लावो ॥

दोहा

जी हां आया था यहां, मनुष्य अपरिचित आज ।
व्यंजन लक्षणों का जिसे, मिला सभी शुभ साज ॥
सुन्दर सभी अवयव और तन था, सांचे में ढला हुआ ।
मालूम मुझे होता था, जैसे राज भवन मे पला हुआ ॥
रसना में जिसके आकर्षण, शक्ति थी मानो भरी हुई ।
और क्रोध लोभ मद माया की, थी शक्ति सारी जरी हुई ॥
परिचित नहीं होने से भी वह, परिचित से ही बन जाते है ।
अवकाश मिले नहीं पूछन का, बस प्रेम बीच सन जाते हैं ॥
आते ही प्रसन्न बदन होकर, मुझको पागल सा कर डाला ।
देखन में सौम्य मूर्ति उन्नत, मस्तक तनु कमर वाला ॥

पहरे पर आप खड़े होकर, मुझसे कुछ खाद्य मंगाया था।
चल दिये यहां से आपके रथने, जब झकार सुनाया था॥
कुछ और मुझे मालूम नहीं, था कहां कहां से आया था।
बस उसकी छाया का मुझ पर, बेशक जादू सा छाया था॥

गाना नं० ६

(तर्ज—म्हारी किस विध होसी पार नैया सागर से)

मै कैसे कहूं, उचार शोभा नरतन की।
नल कुबेर सम छवि निराली, चाली गज सम थी मतवाली।
शशी बदन सुनहार॥ शो० १॥
विद्वान् दानी सन्मानी, सब गुण लायक निरभिरामी।
आकर्षण सुखकार॥ शो० २॥
समचौरस सु संस्थान था, परमार्थी और पुण्यवान् था।
रूप था अपरम्पार॥ शो० ३॥
क्रान्ति छटक रही थी न्यारी, शुक्ल ध्यान आरति सब टारी।
दुखी जन का आधार॥ शो० ४॥ इति॥

दोहा (पद्मा)

यह लो पत्र गुप्त ही, रखो अपने पास।
गर उनको यदि ना मिले, देना मुझको खास॥
इतना कह कर के गई, पद्मा निज आवास।
श्रीकंठ अगले दिवस, पहुँचा धमकल पास॥
श्रीकंठ आगे कल की, जो थी सो सारी बात कही।
पत्रिका राजकुमारी की, फिर राजकुमार के हाथ दई॥
वह पत्र पढ़ते ही सारा बस, हृदय कमल प्रकाश हुवा।
क्योंकि जिस काम की आशा थी, वह काम एकदम पास हुवा।
पुण्योदय धमकल को भी, मिल गया द्रव्य खुश हाल हुवा॥

दोहा

अपना लिया सजा तुरन्त, शुभ श्रीकंठ विमान।
पहुँची यहां निज बाग मे, पद्मा साभिमान॥
पूछ सन्तरी से बीतक, बाते अन्दर प्रवेश किया।
मीठी रसना के बने दास, कुछ लालच दे उपदेश दिया॥
प्रतिज्ञा करने के पहिले, श्रीकंठ बाग मे आ पहुँचा।
और बात परस्पर होने से, पहिले निज कर्त्तव्य को सोचा॥

दोहा

देखी जब श्री कंठ ने, पुण्य श्री यह खान।
उपमा मिलती ही नही, कैसे करे व्याख्यान॥
पद्मा थी बेशक चन्द्रमा, श्रीकंठ न भानु से कम था।
यदि वह थी सुवर्ण की मुद्री, यह भी न नगीने से कम था।
मानो थी सांचे मे ढाली, पर यह भी नकशक मे सम था।
प्रेम संस्कारी दोनो का, एक दूजे से विषम न था॥
जब सहित वीर रस के सहसा, उस काम देव तन को देखा।
लज्जा से ग्रीवा झुका लई, और तिरछे चितवन को देखा॥
लक्षण व्यञ्जन देख फेर, ना पूछन की दरकार रही।
स्वर व्यञ्जन लक्षण के ज्ञाता, कुछ कहते बारम्बार नहीं॥

दोहा

जो मतलब की बात थी, बतलाई तत्काल।
पद्मा से कहने लगा, इस कारण का हाल॥
निश्चय अपना और तेरा, घटा रहा हूं मान।
इसका भी कारण सुनो, जरा लगाकर कान॥
मेघाभिदापुर नगर है, अतीन्द्र पिता भूपाल।
श्रीकंठ मम नाम है, श्रीमती शुभ मात॥

बहिन मेरी गुणमाला जो कि, पिता तेरे ने मांगी थी।
पर तात मेरे ने अति बहुत, कहने पर भी ना मानी थी॥
उसी दिवस से जनक तेरा, हमसे विरुद्ध है बना हुआ।
और शक्ति में भी अपने से, हमने तेजस्वी गिना हुआ॥
बस कारण केवल एक यही, तुमको ऐसे ले जाने का।
और ऐसा किये विना निश्चय, दिल को सन्तोष न आने का॥
अब जान की साथन सच्ची होतो, जल्द विमान में चरण धरो।
कैसे होगा क्या बीतेगी, इसका ना रंज न भर्म करो॥
दे चुका तुम्हे दिल क्षत्री हूं, मुझसे ना संका शर्म करो।
क्षत्राणी होना तुम भी तो, निर्भय होकर निज कर्म करो॥
जब तक ना आपका दिल होगा, तब तक ना कभी ले जाऊँगा।
कर चुका संकल्प तन मन धन, अपना तुमको दे जाऊँगा॥
यदि अब ना तो पर भव में तुमको, अवश्य मानना होवेगा।
तुम पछताओगे बार बार, परिवार मुझे सब रोवेगा॥
कुछ जोर जफा ना तुम पर है, ना गिला हमें कुछ होवेगा।
पर नींद हमेशा की बन्दा भी, इसी बाग में सोवेगा॥

दोहा

बात पुराणी आगई, आज मुझे भी याद।
भंग न होनी चाहिये, सतियों की मरयाद॥
अष्टांग ज्योतिषी ने बतलाया, सो ही अक्षर मिलते हैं।
कर्म निकाचित भोगावली, उद्यम से भी नहीं टलते हैं॥
प्रतिज्ञा से विपरीत कहीं, सादी मैंने नहीं करनी है।
मात पिता परिजन क्या, चाहे उलट जाय यह धरनी है॥

दोहा

आदि श्री और अन्त ठ, मध्य क कार उचार।
सम अक्षर व्यञ्जन सहित, नाता जग सुखकार॥

यदि मेल कोई मिल जावे तो, गौरव सुख का पार नहीं ।
उस कुल से रत्न अपूर्व हो, कोई कर्म को मेटन हार नहीं ॥
यदि इससे कुछ कसर रहे, तो ज्योतिष विद्या तर्क करूं ।
और प्रतिज्ञा करता हूं, जो कहो खुशी से दण्ड भरूं ॥

दोहा

उसी समय मैंने लई, निज प्रतिज्ञा धार ।
यदि मिला सयोग तो, वही मेरा भरतार ॥
अब मात पिता मजबूर मुझे, करते है शादी करने को ।
यदि नहीं माने तो मैं तैयार थी बैठी मरने को ॥
विरोध परस्पर है जिनमे, व्यवहार नहीं है सधने का ।
आगे पीछे नजर आ रहा, झगड़ा एक दिन वढ़ने का ॥

दोहा

कर्म प्रकृति जीव का, झगड़ा ही संसार ।
भाव निवृति कठिन है, भाष गये अवतार ॥

दोहा

पद्मा ने ऐसा लखा, श्रीकंठ का प्रेम ।
और विशेष पिघल गई, ग्रीष्म मे जिम हेम ॥

गाना नं० ७

(तर्ज—पाप का परिणाम० ।)

संयोग पूर्व जन्म का बेशक नजर आता मुझे,
इस सिवा नही रास्ता कोई नजर आता मुझे ॥१॥
कौन से जादू से मेरे दिल को बेहवल कर दिया ।
खाना पीना पहनना कुछ भी नही भाता मुझे ॥२॥
कर्म है भोगावली संसार मे आता नजर,
क्या कहूं जाऊं किधर अन्तक नहीं खाता मुझे ॥३॥

मात-पितु की स्नेह दृष्टि शिक्षा गुरुजन की सभी,
कर्मोदय सब छिप गई कुकर्म भरमाता मुझे ।।४।।
शुक्ल अब बस फैसला मैंने अटल यह कर लिया,
चारित्र मोहनी कर्म अब जकड़ना चाहता मुझे ।।५।।

वशीकरण के मन्त्र है, दुनिया में यह चार ।
रूप, राग और नम्रता, सेवा भली प्रकार ।।
पूर्व जन्म का था सम्बन्ध, कुछ रूप का पारावार नहीं ।
कुछ रसना मीठी श्रीकंठ की नरमी का कोई पार नही ।।
कुछ प्रेम तमाचे के समान, दुनिया मे लगता सार नहीं ।
बस समझो सभी नमूने से, ज्यादा करते विस्तार नही ।।
सब कारण समझे पद्मा ने, व्यवहार नहीं अब सधने का ।
जो दिल मे प्रेम बढ़ा बैठी, अब प्रेम नहीं वह हटने का ।।
बिना मुझे इस रस्ते से कोई, मार्ग आता नजर नही ।
संयोग है पिछले जन्मो का निश्चय, है इसमे कसर नहीं ।।

दोहा

ऊंच नीच सब सोच कर, बैठी तुरत विमान ।
श्रीकंठ मन सोचता, बना सब तरह काम ।।

दोहा

यह पुष्पोत्तर की सुता, पद्मा रूप अपार ।
पुण्योदय से मिल गई, इन्द्राणी अवतार ।।

इन्द्राणी अवतार कि जिसका, मिलना अति कठिन है ।
याचन से देता नहीं भूप का, हमसे उल्टा मन है ।।
किन्तु मानव के आगे, यह कौन क्रिया दुष्कर है ।
होगा जो देखा जावेगा, अब करो काम जो दिल है ।।

दौड़

आज अवसर यह पाया, पुण्य सब मेल मिलाया।
चलूं अब देरी क्या है, पहुँचूं निज स्थान बजेगी रण भेरी
तो क्या है॥

दोहा

लात धम्मुके जो सहे, सो पावे जागीर।
कायर कर सकते ना कुछ, क्षण में होय अधीर॥
दाबी कला विमान की, सहसा गये आकाश।
तिरछी कला मरोड़ के, आये निज आवास॥

दोहा

पुष्पोत्तर को जब हुआ, सुता हरण का ज्ञान।
आज्ञा पाते ही सजे, जंगी महा विमान॥
जंगी महा विमान व्योम मे बादल से छाये हैं।
गिरफ्तार वहां शंका मे हुये, नौकर घबराये हैं॥
गुप्तचरों से भेद सभी पा, इष्ट दिशा धाये है।
श्रीकंठ था सावधान, यहां भेद सभी पाये है॥

दौड़

तजी रियासत सुखदानी, चली संग पद्मा रानी।
शरण कोई सोच रहा है, कौन बचावे आज हमें बस
ये ही खोज रहा है॥

दोहा

क्रोधातुर लख भूप को, श्रीकंठ सोचता धाम।
शरणा दिल में धार के, लंका किया मुकाम॥

लंका किया मुकाम, बहनोई को निज बात सुनाई।
पड़ा कष्ट मुझ पर आकर, अब कीजे आप सहाई॥
इतनी शक्ति कहां मुझमे, जो नृप से करूं लड़ाई।
उभय पक्ष की लंक पति ने, शुभ सम्मति कराई॥

दौड़

पक्ष के होय अधीना, विवाह पुत्री का कीन्हा।
किन्तु मन मे दुख पाया, और लाठी जिसकी भैंस
समझ अपना जमात बनाया॥

दोहा

लंकपति कहने लगा, सुन श्रीकंठ सुजान।
वास यहां पर ही करो, जाना ठीक न जान॥
जाना ठीक ना जान, वहां पर शत्रु रहते भारी।
यह शतरंज का खेल, चूक जाते है बड़े खिलाड़ी॥
बच्चा तू नादान अभी, कच्ची है उमर तुम्हारी॥
शत्रु नीति निपुण तेरी, मिलकर सब करें ख्वारी॥

दौड़

हृदय विश्वास ना धरना, ध्यान गौरव का करना॥
मुझे है प्रेम तुम्हारा, हितकारी शिक्षा उर धारो
मानो वचन हमारा॥

दोहा

वानर द्वीप सुहावना, योजन शत तीन प्रमाण॥
राज वहां पर कीजिये, वर्तावो निज आन॥

चौपाई

भगिनी पति । कहना माना। किष्किंधा शुभ नगर बसाना॥
निर्मल स्थान अति सुखदाई। महल कोट छवि वरनी ना जाई॥

बाग बगीचे नदी तालाब । भ्रमण करे मन अति सुख पाव ॥
धर्म कर्म करते सुख पाते । सबके अधिपति अधिक सुहाते ॥
देव गुरु और धर्म से प्यार । सम्यक् धार मिथ्यात्व निवार ॥

दौड़

वानर द्वीप वानर अति, देखे जब भूपाल ।
खुशी हुआ मारो मति, मत फेंको कोई जाल ॥
अपनी जैसी जान है, सबके अन्दर जान ।
भोजन पान भंडार से, देवो खुल्ला दान ॥

देवो खुला दान, सब जगह वानर चिह्न कराये ।
इस कारण वहां के वासिन्दे, वानर नाम कहाये ॥
थे नीति मे निपुण, और विद्याधर अधिक सुहाये ।
जंगी चोला शूरवीर, कानों मे कुण्डल पाये ॥

दौड़

नृप घर पद्मारानी, पुत्र हुआ अति सुखदानी ।
दान दुखियो को दीना, वज्रसुकंठ दिया नाम
रातदिन रहे सुखों मे लीना ॥

दोहा

सिहासन पर एक दिन, बैठा भूपति आन ।
ऊपर को दृष्टि गई, देखा देव विमान ॥
अष्ट नदीश्वर द्वीपसुर, महिमा करते जाय ।
पीछे ही भूपाल ने, दिया विमान चलाय ॥

चौपाई

चलत चलत पर्वत पर आया, अटका विमान न चले चलाया ।
चारों ओर फिर ध्यान लगाया, साधु देख चरण चित्त लाया ॥

समझा यह संसार असारा, बंध मोक्ष का हाल विचारा।
रजो हरण मुखपती धारी, पुनजन्म की गति निवारी॥

दोहा

वज्र सुकंठादिक हुए, अनुक्रम से राजान।
बीसवें जिनवर के समय, घन वाहन बलवान॥

चौपाई

बानर द्वीप घन वाहन नरेश, लंका मे हुवा तडित केश॥
आपस मे है प्रेम घनेरा, शत्रु कोई आवे नही नेरा॥

दोहा

लंकपति गया भ्रमण को, निज नंदन वन मांह।
थी संग में महारानियां, खेले अति उत्साह॥
खेले अति उत्साह उधर एक, बानर चलकर आया।
चपल जात चालाक, झपट कर महारानी पर आया।
सहसा झपट पछाड़ तुरत, हृदय पर हाथ चलाया॥
रानी का लिया कुच पकड़, नाखूनी घाव लगाया॥

दौड़

घबरा रानी चिल्लाई, दौड़ दासी सब आई।
मचा कोलाहल भारा, सुन राजा ने भेद कपि के
बाण खैच कर मारा॥

दोहा

कपि बाण खाकर भागा, गिरा मुनि के पास।
शरण दिया नमोकार का, सद्ध हुआ सुरवास॥
उदधि कुमार हुआ देव, जिस समय अवधि ज्ञान मे देखा।
किस कारण हुआ देव आन के, चढी पुण्य की रेखा॥

देखा पिछला हाल स्वर्ग के, छोड़े सुख अनेका ॥
उपकारी मुनि समझ आन कर, साधी सेवा विशेषा ॥

दौड़

नृप के दिल रोष अपारा, मारो कपि हुकम करारा ॥
देव दिल गुस्सा आया, बानर सेना विस्तार वैक्रिय
चारों ओर फैलाया ॥

दोहा

बानर सेना देखकर, घबराया भूपाल ।
शूर मंगा कर युद्ध किया, बानर दल विकाल ॥
बानर दल विकाल देख, राजा की सामर्थ्य हारी ।
मन में किया विचार, कपि दलने सब फौज विदारी ॥
क्या आपत्ति बानर दल, चहुं ओर अति भयकारी ॥
मारे मरते नहीं शस्त्र, आदि सब विद्या हारी ॥

दौड़

देव कारण दिल धारा, भाव भक्ति सत्कारा ।
और करी नम्रता भारी, देव नरेन्द्र ने आकर मुनि
आगे अर्ज गुजारी ॥

चौपाई

कर वन्दना पूछे भूपाल, करुणा निधि कहो पूर्व हाल ।
पूर्व कृत्य नृप बानर जो जो, ज्ञान बले मुनि भाषे सो सो ॥

दोहा

मंत्रीश्वर का पुत्र तू, सावस्थी मंझार ।
दत्त नाम तेरा हुआ, धर्मी चित्त उदार ॥
धर्मी चित्त उदार, एकदा विरक्त हुआ भोगों से ।
अनादि काल से पाया दुख मैं जन्म मरण रोगो से ॥

श्री जिन धर्म अमूल्य मनुष्य तन, वचूं सभी धोखो से ।
दीक्षा लेकर हुए मुनि, सहे कटुक वचन लोगो से ॥

दौड़

रहे सुमति ही ध्यान मे, आ निकले तप मैदान में ।
जंग कर्मों से लाया, करते उग्र विहार चला चल नगर
बनारस आया ॥

दोहा

देव कपि काशी हुआ, लुब्धक अति पापिष्ठ ।
आ रस्ते मुनिवर हना, अधर्म लगता इष्ट ॥
अधर्म लगता इष्ट, समझ मुनि रोष नहीं कुछ कीना ।
समता दिल में धार, माहेन्द्र सुर पद मुनिवर लीना ॥
भोगे सुख अनेक स्वर्ग के, अमृत रस को पीना ।
जैन धर्म का यही सार रहै, दोनो लोक आधीना ॥

दौड़

लुब्धक गया नरक मे, आप सुख भोग स्वर्ग में ।
यहाँ पर हुवा नरेन्द्र, नरक गति के भोग अतुल दुःख
जन्मा आकर बन्दर ॥

दोहा

वैर वधाने वास्ते. घाव लगाया आन ।
बदला लेने वास्ते, तूने मारा बाण ॥
तूने मारा बाण मृत्यु पा, देव हुआ वानर है ।
इस कारण संसार महा दुःख, उथल-पुथल का घर है ॥
कभी नरक तिर्यञ्च, चहुँ गति चौरासी चक्कर है ।
सम दम खम जिन धर्म विना, खाता फिरता टक्कर है ॥

गाना नं० ८

(तर्ज—नर तेरा चोला रत्न अमोला)

पाया मनुष्य जन्म अनमोल, वृथा खोवे मतीना ॥टेक॥

सीखो नित्य प्रति धर्म कमाना, ये ही काम अन्त मेंआना ।
साधन फिर मुश्किल से पाना, विषे में जावे मतीना ॥१॥
सुपना दौलत राज खजाना, तज गये इन्द्रचन्द्र महाराणा ।
सभी को पड़ा अन्त पछताना, नींद में सोवे मतीना ॥२॥
जिसने त्याग धर्म को धारा, उसने पाया मोक्ष द्वारा ।
तप जप करके कर्म विडारा, निज गुण खोवे मतीना ॥३॥
ध्यावो धर्म शुक्ल दो ध्यान ये ही सर्वज्ञ का फरमान ।
लाकर कर्मो से मैदान पांव हटावे मतीना ॥४॥

दौड़

सुना दुख आवागमन का,वमन किया अनित्य चमन का ।
ताज सुकेशी को दिना, संयम ले तडित केश ने
अक्षय मोक्ष सुख लीना ॥

चौपाई

वानर द्वीप धनो दधि राजा । संयम ले सारा निज काजा ॥
किष्किन्धी किष्किन्धा नायक । लंक सुकेशी अति सुखदायक ॥

दोहा

क्षीर नीर सम प्रेम है । दोनों का शुभ ध्यान ।
राज ऋद्धि सुख भोगते । मानो स्वर्ग समान ॥
मानो स्वर्ग समान, किसी का भय न कोई दिल में है ।
दिन दिन बढ़ता प्रेम एकता हित, सब ही जन मे है ॥

भय खाते है आस पास वाले, राजे जितने हैं।
चहुँ ओर रहा तेज फैल, जैसे सूर्य किरणे है॥

दौड़

किन्तु नित्य तेज एकसा, रहा नहीं किसी नरेश का।
जो होनहार की मर्जी, जीर्ण वस्तर फटे तो फिर क्या॥
करे विचारा दर्जी॥

॥ इति प्रथमाधिकार॥

—:०ॐ०:—

इन्द्र-वंश

दोहा

पुष्पोत्तर नृप के हुवे, कुल मे भूप अनेक।
यहां सुकेशी के समय, नृप था अश्वनीवेग॥

राजा अश्वनी वेग सुरथनु। पुरी राजधानी थी।
पुण्य सितारा लगा चमकने, शिक्षा सुख दानी थी॥
तलवार इन्हो की आस पास के, राजो ने मानी थी।
मध्य खंड के उत्तर मे, शुभ दिशा भी सुख दानी थी॥

दौड़

शुभमति चम्पारानी, शर्म खाती इन्द्रानी
पुण्य कुछ चढ़ा निराला, थे विद्याधर इस कारण।
दबते थे सब भूपाला॥

चौपाई

पुत्र दोय महा बलवान्। सोहे नृप फल वृक्ष समान॥
साम दान आदिक के ज्ञाता। पूर्ण कृत्य कर्म सुखदाता॥
विजयसिंह और विद्युतबेग। दोय भुजा राजा की यह॥

अन्य नगर आदित्य पुरनाम मन्दिर माली नृप गिरिधाम ॥
तिसके सुता वनमाला नाम । चौंसठ कला सुगुण अभिराम ॥

दोहा

स्वयम्वर एक मण्डप रचा, मन्दिर माली भूप ।
सुता विवाहने के लिए, रचना करी अनूप ॥
लिए भूप बुलवाय उपस्थित, हुए स्वयम्वर घर में ।
भूषित हो वनमाला आई, वर माला ले कर में ॥
दासी चेटी संग सहेली, शोभा लाल अधर मे ।
देख रूप विस्मित सब ही, जैसे दामिनी अम्बर में ॥

दौड़

अतिक्रम सब का करके, चित किष्किन्धा धरके ।
गले वरमाला डाली, तब विजयसिंह ने क्रोधातुर हो
म्यान से तेग निकाली ॥

दोहा

दगेबाज कुल मे हुवा, दगेबाज ही साथ ।
शक्ति न अब तेरी चले, देख हमारे हाथ ॥
देख हमारे हाथ यदि तू शूरवीर योद्धा है ।
बदला सब लेने का मुझको, मिला आन मौका है ॥
पहुँचा दूंगा पर भव में । क्या इधर उधर जोहता है ।
यह वरमाला रखो यहां, कहूं साफ नहीं धोखा है ॥

दौड़

चूक लड़की ने खाई, चोर गल माला पाई ।
न्याय तलवार करेगी, शक्ति ही दुनिया में वरमाला
को आज वरेगी ॥

दोहा

एकत्रित हो सभी ने, किष्किन्धी लिया घेर।
गर्ज तर्ज हो सामने बोला ऐसे शेर ॥

दोहा

हां मुझको भी आ गई, बात पुरानी याद।
बनते ही आये सदा, आपके हम दामाद ॥
दामाद हमेशा आपके, सब हम बनते ही आये हैं।
खैंच खडग अब तक तुमने, गीदड़ ही धमकाये है ॥
शस्त्र दिखाते जामतो को, जरा ना शर्माये है।
सहर्ष करेंगे स्वागत रण का, क्षत्री के जाये है ॥

दौड़

जान की साथन माला, मै हूँ इसका रखवाला।
सन्मुख क्यों नहीं आता, पीठ दिखा या रण मे कायर
खाली गाल बजाता ॥

दोहा

बात बात मे बढ़ गई, आपस मे तकरार।
रण भूमि मे उस समय, बजन लगी तलवार ॥

दोहा

(किष्किन्धी का)

मैढक सा क्या उछलता, मारूं उदर में लात।
पूछ बड़ों को जायके, हम तुमरे जामात ॥

दोहा

मित्र घेरा देखकर, लंकपति भूपाल।
जंगी वस्त्र पहिन कर, नेत्र कीने लाल ॥

नेत्र करके लाल भूप ने, फौजी बिगुल बजाई ।
वनमाला भी उसी समय, झट किष्किन्धा पहुँचाई ॥
लगा घोर संग्राम होन अति, शूरवीर बलदाई ।
नभ में लड़े विमान महा, घन घोर घटा सब छाई ॥

दौड़

लड़े दिल खुशी अपारा, शूरमा योद्धा भारा ।
किष्किन्धी नृप के भाई, क्रोधातुर हो विजयसिंह के
हृदय सांग चलाई ॥

दोहा

विजयसिंह धरती गिरा, देखा तुरत नरेश ।
दृग मशाल तुल्य करे, दिल मे रोष विशेष ॥

अश्वनी वेग ने क्रोधातुर हो, बाण खैंच कर मारा ।
लगा उरस्थल अन्धक के, परभव को किया किनारा ॥
आकाश धरन पर चले, सरासर मानो रक्त फुवारा ।
अग्नि बाण और नाग फांस तम, धुन्द बाण विस्तारा ॥

दौड़

दोनों ओर शूरमे, हुए खाख धूल में ।
लंक किष्किन्धाराई, पराजय होकर दौड़ भाग दोनों
ने जान बचाई ॥

दोहा

अश्वनी वेग ने अरि पर, दल बल दिया चढ़ाय ।
किष्किन्धा और लंक पर, लिया अधिकार जमाय ॥

निरघातज योधा बुलवाया, राजस्थान पर उसे बैठाया ॥
देश नगर पुर पाटन सारे, यथा योग्य दिए प्रेम अपारे ॥

लंका किष्किन्धा पति राई, लंका पाताल स्थिति बजाई।
यही विचारा समय बितावे, प्राप्त अवसर बदला पावे।

दोहा

अश्वनी वेग सहसार को, दिया राज्य का ताज।
दुनिया से दिल विरक्तकर, सारा आत्म काज॥

———

रावण-वंश

※ पाताल लंका वर्णन ※

दोहा

सुकेशी नृप के शिरोमणि, इन्दु मालिनी प्रवीण।
माली सुमाली मालवान्, पुत्र जाये तीन॥

दोहा

किष्किन्धा नृप दूसरा, श्री माला शुभ नार।
ऋक्षरज आदित्यरज, पुत्र दो सुखकार॥

पुत्र दो सुखकार, मधु पर्वत पर वास बसाया।
किष्किन्धा नाम दिया जिसका, नीति से राज चलाया॥
शक्ति का अवलोकन कर, जंगी सामान बनाया।
बहतर कला के जानकार दो पुत्र भूप हर्षाया॥

दौड़

उधर सहसार नृप भारी, चित्त सुन्दरी पटनारी।
अनुपम सुत जाया है, इन्द्र दिया तसु नाम तेज
इन्द्रवत् कहलाया है॥

दोहा

सुकेशी के सुतो के दिल में रोष अपार।
राज लिए बिना अपना, जीना है धिक्कार॥

जीना है धिक्कार जिन्हो का, राज करे शत्रु होते।
मनुष्य नही वह है, मृतक जो देख दुःख दिल मे रोते॥
मानिंद स्वान के रोना है, जो डण्डे खा छिप जा सोते।
परशूर वीर रण क्षेत्रों मे, अपनी यह जान सफल खोते॥

दौड़

सहसा करी चढ़ाई, अति उत्साह मन मांहीं।
निरघातज नृप घबराया, पराजय करके भगा दिया
अपना अधिकार जमाया॥

दोहा

माली लंका अधिपति, किष्किन्धा सुर राज।
बदला लेकर खुश हुए, धरा शीश पर ताज॥

धरा शीश पर ताज खबर यह, इन्दर भूप सुन पाई है।
दल बल सबल विमान, सजाकर जंगी बिगुल बजाई है॥
घेरा लाया चहुँ ओर से, मेघ घटा सम छाई है।
वैश्रवण को दिया राज, माली की करी सफाई है॥

दौड़

प्रसन्न मन मे अति भारा, आज शत्रु को मारा।
राज लिया अपना सारा, पाताल लंक मे उधर सुमाली
के मन मे दुःख भारा।

चौपाई

भूप सुमाली पाले लंका, रत्नश्रवा योधा सुत वंका ॥
साधे विद्यावन खण्ड जाई, शक्ति हो फिर करे चढ़ाई ॥

दोहा

जय विद्या साधन लिए, पुष्पोद्याने जाय ।
लगीं वहां पर साधने, निश्चल ध्यान लगाय ॥

निश्चल ध्यान लगाय उधर हुवा, हेतु अद्भुत भारी ।
कौतुकमंगल व्योमविन्दु, नृप जिसके दो सुकुमारी ॥
कौशिका विवाही वैस्रवा, को पूर्व जात दुलारी ।
कैकसी पूछा वर अपना, तव ज्योतिषी कहे उचारी ॥

दौड़

महाकुसुमोद्यान मे, कुमर एक बैठा ध्यान मे ।
पति होगा वह तेरा, यदि लगाई देर फेर मे
फेर दोष नही मेरा ॥

दोहा

इतना सुन कैकसी ने, कहा मात को आन ।
समझाकर आज्ञा लई, पहुँची बैठ विमान ॥
इधर उधर को भ्रमण कर, देखा एक स्थान ।
नल कुबेर सम शूरमा, बैठा लाकर ध्यान ॥

जव पुण्य रूप तन को देखा, तो प्रसन्नता का पार नही
देख देख मन भरा किन्तु, अभी आंखें हुई दो चार नहीं ॥
क्या सांचे मे ढला जिस्म, इन्द्र भी देख शर्माता है ।
तव ही यह जन्म सफल जानूं, हो इससे मेरा नाता है ॥

दोहा

निश्चय मेरा पुण्य भी, है वृद्धि की ओर।
रूप रंग शुभ वर्णने, लिया चित्त मम चोर॥
है आशा मुझको आज, मनोरथ मन चिन्ते पाऊँगी।
बिना किये अब बात, यहां से मैं ना कभी जाऊँगी॥
निकल गया यदि तीर हाथ से, पीछे पछताऊँगी।
राजी से नाराजी से, स्वीकार मैं करवाऊँगी॥

दौड़

समाधि जब खोलेंगे, तभी मुख से बोलेंगे।
चाहे जितनी हो देरी, अब तो दिल मे ठान लई
बस बनूं चरण की चेरी॥
(तर्ज—ऋषभ कन्हैया लाला आगने में रिम झिम डोले)
देखी अनुपम आज सूरत मोहन गारी।
यौवन की कैसी बहार, खिली केसर क्यारी॥टेर॥
ऋतु अनुकूल वे बसंत मै फूलो की डाली।
इष्ट भंवर सुखकार, मकरंद का अधिकारी॥१॥
कब खोलेगे मौनी ध्यान, मुझको क्षण क्षण भारी।
निश्चय पूर्व संयोग ने, विह्वल कर डारी॥२॥
ये ही मेरे सरताज, इस तन के अधिकारी॥
बाकी भाई पिता तुल्य प्रतिज्ञा हमारी॥३॥
धर्म शुक्ल दो ध्यान प्राणी को हितकारी।
बाकी शुभाशुभ कर्म भोगे नर क्या नारी॥४॥

दोहा

विद्या सिद्धि जब हुई, मानव सुन्दरी आन।
राजकुमार प्रसन्न चित्त खोला अपना ध्यान॥

खोला अपना ध्यान, सामने बैठी राजदुलारी ।
अद्भुत भोलापन मुखपर है, नल कुबेर बलिहारी ॥
चंद्रवदन वर गोल शुक्ल, चौदस की सी उज्याली ।
सदाचार की रेखा भी, मस्तक पर पड़ी निराली ॥

दौड़

अंक मे नहीं कसर है, लाल मुख बिम्ब अधर है ।
ढला सांचे मे तन है, मीच खोल कर आँख कुमर ने सोचा मन ही मन है ॥

दोहा

क्या देवी ने आन के, धारा दर्शक रूप ।
या कोई नृप कन्यका, अदभुत रूप अनूप ॥
क्या मेरी परीक्षा लेने, कोई देवी सन्मुख आई है ।
या कोई राजकुमारी जिसने, मुझपर नजर टिकाई है ॥
या कारण वश वन मे आकर, दुःखिया शरणा चाहती है ।
क्योकि यह अबला इस उद्यान मे, साथ रहित दिखलाती है ॥
कर्त्तव्य यही मेरा पहिला, इससे कुछ हाल मालूम करूं ।
यदि निराधार दुखिया कोई, तो सुख इसके अनुकूल करूं ॥
परीक्षा का कुछ कारण है, तो भी मुझको कुछ फिकर नही ।
क्योंकि अनुकूल है मन मेरा, प्रतिकूल का कोई जिकर नहीं ।
यदि है चोला पराधीन तो, आपत्ति कुछ आवेगी ।
पर यहाँ से तो अब चलना है, होगी सो देखी जावेगी ॥

दोहा

गुप्त दृष्टि से जिस समय, देखा अबला ओर ।
कैकसी अति खुश हुई, देख मेघ जिम मोर ॥

दोहा

कैसे यहाँ पर आगमन, कौन कहाँ पर धाम।
रूपराशि गुण आगरी, क्या है तेरा नाम॥
क्या है तेरा नाम भूप, किसकी हो राजदुलारी।
कारण क्या वन मे आने का, कहो सत्य सुकुमारी॥
साथ रहित है आप, या कोई आते और पिछाड़ी॥
सेवा हो मेरे लायक कुछ, सो भी कहो उचारी॥

दोहा

सिद्ध सभी मेरा हुआ, आई थी जिस काम।
कृपा और इतनी करें, बता दीजिये नाम॥
रत्न श्रवा मम नाम है, पिता सुमाली भूप।
विद्या साधन के लिए, सही वनों की धूप॥
सही वनो की धूप, कार्य सिद्ध हुआ मम सारा है।
चलने को तैयार शेष, यहाँ काम ना और हमारा है॥
जल्द उचारण करो मेरे लायक जो काम तुम्हारा है।
आती नजर कुमारी हो ऐसा अनुमान हमारा है॥

दौड़

काम मेरे लायक हो, आप को सुख दायक हो।
किन्तु अनुचित ना कहना, एकान्त अन्य कुमारी के
संग कर्म ना मेरा रहना॥

दोहा

अन्य नहीं समझे मुझे तुम निश्चय मम कंत।
चरण चंचरी बन चुकी हूं आयु पर्यन्त॥
मंगल पुरवर नगर व्योम, विन्दु की राज दुलारी हूँ।
आशा एक आप की पर ही, अब तक रही कुंवारी हूँ॥

बड़ी कौशिका बहिन मेरी, वैश्रवण भूप को व्याही है।
और नाम कैकसी मैंने, तुम चरणो की सेवा चाही है।"

दोहा

हाथ जोड़ यह बिनती, हो जावे स्वीकार।
आशा मम दिल को बंधे, आपका हो उपकार॥
आपका हो उपकार चाह है, वाग्दान पाने की।
इच्छा मेरी प्रबल, आपके चरणो मे आने की॥
अर्धाङ्गिनी लो बना मुझे. बस और न कुछ चाहने की।
करवाये बिन स्वीकार विनती, मैं न कहीं जाने की॥

कैकसी गाना नं० ६

सेवा करने की मुझे, आज्ञा तो सुना देना।
वचन देकर के मेरी, आशा को बंधा देना॥ स्थायी॥
रुग्ण बन करके मैं, आई हूँ द्वारे तेरे।
करे जो कष्ट निवारण, वही दवा देना॥
आशा करके आई हूँ, मै शरणा लेने।
निराश करके मेरी आशा न गंवा देना॥
उत्कण्ठा है मुझे, आशाजनक शब्दो की।
नाव मझधार पड़ी, पार तो लङ्घा देना॥
आयु पर्यन्त नहीं, आप बिना लक्ष्य कोई।
शुक्ल है ध्यान मेरा, धर्म तुम बचा देना॥

दोहा

सुन सुकुमारी के वचन, सोच रहा सुकुमार।
मन ही मन मे मौन हो, करने लगा विचार॥

क्या इसको कुछ हो रहा, जाति स्मरण ज्ञान ।
या यह रागान्धी हुई, बनी फिरे दुर्ध्यान ॥
कुछ भी हो किन्तु इसका, रङ्ग रूप ही अति निराला है ।
अवकाश समय सुकर्म, कारीगर ने सांचे में ढाला है ॥
और मात-पिता ने भी इसको क्या लाड-प्यार से पाला है ।
वर्तमान मे आज अद्वितीय स्त्री रत्न निराला है ॥

रत्नस्रवा बहिर शिकस्त गाना नं० १०

यात्रा करके भारत की मैने, चाहे कामिनी हजार देखी ।
तो गौरव चातुर्य रूप लावण्य, मे इसकी शोभा अपार देखी ॥
भंवर से बालों की गूंथी चोटी, गजब की पटिये झुका रही है ।
हेम तारो से गूंथी मोतिनसे मांग, दिल को चुरा रही है ॥
हस्तरेखा क्या अंगुली सूक्ष्म हैं,
शोभत लक्षण स्वभावे तनपर ।
गजब का गौहर करे है जौहर है, राज शान्ति का इसके मनपर ॥
मत्स्योदरी बिम्ब अधरी, शशी के सदृश गोल वदना ।
चम्पक डाली सी बाहो को लख, शर्म खाती है देव अगना ॥
है मुख पे लाली दमक निराली, जुलफ नागिन सी काली काली ।
निढाल बिजली सी चमक आगे, फीकी लगती है सब उजाली ॥
कटीले नेत्रो के तेज बेशक, हिरण के चित्त मे खटकते होगे ।
इस पुण्य तन को देख-देख कई, अपने सिर को पटकते होगे ॥

शेर

पुण्य इसने पूर्व भव में, है अतुल कोई किया ।
जन्म इसमे आनकर, शोभन यह फल इसने लिया ॥
अनेको दर्शक इसकी, चाहना मे भटकते है ।
समय पूर्व ही मार्ग मे हुए, बेबल शटकते है ॥

मिलान

जैसी पद्मा ये वैसी हमने, ना घर किसी के है नार देखी।
तो शान शौकत व रूप, लावण्य मे इसकी शोभा अपार देखी ॥

दोहा

अब उत्तर दूं मै इसे, हां ना मे से कौन।
या कुछ और विचार लूं, जरा धार कर मौन ॥
बड़ी कौशिका बहिन इसी की, वैस्रवा को विवाही है।
यह शत्रु परम हमारे की, जो माली यहॉ पर आई है ॥
विद्या सिद्धि बाद मुख्य, आई लक्ष्मी कैसे छोड़े।
कोई विघ्न न डाल देवे शत्रु, सहसा नाता कैसे जोड़ें ॥
समय सोच कर बात करो, बुद्धिमानों का कहना है।
यदि हुई देर तो भेद समझ, शत्रु ने कब यह सहना है ॥
व्योम बिन्दु पर भी निश्चय, प्रभाव उन्ही का होना है।
इसलिये करेगे धूमधाम, तो मानो सर्वस्व खोना है ॥
है निश्चय प्रेम कैकसी का, मम साथ कभी ना छोड़ेगी
यदि मात-पिता ना माने तो, उनका भी कहना मोडेगी ॥
पर अस्थान मित्रता के नृप से, शत्रु का नाता करना है।
जो होना चाहिये रस ही नहीं, तो फिर क्या साथ पकडना है ॥
दो दिन मे ही सहमत होकर, यदि सब ही कारज कर लेवें।
तो निश्चय इष्ट हमे होगा, नही क्यों आपत्ति सिर लेवे ॥
अनुराग इसे यदि पूरा है, तो फिर देरी का काम नहीं।
नहीं पता सभी लग जावेगा कि, प्रेम का नाम निशान नहीं ॥

दोहा (रत्नस्रवा)

क्या कह दूँ मै अब तुम्हे, अपने मुख से भाष।
हां मुश्किल यदि ना कहूं, तो होगे आप उदास ॥

किन्तु जो भी कुछ कहना है, सो तो कुछ कह ही देते है ।
और शक्ति के अनुसार बात, स्वीकार भी हम कर लेते है ॥
यह सर्व कार्य करने मे, केवल दो दिन स्वतन्त्र हूं ।
घर गया तो मात-पिता जानें, क्योंकि मैं फिर परतन्त्र हूं ॥
वचन वद्ध हो चुका मुझे जल्दी उत्तर मिलना चाहिये ।
क्योंकि अब मैंने जाना है, और आप भी निज मार्ग जाइये ॥

दोहा (पद्मा)

प्रथम कहा जो आपने, हमें वही स्वीकार ।
मीन मेष आदि कोई, होगा नही विचार ॥
पहर एक बस और आपको, यहां बैठे रहना चाहिये ।
अरु लिये हमारे अनुग्रह कर, यह कष्ट उठा लेना चाहिये ॥
आज्ञा मुझको देवे अब, कार्य सफल बनाने की ।
सब मात-पिता से कहूँ बात, व्यावहारिक ढंग रचाने की ॥

दोहा

आज्ञा ले कैकसी गई मात-पिता के पास ।
जो-जो इसको इष्ट था, कहा सभी कुछ भाष ॥
कुछ पूर्वले संयोग, ज्योतिषी ने कुछ दृढ़ बनाया था ।
कुछ कैकसी से अनुराग मात क्या व्योम विन्दु हर्षाया था ।
उसी समय सहर्ष कुमर को, राज महल ले आये हैं ।
और अति उत्सव से उसी रात को, पाणि ग्रहण कराये हैं ॥
दिल खोल के राजकुमारी का, अति धूमधाम से विवाह किया ।
अपना जामात बना करके, फिर यथा योग्य धन माल दिया ॥
कुसुमोत्तर नगर बसाके नया, अब खुशी से वहां पर रहन लगे ।
पुण्य रति अब चढ़ती है, अपने मुख से यों कहन लगे ॥

दोहा

एक समय महारानी जी, पहिन गले फूलमाल ।
दृश्य देखती स्वप्न मे सुनलो उसका हाल ॥
प्रबल सिंह नभ से उतरा, गज कुम्भस्थल को दलता हुआ ।
अद्भुत लहरें चिंहाड़ शब्द, प्रवेश मेरे मुख करता हुआ ॥
जब खुली आंख महारानी की, स्वप्ने पर ध्यान जमाया है ।
करके निश्चय महाराजा पे, आकर सब हाल बताया है ॥

दोहा

हाल स्वप्न का नृप कहे, सुन रानी मम बात ।
पुत्र जन्मेगा तेरे, कटे सभी सन्ताप ॥
स्वप्न अर्थ धारण किया, रानी चतुर सुजान ।
शत्रु के सिर पग धरूं. गर्भ प्रभावे ध्यान ॥
तलवार काढ देखे मुख को, अंग तोड़ मरोड़ दिखाती है ।
सम्पूर्ण शत्रु नाश करूं, कभी ऐसा शब्द सुनाती है ॥
कभी ऐसा दिल में चाहती है, इन्द्र भूप का ताज हरूँ ।
तीन खण्ड मे आन मनाकर, अखिल भूमि का राज करूँ ॥

दोहा

पुत्र जब पैदा हुआ, बरती खुशी अपार ।
नाच रंग शोभा अधिक, खुले दान भण्डार ॥
गिरि बेल मानिन्द पुत्र निर्भय, नित्य वृद्धि पाता है ।
सर्व सुलक्षण देख देख कर, जन समूह हर्षाता है ॥
पूर्व देव भूपेन्द्र ने था, नौ माणिक्य का हार दिया ।
वह हार उठाकर राजकुंवर ने, अपने गल में डाल दिया ॥

दोहा

देख तमाशा पुत्र का, रानी खुशी अपार ।
पकड़ भूप पर ले गई, दिखलाने को हार ॥
स्वामी आभूषण गृह, खोला था इस बार ।
स्वयम् कुंवर ने हार यह लिया गले में डार ॥
है देवाधिष्ठित हार आज तक, किसे नहीं पहना गल में ।
अविनय इसकी करने पर भी, भय खाते थे सब मन में ॥
मानिन्द पूजन के रक्खा था, यह पहिन खेल रहा लीला मे ।
और नौ प्रतिबिम्ब पड़े ऐसे, जैसे कि दमक अरीसा में ॥

दोहा

छवि देख कर पुत्र की, मन में खुशी विशेष ।
दान पुण्य उत्सव करो, यह मेरा आदेश ॥
इधर कान लगा करके, अब सुनले बात कहूं रानी ।
सुमाली गया था दर्शनार्थ, मुनि ज्ञानवन्त भाषी वाणी ॥
नौ माणिक्य का हार खुशी से, स्वयम् जो बालक पहिनेगा ।
शत्रु होवें आधीन सभी, और तीन खण्ड में फैलेगा ॥

दोहा

नव प्रतिबिम्ब नौ माणिक्य, दशमा सहज सुभाय ।
पिता नाम दशमुख दिया, दशकन्धर कहलाय ॥
अबके रानी स्वप्न में देखा, देव विमान
सुत जाया तेजेश्वरी, भानुकर्ण तसु नाम ॥
अपर नाम था कुम्भ कर्ण, दिनदिन प्रति कला सवाई है ।
अब वार तीसरा पुत्री का जो, शूर्पनखा कहलाई है ।
शुक्ल जरा देखें आगे, यह कैसा रंग खिलायेगी ।
ससुर गृह और पितृ कुल, इन दोनो का नाश करायेगी ॥

दोहा

देखा चौथे स्वप्न में, सोलह कला निधान ।
ज्योतिषियो का शिरोमणि, ऐसा चन्द्र विमान ॥
जब पैदा हुआ तब देख सुलक्षण, कह राजा सुनले रानी ।
शुभ नाम विभीषण देते है, सत्यवादी है उत्तम प्राणी ॥
यह ऐसा सरल स्वभावी है, हित सर्व मात्र का चाहेगा ।
निज पर की गणना नहीं इसके, सत्यपक्ष चित्त लायेगा ॥

दोहा

एक समय दशकन्धर की, दृष्टि गगन मे जात ।
आता देख विमान एक, लगा पूछने बात ॥
वृतान्त कहो इसका माता, जो आज सामने आता है ।
मेरे आगे कोई चीज नहीं क्यो, इतनी दमक दिखाता है ॥
और मेरे मन मे आता है, विमान तोड़ चकचूर करुं ।
निज वक्षस्थल के तले दबा, इसका धड़ से सिर दूर करूं ॥

दोहा

प्रभाविक-सुनकर-वचन, रानी दिल हर्षाय ।
पूर्ववार्त्ता याद कर, हृदय गया मुर्झाय ॥
झट नेत्रों मे जल भर लाई, गद् गद् स्वर से बतलानेलगी ।
मुझ भगिनी पति वैश्रवण भूप, दशकन्धर को समझानेलगी
यह स्वाधीन है इन्द्र के, और पुण्य अतिशय छाया है ।
तुम पितामह को मार लंक गृही, राजा इसे बनाया है ॥

दोहा

घनवाहन भूपाल से, तुम पितामह पर्यन्त ।
अखंड राज्य था लंक का, अब न रहा कुछ तन्त ॥

मान माहात्म्य कहां जिन्हों की, जीते खुस जावे धरती ।
आरम्भ कहो किस गणाना मे, उलटी दुनिया निन्दा करती ॥
अब शुभ दिन वही धन्य होगा, शत्रु की शक्ति तोड़ेगा ।
तब पुत्रवती हूँ समझूंगी, सम्बन्ध लंक से जोड़ेगा ॥

दोहा

देखूंगी जब अरि को, मुझ कारागर मांह ।
तब ही आत्म प्रसन्न मम, इस दुनिया के मांह ॥
कुसुम व्योमवत् सब आशायें, हृदय मेरा जलाती हैं ।
जैसे बागड़ की प्रजाएं, सब घटा देख रह जाती है ॥
क्योंकि शत्रु शक्तिशाली, और पीठ भी जिसकी भारी है ।
जो तुमने पूछी बात मेरे, हृदय मे लगी कटारी है ॥

दोहा

माता की जब यह सुनी, हृदय विदारक बात ।
जननी के यह भाव सब, समझे तीनो भ्रात ॥
तीनों राजकुमार परस्पर, ऐसे जोश दिखाते हैं ।
और उछल गर्ज करके सब ही, माता को धीर बन्धाते हैं ।
होनहार बाल अपने, भावी कर्त्तव्य बताने लगे ।
क्षत्राणी का दूध पिया था, उसका असर दिखाने लगे ॥

दोहा

विभीषण कहे मात जी, है, क्षत्री के पूत ।
आशा तव पूर्ण करें, तो ही जान सपूत ॥
तोही जान सपूत भ्रात दशकन्धर योधा भारा ।
प्रगट होत ही भानु के, तारागण करे किनारा ॥
और साथ में कुम्भकर्ण हैं, वीर महा बलवारा ।
अष्टापद को देख केसरी, झट ही करे किनारा ॥

दौड़

मात मै पुत्र तुम्हारा, जन्म इस कुल में धारा।
गर्ज मै जब लाऊंगा, मानिन्द बिजली के कड़क
पड़ं कुम्भस्थल दल जाऊंगा ॥

दोहा

दशकन्धर कहने लगा, दे माता आदेश।
विद्या आवे साध के, शक्ति बढ़े विशेष ॥
आज्ञा ले निज मात की, पहुंचे वन मंझार।
शुद्ध तन मन कर साधली, विद्या एक हजार ॥

भानुकर्ण ने पांच लई, और चार विभीषण पाई है।
षष्ठोपवास कर शस्त्र साधा, चन्द्रहास वरदाई है ॥
क्षेम कुशल से घर आये, सब दिन २ कला सवाई है।
एक शेर दूजे काठी अब, देख मात हुलसाई है ॥

दोहा

विद्या साधन की विधि, ग्रन्थो से पहिचान।
कथन यहां पर ना किया, समझो चतुर सुजान ॥
गिरि वैताड दक्षिण श्रेणी, सुर संगीत पुर जान।
मय नरेश केतुमती, रानी कला निधान ॥
मंदोदरी कन्या थी जिसके, जैसे नल कुवेर कुवरी।
रत्नस्रवा दशकंधर सुत से, नृप ने उसकी शादी करी ॥
अब लगा पुण्य भी बढ़ने को, कोयल सम मीठी वाणी है।
शक्रेन्द्र के घर इन्द्राणी ऐसे मदोदरी रानी है ॥

दोहा

एक दिवस गये भ्रमण को, दम्पति बैठ विमान।
फिरती राजकुमारियां, एक बाग मे आन ॥

जब पड़ी नजर दशकंधर की, विमान उधर को झोक दिया ।
फिर उतर पास दो नैन मिला, कर प्रेम भाव सब पूछ लिया ॥
गिरि मेघरथ भूपालों की, पुत्री सभी कहाती थीं ।
और भ्रमण करन को सभी सहेली इसी बाग में आती थीं ॥

दोहा

काम बाण जब लगत हैं, सुध बुध दे विसराय ।
इज्जत डाले धूल में, यह है बाम स्वभाव ॥
यह मात पिता का सभी प्रेम, शीशे की लीक बना डारे ।
और शर्म धर्म को फेंक कूप मे, चित्त आवे सो कर डारे ॥
आपस में सहमत होकर, सबने वहां गन्धर्व विवाह किया ।
फिर बैठ विमान में जल्दी से, विमान का चक्कर घुमा दिया ॥

दोहा

पद्मावती के पिता को, लगी खबर जब जाय ।
क्रोधातुर राजा हुवा, दल बदल दिया चढ़ाय ॥

दोहा

यह दृश्य भयानक देख महा, पद्मावती मन में घबराई ।
तब रत्न स्रवा सुत ने सन्मुख, हो अपनी शक्ति बतलाई ॥
बिगुल बजा जब संग्रामी, तब शूरवीर ने गर्ज किया ।
शत्रु के दल में भगी पड़ी, नृप नाग फांस में जकड़ लिया ॥

दोहा

पद्मावती के कथन से, सुर सुन्दर दिया छोड़ ।
आपस में शुभ मेल कर, लिया सम्बन्ध सब जोड़ ॥
महोदय नृप था कुम्भ पुराधिप, रानी शुभ नैना वरणी ।
थी विद्युत माला पुत्री, जो कुम्भकरण को है परणी ॥

ज्योतिपुर पति वीर नरेश्वर, नन्दवती की जाई जो।
पंकजश्री कमलवर नयनी, विभीषण को व्याही वो ॥

दोहा

मंदोदरी के सुत हुआ, महावली सुख धाम।
लक्षण व्यंजन देख, शुभ मेघ नाद दिया नाम ॥
मेघवर्ण सम नयन है, दूजा सुत अभिराम।
मेघवाहन चारु कुमर, मात-पिता दिया नाम ॥
जब देखा शक्ति पूर्ण है, तब छेड़ छाड़ करवाने लगे।
श्री कुम्भकर्ण और भ्रात विभीषण, लूट लंक में पाने लगे।
फिर वैश्रमण ने भेजा दूत, सुमाली के समझाने को।
जो चाहिये मुख से माग लेवो यदि नहीं तुम्हारे खाने व ।

दोहा

राजदूत ने जा कहा, नमस्कार महाराज।
अब आज्ञा उनकी सुनो, जो मेरे सिर ताज ॥
महाराजा ने फरमाया है, यह क्षत्री कुल का धर्म नहीं।
जो लूट मार कर ले जाना, क्या आती तुमको शर्म नहीं ॥
जिस जिस वस्तु की चाहना है, ले जावो यहां कुछ कमी नहीं।
कल्याण आप का तभी तलक, जब तक रणभूमि जमी नहीं ॥

दोहा

सुनी दूत की जिस समय, रसना कटुक गम्भीर।
अर्ध चन्द्र धक्का दिया, दशकंधर बलवीर ॥
जा कायर धनदत्त को कह दे, किसको तलवार दिखाता है।
अब सावधान हो जल्दी से दशकंधर लंका आता है ॥
रणभेरी जिस समय बजी, सब शूर वीर हर्षाये
झट उसी समय जा लंका पै, अपने विमान ॥

दोहा

रण में जुट गये शूरमा, पड़ी लंक मे त्रास ।
हाहाकार करने लगे, तज जीने की आस ॥
पैदल से पैदल लड़ते है, दारू गोलो का पार नहीं ।
कही रक्त फुवारे चले सरासर, दल बल का शुम्मार नहीं ॥
शक्ति देख दशकंधर की, शस्त्र योद्धों ने डाल दिये ।
जीत लंक स्वाधीन करी, सब मात मनोरथ सार दिये ।

गाना नं० ११

(तर्ज—इस हवन कुण्ड पे रे सिया ॥)

देश अपने को हम ने रे पूर्ण स्वतन्त्र बनाया है ।
हुई पूर्ण कामना रे, हर्ष हृदय न समाया है ॥ टेक ॥
बाल पने मे जो माता ने शिक्षा हमे दई थी,
देश धर्म गुरु जन भगति शुभ हृदय समा गई थी ।
चरितार्थ हुई सबरे, खुशी का बादल छाया है ॥ १ ॥
प्रेम एकता ही दुनिया मे जीवन कहलाता,
खेद नर खर श्वान पशु तुल्य वृथा मर जाता ।
है नाम उन्ही का रे, धर्म हित सर्वस्व लाया है ॥ २ ॥
धर्म न्याय लिये जीना मरना भगवन बतलाया,
स्वर्ग अपवर्ग निर्मल होकर उसने ही पाया ।
सच्चिदानन्द पद रे सदा वीरो ने पाया है ॥ ३ ॥
शान्त वीर रस धारण कर, कर्तव्य को पहिचानो ।
शुक्ल शुद्ध व्यवहार सहित अध्यात्म को जानो ।
यह रंग विरंगी रे सभी पुदगल की माया है ॥ ४ ॥ इति ॥

चौपाई

चर्म शरीरी धनदत्त राया । सम्यक् चारित्र चित लाया ॥
शत्रु मित्र पर सम परिणाम । तप जप कर पाया सुख धाम ॥

दोहा

दशकन्धर लंका लई, पुष्पक लिया विमान ।
मात मनोरथ सिद्ध किया, पुरुषा यह प्रमाण ॥
भुवनालंकृत गज मिला, नग वैताड के मूल ।
यह भी होता रत्न इक, मन इच्छा अनुकूल ॥
अब सुनो जिक्र किष्किन्धा का, जहाँ पर हो रही लड़ाई है ।
सूर्यरज और ऋच्च सुरज, किष्किन्धी सुत बलदाई है ॥
यमराज उधर था महाबली, जहाँ युद्ध अति घनघोर हुआ ।
सूर्य ऋच्च को यमराजा ने, कारागार मे ठोस दिया ॥

दोहा

लिये सहायता के तुरत, खेचर बैठ विमान ।
रावण से आकर कहा, पहिले कर प्रणाम ॥
महाराज तुम्हारे होते हुए, किष्किन्धी नृप सुत कैद पड़े ।
अब आप सहाय करो जल्दी, मैदान मे शूरे अड़े खड़े ॥
प्रेम बड़ों मे ऐसा था, वह इनका हुक्म बजाते थे ।
और यह भी उनके लिये, कष्ट मे अपना खून बहाते थे ॥

गाना नं १२

(तर्ज—खिदमते धर्म पर)

मनुष्य ही मनुष्य के काम आवे सदा,
फर्ज अपना हो दुनिया मे तब ही अदा ॥टेक॥
किसी प्राणी पे विपदा कोई आ पड़े,
होवे शक्ति के अन्दर खबर फिर पड़े ।
अपना कर देवो उसके लिये सब फिदा ॥२॥

देश धर्म गुरु संघ सेवा करे,
वो ही दुनिया की क्या मोक्ष लक्ष्मी वरे।
पाप अष्टादशो से बचे सर्वदा ॥३॥
शुक्ल निवृत्ति की तरफ ही बढ़ो, और भावो से सर्वज्ञ वाणी पढ़ो।
हो मही लक्ष्य अपना ये ही मुद्दआ ॥४॥

दोहा

सुनते ही दशकन्धर ने, दी सेना पहुंचाय।
फिर ललकारे आप जा, छक्के दिये छुड़ाय॥
जब सुनी बात दशकन्धर है, तो रंग सभी के बिगड़ गये।
लगे भागने जान बचा कर, योद्धे रण मे बिछड़ गये॥
यह दृश्य देख यम घबराया, बस अन्त पीठ दिखलाई है।
सूर्य रक्ष के बन्ध छुड़ा, रावण ने प्रीति बढ़ाई है॥

दोहा

इन्द्र को झट दी खबर, विद्याधर ने आन।
किष्किन्धा लंका लई, दशकन्धर ने आन॥
रूप अति विकराल बना, मानो आपत्ति आई है।
अनुमान नजर ये आते है, कि सबकी आज सफाई है॥
पराजय हो यम भी आ पहुँचा, जो-जो बीता बतलाया है।
सब इन्द्र भूप को सुनते ही झट क्रोध बदन में छाया है॥

दोहा

सुनते ही सब वार्ता, लगी हृदय मे आग।
कोप गर्ज ऐसे करे, जैसे जहरी नाग॥
तोड दिये दो लोकपाल, मम इन्द्रपन में कसर पड़ी।
जा पीलूं शक्ति रावण की, जैसे घानी अन्दर ककड़ी॥

जब देखा तेज मन्त्रियों ने, सब इन्द्र को समझाने लगे।
कुछ सोच समझकर काम करो, सब द्रव्य काल बतलाने लगे ॥

दोहा

सुर सुन्दर संग्राम में, जिसने दिया हराय।
लंका किष्किन्धा लई, शक्ति बड़ी कहाय ॥

जिस कारण जा करे जग, वह काम नही अब बनना है।
जलती ज्वाला बीच, पतंगो के समान जा जलना है ॥
आपस में सहमत होकर, अन्तिम यह सबने पास किया।
सुर संगीत प्रान्त यम को देकर, वही बात को दाब दिया ॥

दोहा

ऋक्ष नगर ऋक्ष राज को, किष्किन्धासुर राज।
दे आधीन अपने किये, दिन दिन बढ़े समाज ॥

फिर गायन रंग अति होने लगे, जय जय शब्द ध्वनि न्यारी।
चतुरंगी सेना सजी गगन में, धूम विमानो की न्यारी ॥
अब लंका मे प्रवेश किया, दशकधर दान किया भारी।
दई जागीर योद्धों को, घर घर मंगल गावे नारी ॥

दोहा

सूर रज के शिरोमणि, इन्दुमालिनी नार।
बाली सुत जिसके हुआ, शूर वीर बलधार ॥
पुनरपि सुत दूजा हुआ, सुग्रीव दिया तसु नाम।
सुप्रभा हुई कन्या का, तीजे शुभ अभिराम ॥
ऋक्ष रज घर भामिनी, हरिकन्ता शुभ नाम।
नील और नल सुत हुए, सुन्दर कला निधान ॥

सुर रज ने किष्किन्धा का, बाली सुत को राज दिया।
और मन्त्री पद पर योग्य समझ, सुग्रीव कुमर को नियत किया ॥

विरक्त हुआ मन भोगों से, संयम व्रत नृप ने धारा है।
तप जप संयम आराधन कर, बस आत्म कार्य सारा है॥

दोहा

एक दिवस गया भ्रमण को, दशकंधर भूपाल।
पीछे जो भी कुछ हुवा, सुनो सभी वह हाल॥

शूर्पनखा का चाल चलन, प्रतिकूल था शुभ अबलाओं से।
और काई पैदा होती है, जैसे कि श्रेष्ठ तालाबो से॥
अन्य एक छोटी रियासत का, राजकुमर था खर दूषण।
प्रिय विलासिता को हीं जिसने, समझा था अपना भूषण॥
हुवा परस्पर मेल इन्हो का एक मर्ज के रोगी थे।
दश अन्धो मे अन्धे यह भी अशुभ कर्म के भोगी थे॥
या ले भागी या ले भागा कुछ समझे दोनो भाग गये।
या यो समझे कि एक दूसरे का करके अनुराग गये॥

दोहा

पाताल लंक में गिरि एक देख किया स्थान।
द्रोह एक पैदा किया, और जङ्गी सामान।

एक दिन लंक पाताल के, भूपति चन्द्रोदर को मार दिया।
छल बल करके खर दूषण ने, फिर राज ताज संभाल लिया॥
अनुराधा श्री महारानी जो, सभी गुणो की ज्ञाता थी।
थी धर्मरत गौरव वाली, पतिव्रता जग विख्याता थी॥

वीर ब्राध

दोहा

रानी पे आपत्ति का आकर गिरा पहाड़।
इससे बचने के लिये करने लगी विचार॥
यह दृश्य भयानक ऐसा था, योधे भी धीरज खोते थे।
प्रलय कारल भी आ पहुंचा. अनुमान ये जाहिर होते थे॥
अनुराधा ने समझ लिया, अब यहां पर रहना गलती है।
क्योंकि इस शक्ति के अगे, ना पेश हमारी चलती है॥

दोहा

बुद्धिमान् करते सदा, काम समय अनुसार।
अनुराधा ने भी किया, हितकर निजी विचार॥
नयनो से नीर बरसता था, महारानी के जो हितैषी थे।
मिल गये बहुत खर दूषण से, जो कृतघ्नी और द्वेषी थे॥
लिये सदा के पति परमेश्वर, क्षत्राणी से दूर हुआ।
और बिना गर्भ ना पुत्र कोई, होनी का ध्यान क्रूर हुवा॥
जो भी कुछ हाथ लगा रानी के, हीरे पन्ने आभूषण।
कर साहस वहां से निकल चली, निज करमो को देती दूषण॥

गाना नं १३

कर्मों के देखो सारे, कैसे है जाल जी।
कोई फिरे वन वन मे, कोई निहाल जी॥
कल क्या दृश्य था सामने, और आज मेरे क्या है।
आगे पता क्या आयेगा, मुझ पर बवाल जी॥
शरणागत आते थे, जिन्हो का आसरा करके।
हम निराधार क्या कर्मों ने, कीये पैमाल जी॥

जिस दिन मैं आई थी, बजे थे बाजे शाहाने।
यह दिन दिखलाये कर्मों ने, किया कमाल जी ॥
कहां ठाठ राजधानी का, कहां आज वन खंड है।
मैं स्वामी सेवक ही न हूँ, जीना मुहाल जी ॥
हृदय की अग्नि शान्त अब, नही होगी रोने से।
पुरुषार्थ अब करना होगा, मुझको विशाल जी ॥
पुरुषार्थ द्वारा जीव हो, कर्मो से स्वतन्त्र।
होता है सिद्ध बुद्ध अजर जहां पहुँचे ना काल जी ॥
पुरुषार्थ हीनों का नहीं अधिकार जीने का।
और पराधीन यह जिंदगानी, होगी जजाल जी ॥
पालन करूं इस बच्चे को, जो होने वाला है।
दिलवाएं हक इसका, इसे ये ही ख्याल जी ॥
ऐसी विपत्ति मनुष्य पर, आया ही करती है।
इस कर्म गति से बचा रहे, किसकी मजाल जी ॥
क्षत्री धर्म कहता सदा, गौरव पर मरना सीखें।
यश लेने की कोई शुक्ल युक्ति निकाल जी ॥

दोहा

क्षत्राणी ने हृदय मे की अंकित यह बात।
बन में जैसे सिंहनी दिन नही गिनती रात ॥
घनघोर घटा मानिन्द निश्चय, विपदा रानी पै छाई थी।
या यो समझे चीलो की न्याई, आपत्ति मण्डलाई थी ॥
पतिव्रता देवी इस कारण, नयनो से नीर बहाती थी।
अवलम्बित थी निज आशा पर, और ऐसे कहती जाती थी ॥

दोहा

अशुभ कर्म का ही हुआ, निश्चय मे कोई जोर।
किन्तु यहां व्यवहार भी, कहता है कुछ और ॥

कर्त्तव्य किया खर दूषण जो, नीति व्यवहार से बाहिर है।
अन्याय का सिर होता नीचे, यह उदाहरण जग जाहिर है॥
अन्याइयो से जो डरता है, वह भी संसार मे कायर है।
अन्याय के आगे दब जाऊं, मेरी जमीर से बाहिर है॥

आनन्द पति के साथ गया, और ठाठ-बाट सब रहने का।
कर्त्तव्य है अब इस दुःख को भी, सन्तोष के द्वारा सहने का॥
जो काल के सन्मुख लड़ता है, उसको नही काल भी गहने का।
यदि गह भी ले तो डर क्या है, जब धर्म है तन के बहने का॥
क्षत्री पैदा करने वाली, ना दुनिया में भय खाती है।
लिये धर्म के और शुभ नीति के, वह खेल जान पर जाती है।
अन्यायी क्रूर अधर्मी सब, मेढक होते बरसाती है।
या यो समझे कुछ समय लिये तारे होते प्रभाती हैं॥
न्याय तोड कर अन्यायी, जो पद अन्याय का पाते है।
ऐसे ही जो अन्याय को तोड़े सो न्यायी कहलाते हैं॥
अपना-अपना मौका है, यहाँ द्वेष की कोई बात नहीं।
दृष्टिगोचर दो शक्ति हैं, पर एक एक के साथ नहीं॥

दोहा

प्रतिपक्षी है पुण्य का, पाप प्रत्यक्ष कहाय।
जो मार्ग सत्य धर्म का, अधर्म का मग नाय॥

दिवस किस तरह शुभ परमाणु लेकर सम्मुख आता है।
प्रतिकूल अधेरा रजनी का, कैसा प्रभाव जमाता है॥
दुर्जन सज्जन का फर्क यही धनी और निर्धनी मे है।
जो अन्तर साता असाता मे वही गुणी और निर्गुणी मे है॥
जड चेतन कोई चीज नही जिसका कोई प्रतिपक्षी ना हो।
वह काम ठीक बनता ही नही, जिस काम मे दिलचस्पी नाहो॥

इस गिरितुङ्ग पर चढ़कर मैं निज नगरी ओर निहार तो लूं ।
कुछ पवन व्योम की सेवन कर थोड़ा सा और विचार तो लूं ॥

दोहा

महारानी ने जब लखा अपनी नगरी ओर ।
घाव नमकवत् और भी, बढ़ा महा दुख घोर ॥

पतिव्रता ध्यान पति का कर, हो निश्चय हाल बिहाल गई ।
किन्तु अपने आत्मबल से इस मन को तुरंत संभाल गई ॥
अरुणा वर्त की लहरो के सम, मोह ममता को टाल गई ।
थी आशा वादिन आशा कर, प्रतिज्ञा और कमाल गई ॥

गाना नं० १४

(फंसे जो पाप में प्राणी वही ना)

प्रतिज्ञा आज करती हूँ वही करके दिखाऊगी ।
राज का ताज अपने उदर के सुत को दिलाऊंगी ॥१॥
तरक्की धर्म की व देश की नहीं होती है रोने से ।
धैर्य दिल को दे करके किसी जंगल मे जाऊंगी ॥२॥
सदा अन्याय को तोड़े वही न्यायी कहाते है ।
करूं उद्यम वही शोभन सभी साधन जुटाऊंगी ॥३॥
यह प्राणी मोक्ष लेता है तो फिर दुनिया की वस्तु क्या ।
शुक्ल मै आशा वादिन हूँ तो फल आशा के पाऊंगी ॥४॥

दोहा

त्याग गये मुझको, मेरे प्राण पति आधार ।
अब निरर्थ मेरे लिये यह सोलह शृङ्गार ॥
कर्त्तव्य सभी अपना मुझको, पालन अवश्य करना होगा ।
व्यवहार यही है दुनिया का, निश्चय एक दिन मरना होगा ॥

था वास एक दिन वस्ती का, अब जंगल मे रहना होगा।
प्रतिकूल विपत्ति का समूह, अपने सिर पर सहना होगा॥
सदाचार सादापन ही, यह अब से मेरा भूषण है।
समयानुसार पुरुषार्थ, करने मे ना कोई दूषण है॥
आशा वादिन हूँ निश्चय, आशा मेरी फल लायेगी।
पाप उदय खुस गई सम्पत्ति, पुण्य उदय मिल जायेगी॥
जो नाव भँवर में पड़ी हुई, पुरुषार्थ से तिर जायेगी।
सर्वस्व लगा कर पति संपत्ति, हरी भरी लहरायेगी॥

दोहा

ससुर भूमि गृह नगर को, करती हूँ प्रणाम।
अवसर पाकर हर्ष से, फेर मिलूंगी आन॥

है पास पति का रत्न मेरे, बाकी सम्पत्ति का फिकर नहीं।
इस पौदे की रक्षा के बिन, इस समय जबां पर जिकर नहीं॥
क्षत्री की हूँ सुता वीर योद्धा, वर की मैं रानी हूँ।
और चण्डी हूं शत्रु के लिये, निज सुत के लिये भवानी हूँ॥
पुत्र को राज दिलाऊंगी, तब ही माता कहलाऊंगी।
अथवा समझूंगी बाँझ, या यों कहिये निज कूख लजाऊंगी॥

दोहा

तज अन्यो का आसरा, निज पर हो स्वालम्ब।
दुखित हुई देती कभी, कर्मों को उपालम्भ॥

किन्तु कभी निराश होकर, भी उत्साह नहीं छोड़ा।
आपत्ति हजारों आने पर भी, लक्ष्य से मुख को नहीं मोड़ा॥
जिसकी दिल मे आशा थी, वह आशा एक दिन फल आई।
मास सवा नौ के होते ही, सुत की सूरत नजर आई॥

गाना नं० १५

तर्ज—(कौन कहता है कि जालिम को सजा)

पुण्यशाली का सदा गौरव बढ़े संसार में।
उल्टा भी सीधा काम हो, सरकार में दरबार में ॥१॥
जहाँ कहीं भी हाथ डालें, सिद्ध कार्य हो सभी।
देव भी आकर झुकें सिद्धहस्त राज व्यापार में ॥२॥
पुण्य चिन्तामणि बिना, चिन्तामणि मिलता नही।
अशेष गुण सब ही समाते है सुखी दरबार में ॥३॥
धर्म ध्यानी शुक्ल ध्यानी, हो शुक्ल परमारथी।
तल्लीन आत्म मे सदा हो लक्ष सिद्ध निराकार में ॥४॥इति॥

बस फिर क्या अनुराधा मन में, फूली नहीं समाती थी।
मुख रूप चन्द्रमा देख पुत्र का, दृष्टि नहीं हटाती थी ॥
कुछ पूर्व वार्ता स्मरण कर, नयनो से जल भर लाई है।
फिर देख सुकर्मा दासी को, यो कोमल गिरा सुनाई है ॥

दोहा

आज सुकर्मा होगये, उदय कर्म सुखकार।
किन्तु एक मेरे हुआ, दिल में दुःख अपार ॥

यदि आज महल में सुत होता, तो तेरी आशा फल जाती।
राजा को देती सन्देशा, तू अतुल द्रव्य वहां से पाती ॥
होता मस्तक पर तिलक तेरे, दासीपन से छुट्टी होती।
उत्सव मे दे दे दान बीज मै, क्या-क्या सुकृत का बोती ॥
रोना आता मुझे लाभ से, वंचित है सेवक मेरे।
अय कर्म मुझे कुछ पता नहीं, अब कौन इरादे है तेरे ॥
इस समय तो जो कुछ कर सकती, सो ही मैंने करना है।
कम से कम अब तीन युगो तक, इसी ढंग से फिरना है ॥

बाकी मेरे तन के गहने जो है डिब्बे मे भरे हुए।
वह सभी आज से है तेरे, हीरे पन्नो से जड़े हुए॥
दासीपन का शब्द आज से, कहना सदा भुलाऊंगी।
अब समय समय पर कारणबस, सम्मान से तुम्हे बुलाऊंगी॥
कुल का यही दीपक है, और यही एक निशानी है।
प्रतीत हुआ लक्षणो से भी, लम्बी इसकी जिन्दगानी है॥
पालन इसका करे फेर, निश्चय आशा पूरी होगी।
पुत्रवती कहाऊंगी, जिस दिन चिन्ता चूर्ण होगी॥
उस दिन की मुझे प्रतीक्षा है, जिस दिनको यह दिल चाहता है।
उत्साहियो के उत्साहो को, लख शंक काल भी खाता है॥
तुझ पर ही विश्वास मुझे, तू ही मेरी सहकारण है।
तेरा मेरा देश का होगा, इस से दुःख निवारण है॥

दोहा (सुकर्मा)

ग्रहण किया नित्य आपका, अन्न नमक सब चीज।
जिस के कारण आपके, अर्पण है यह कनीज॥

शाबास तुझे अय क्षत्राणी, अभ्यास यही होना चाहिये।
मरना तो सबने एक दिन है पर गौरव ना खोना चाहिये॥
और जहां तक हो सुकृत का, बीज सदा बोना चाहिये।
अज्ञान रूप मल को जिनवाणी, वारी से धोना चाहिये॥

गाना न० १६

(तर्ज—आज इनकी दुर्दशा हा)

यहां दान किसको देके निज हृदय खिलाऊं किसतरह।
निग्रन्थ गुरु मिलता नही, तब व्रत फलाऊं किस तरह॥
सम्यक्त्वी यहॉ पर नही, भूखा न कोई अनाथ है।
उपकार कुछ कर से किये विन, आज खाऊं किस तरह।

धार्मिक संस्थाओं की सेवा मैं कैसे कर सकूं ।
साधन नहीं अनकूल फिर, सेवा बजाऊं किस तरह ॥
शुक्ल बस एक भावना के, और कर सकते है क्या ?
भोगे बिन कृत कर्म से, छुटकारा पाऊं किस तरह ॥

दोहा

एक जान हो परस्पर, लगे सभी निज काम ।
सिंहनी वत् निश्चित किया, पर्वत को निज धाम ॥
नाम आध रख दिया और, लगी निशदिन पोषण पालन को ॥
या यों कहिये लगी शूर, वीरता के सांचे मे ढालन को ।
देश धर्म सेवा रूपी शिक्षा, जल नित्य सींचती है ।
और क्षत्रापन की चतुराईसे, शत्रु का दिल भी खैचती है ॥

दोहा

दिन प्रतिदिन बढ़ने लगा, होनहार सुकुमार ।
देख पुत्र के तेज को, माता है बलिहार ॥
ग्रह गणपति के समान, यह भी है चन्द्रमा चढ़ा हुआ ।
शत्रु की हानि राज ताज ले, चिह्न तेज वह पड़ा हुवा ॥
आशा मेरी पूर्ण होती यदि, राज महल अन्दर होती ।
कह नहीं सकती जिह्वा से, मै क्या-क्या सुकृत यश बोती ॥

दोहा (दासी)

आशा वादिन आशा रख, दिल मे समता धार ।
कभी महा प्रकाश हो, कभी कभी अन्धकार ॥
कभी रंक और कभी राव, यह दशा कर्म दिखलाते हैं ।
अशुभ कर्म के उदय होत ही, राज पाट खुस जाते है ॥
शुभ कर्मों के आने से, सब ही आकर मिल जाते हैं ।
करे मूल उद्यम इसका, जो जरा नहीं घबराते है ॥

दोहा

ठीक बहिन निज कर्म से, है सुख दुःख संयोग ।
कर्त्तव्य वही करना मुझे, जो होता है योग्य ॥

सम्पत्ति पति की पास पुत्र को, नीतिकला सिखाऊंगी ।
पाताल लंक का राज्य करे, यह देख देख सुख पाऊंगी ॥
अन्याय को नीचा दिखलावे, ऐसे साँचे मे ढालूंगी ।
कर्त्तव्य जो होता जननी का, सम्पूर्ण इसको पालूंगी ॥
माता द्वारा वीर व्राध की, दिन दिन कला सवाई है ।
अब शूर्पनखा की खबर, उधर दशकन्धर ने सुन पाई है ॥

दोहा

इधर उधर को चलदिये, योद्धा करन तलाश ।
आखिर मुर्दा मिल गया, खर दूषण के पास ॥
क्रोधातुर हो भूप ने, दीना बिगुल बजाय ।
अस्त्र शस्त्र सज खडे, योद्धा सन्मुख आय ॥
दिव्य दृष्टि मन्दोदरी थी लाखो में एक ।
रावण को कहने लगी, करने को सुविवेक ॥

दोहा (मन्दोदरी)

बुद्धिमत्ता है इसीमे, करे सोच कर काम ।
सोच से मुख लाली रहे, सोच बिना मुखश्याम ॥

प्राणनाथ यह तो बतलावो, किस पर कटक चढ़ाने लगे ।
जिसको जाने कुछ ही जने, तुम दुनियां बतलाने लगे ॥
बात जो होवे निन्दा की, बस उसे दबा देना चाहिये ।
अपने कर्त्तव्यों पर भी, कुछ ध्यान लगा लेना चाहिये ॥

गान नं० १७

(तर्ज—पाप का परिणाम प्राणी)

कर्म करने से प्रथम कुछ सोच करना चाहिये ।
लाभ हानि देख कर के, पांव भरना चाहिये ॥१॥
अपनी कमजोरी व बदनामी, छिपाना ही श्रेय ।
राजनीति पर भी तो, कुछ ध्यान धरना चाहिये ॥२॥
खुदकी जांघ उघाड़ने से, शर्म खुद को आयेगी ।
गौरव हीनो को सदा फिर, डूब मरना चाहिये ॥३॥
जिस को चाहती है वह खुद, संयोग उससे ही करो ।
गम्भीरता का शुक्ल शरण, सबको लेना चाहिये ॥४॥

दोहा

काम स्वयम् राजा करे, वही प्रजामन भाय ।
आप ही रीत चला दई, अब क्यो मन घबराय ॥

कहो क्या कटक चढ़ा कर के, भगिनी को रांड बनावोगे ।
या और पति बनवा करके, काला मुंह आप करावोगे ॥
जहाँ परणावोगे वहाँ पर वह, तानों के दुख उठायेगी ।
जो भाग गई थी वही बहिन, रावण की यह कहलायेगी ॥

दोहा

रहस्य भरी जब यह सुनी, बात अति सुखकार ।
ठीक सभी बुद्धि हुई, सत्य कहा यह नार ॥

प्रेम भाव से खर दूषण संग, व्यावहारिक फिर विवाह किया ।
स्वाधीन बना करके अपने, पाताल लंक का राज दिया ॥
अब हाल सुनो किष्किन्धा का, जहां बाली नृप बल धारी है ।
दशकन्धर को इख राज देन को, साफ हुआ इन्कारी है ॥

५—बालि-रावण विग्रह

दोहा

इस कारण से दशकन्धर ने, किया एक दर्बार।
मन्त्री संग मिल बैठकर, करने लगा विचार ॥

किस कारण बाली हुआ, हमसे आज विरुद्ध।
क्या उससे अब चाहिये, हमको करना युद्ध ॥
अब कहो सोच करके सबही, बाली से क्या चाहिये करना।
सब नियम उप नियम तोड़ दिये, और छोड़ दई मेरी शरणा ॥
क्या दूत पठा करके पहले, राजी से समझाना चाहिये।
रण तूर बजा या मूर्खता का। स्वाद चखा देना चाहिये ॥

दोहा (भानुकर्ण)

कृतघ्नता की बात है, उसकी सब महाराज।
चरणी गिरते थे बड़े, बाली अकड़ा आज ॥
वह दिन भूल गया बाली, जब बड़े कैद मे सड़ते थे।
जहां गिरा पसीना उनका कुछ वहां खून हमारे पड़ते थे ॥
आपने बन्ध छुड़ाये थे, और किष्किन्धा का राज्य दिया।
ऐसे का मान करो मर्दन, और जिसने उसका साथ किया ॥

दोहा

विभीषण कहने लगा, सुनो जरा कर ध्यान।
बाली कोई हलवा नहीं, शूर वीर बलवान ॥
मामूली कोई चीज नही, और विचार अपना रखता है।
रही बात बड़ो तक की, कोई जाकर समझा सकता है ॥
पहिले दूत भेज करके, इस बात का रहस्य प्रतीत करो।
फिर बाद मे जैसा हो विचार, वैसा सब कार्य नियत करो ॥

गाना नं० १८

(तर्ज—कौन कहता है कि जालिम को सजा मिलती नहीं)

काल चक्कर के सदा अनुकूल रहना चाहिये ।
जैसी अवस्था हो उसे, धैर्य से सहना चाहिये ।१।
चांद पर देखो अवस्था, तीस दिन मे तीस है ।
या वेल सागर की तरह, हमको भी बहना चाहिये ।२।
देखले प्रत्यक्ष सूर्य की अवस्था तीन है ।
वर्ष की ऋतु तीन या छह, होती कहना चाहिये ।३।
कोई चढ़ता हटता ढलता, नियम है संसार का ।
बुद्धिमत्ता यही शुक्ल किसमत का लहना चाहिये ।४।

दोहा

विभीषण की बात मे मिल गई सबकी बात ।
दूत गया बाली निकट, अगले दिन प्रभात ॥
नमस्कार मम लीजिए, खड़ा सामने दास ।
आगे श्री दशकन्धर का, सुनो हुकम जो खास ॥
महाराजा ने प्रेम भाव से खबर यही पहुंचाई है ।
कीर्ति धवल और श्रीकंठ से, परम्परा चली आई है ॥
ध्यान लगा कर देखोगे तो, सभी पता लग जायेगा ।
यह वानर द्वीप तीन सौ जोजन, सभी हमारा पायेगा ॥

दोहा

मान नहीं अब कीजिये, यही बात का सार ।
या भक्ति हृदय धरो, या रण हो तैयार ॥
सुनकर सारी वार्ता, बोले बाली फेर ।
दशकन्धर से जा कहो, क्यो करते हो देर ॥
क्यो करते हो देर यहां, नंगा है तेग दुधारा
रण भूमि मे हाथ रंगूंगा, कर कर ढेर तुम्हारा ॥

देव गुरु को छोड़ नहीं, नमने का शीश हमारा।
तुम्हें आज तक मिला नहीं, कोई शूर वीर बलवारा ॥

दौड़

बड़ो का काम बडो के, साथ में गया उन्हो के।
किस लिये घबराता है, आ रण भूमि मे निकल यदि परभव जाना चाहता है।

दोहा

सुनी बात जब दूत से, जल बल हो गया ढेर।
जंगी बिगुल बजा दई, तनिक न लाई देर ॥
तैयार हुए सब शूरमा, बड़े बड़े बलवीर।
धावा बोल के चल दिये, गर्ज रहे रणधीर ॥
दोनो ओर सजी सेना, आ धूल गगन मे छाई है।
आकाश मे रहे विमान घूम, जब अनी से अनी मिलाई है ॥
मारु बाजा बजा रहे, धौंसे पर चोट जमाई है।
ब्रह्माण्ड लगा जब फटने को, तो मानो प्रलय आई है ॥

दोहा

उभय केसरी जब चढ़े, काँपन लगी जमीन।
लगे सभी जन तड़फने, जैसे जल बिन मीन ॥
दोनो पक्षो के वीर बैठ, लगे सोचन मौका जाता है।
लाखो वर्षो का मेल जोल, अब छिन्न भिन्न हुआ चाहता है ॥
कोई कारण नजर नहीं आता, जिस पर यह इतना रगड़ा है।
नमस्कार या भेट जरा सी, बस मामूली झगड़ा है ॥

दोहा

सुग्रीव कहे निज सभा को, रहस्य बताऊं एक।
लंका वाले यदि मानले, रहे हमारी टेक ॥

रहे हमारी टेक उन्हे, तुम इस नीति पर लाओ।
बाकी सेना हटा बाली, रावण का युद्ध करावो॥
बाली भग करे शक्ति रावण की निश्चय लावो।
सभी सभासद् मेल परस्पर, यही नियत करवावो॥

दौड़

क्योंकि सेना रावण की, नही काबू आवन की।
यही एक ढंग निराला, अपना सब कुछ बचे करो शत्रु का ही मुख काला॥

गाना नं० १६

(तर्ज—मुसाफिर क्यों पड़ा सोता)

विग्रह मे शोभन फल कहो कब किसने पाया है।
खोलकर देखलो इतिहास, सबने सिर धुनाया है।१।
भरत बाहुबली का जंग, ठना था भाई भाई मे।
वही झगड़ा यहां पर है, कर्म चक्कर से आया है।२।
फैसला जो हुआ था वहां, वही करना यहां चाहिये।
बचावो देश जन धन को, समझ मे ऐसा आया है।३।
नमे ना एक जब तक ये नहीं झगड़ा खतम होगा।
शुक्ल पीछे जो करना, करना वह पहले बताया है।४।

दोहा

सभी के मन मे बस गये, रहस्य भरे यह भाव।
सभा समय करने लगे, कभी उतार चढ़ाव॥
प्रति पालक हैं सभी के, दोनो ये सिरताज।
किसके हम सहायक बने, किससे होवे नाराज॥
झगड़ा आपस मे दोनो का, हम निष्कारण क्यो पक्ष करें।
अन्त मे एक ने नमना है, फिर लाखो जन क्यो फंस के मरे॥

दोनों ही को लड़ने दो, जो हारेगा नम जावेगा।
देश प्रेम और राजसान, क्या सब ही कुछ बच जावेगा॥

दोहा

सर्व सम्मति से लिया, यही नियत कराय।
रण भूमि में भूपति, दोनों दिये जुटाय॥

उतर पड़े रणधीर शूरमा, दोनों ही थे निडर बड़े।
गर्ज ध्वनि घनघोर घटा से, जैसे बिजली कड़क पड़े॥
लगे मेदिनी थर्राने, अमोघ शस्त्र जब आन पड़े।
अग्नि बाण कही धुन्ध बाण, विमान गगन में आय अड़े॥

दोहा

दशकन्धर घबरा गया, देख शक्ति तत्काल।
समझ गया बाली नहीं, है मेरा यह काल॥

गिरा देख मन रावण का, बाली ने अति कमाल किया।
पकड़ हाथ चहूं ओर घुमाकर, धरती ऊपर पटक दिया॥
सुग्रीवादिक ने बाली से, रावण का पीछा छुड़वाया।
हो शर्म सार शर्मिन्दा सा, झट लंका को वापिस आया॥

दोहा

नीचे ग्रीवा हो गई, मलते रह गये हाथ
सोचा था कुछ और ही, और हो गई बात॥
बाली नृप का तेज बल, रावण पर गया छाय।
रावण का जो घमण्ड था, पल में दिया गमाय॥

गाना नं० २०

(तर्ज—फंसे दुनिया में जो प्राणी, सदा नाशाद होता है।)
औरो के दमने से विजय कब किसने पाई है।

कर्म मल के वसमे ये आत्मा, भ्रम ने सताई है ॥ १ ॥
नर्क तिर्यच और मानव, स्वर्ग इन चारों गतियों में—
मिले पुण्य पाप से ऊंची गति या नीचताई है ॥ २ ॥
कभी चक्री व वासुदेव—इन्द्र पदवी है पाता—
चौरासी चक्कर मे फिरता, मिलें साधन दुखदाई है ॥ ३ ॥
कभी ये रंक से बन राव, अन्धा मान मे भूले ।
सताकर और को गरदन कभी अपनी कटाई है ॥ ४ ॥
राग और द्वेष क्यो करना ये शत्रु आत्मा के है—
श्री सर्वज्ञ की वाणी सदा सबको सुखदाई है ॥ ५ ॥
क्या हुवा मैंने सभी दुनिया विजय करली—
वही योधा शुक्ल जिसने, विजय कर्मों से पाई है ॥ ६ ॥

—***—

विरक्त वाली

चौपाई

बाली का दिल हुवा वैरागी । तप जप करने की लव लागी ॥
यह दुनियां सब धुन्द पसारा । फंसे जीव मकड़ी जिम जाला ॥
राज ताज सुग्रीव को दीना । ध्यान शुक्ल संयम रस लीना ॥
लब्धि धार हुए मुनि राई । चरणी गिरे देवन पति आई ॥
अष्टापद पर्वत पर आये । ध्यान अडिग खड़े मुनि लाए ॥
दुनिया समझी कूड कहानी । आत्म सम समझे सब प्राणी ॥

गाना नं० २ १

(तर्ज—दुनियां में बाबा क्या है भरोसा इस दम का ।)
दुनिया मे प्राणी क्या है भरोसा वैभव का । टेक ।
आज कहां है काल कहां है । रहना नहीं तो राज कहां हैं—
महल खजाना साज कहां है । बने भस्म तन सब का रे ॥१॥

पर्याप्त अपर्याप्त चौदु गति आठ का फेरा
अस्थिर चौरासी का डेरा। मोक्ष अंक थिर नवका रे ॥२॥
दुनिया शहर सराय पंथ है, आवागमन बसेरा—
त्यागो मिथ्या भ्रम अंधेरा। फिकर करो नर भवका रे ॥३॥
धर्म शुक्ल निवृत्ति भाव तप, भोजन है आत्म का—
बाकी भाड़ा पुद्गल तन का, खाना गेहूं जब का रे ॥४॥

दोहा

राज ताज सुग्रीव ले दीर्घ विचारे ताम।
शुभ विचार सुख रूप है, उलट सोच मुख श्याम ॥
अब वह शक्ति कहां मुझ मे, जो बाली वीर नरेश मे थी।
अपमान किया रावण का, फिर भी इज्जत रही देश मे थी ॥
सुप्रभा शुभ पुत्री का, दशकन्धर से विवाह किया।
प्रेम भाव सब पूर्ववत्, सुग्रीव नरेश ने जोड़ लिया ॥

दोहा

नित्या लोकज पुर भला, नित्या लोक नरेश ॥
रत्नावली कन्या अति, रूप कला सुविशेष ॥
पुष्पक बैठ विमान मे, लगा उधर को जान।
नग अष्टापद आयके, अटका तुरत विमान ॥
जब दृष्टि पसारी नीचे को, तो मुनि ध्यान में खड़ा हुवा।
मुख पर मुख पति शोभरही, जैसे चन्द्रमा चढ़ा हुवा।
दो भुजा लटक रही नीचे को, निर्भय वनमे जिम शेर खड़ा।
देख मुनि को दशकन्धर, झट क्रोधानल मे भबक पड़ा।

दोहा

दशकन्धर नृप सोचता, यह बाली मुनिराय।
शत्रु से अपना अभी, बदला लेऊँ चुकाय ॥

तप जप से निर्बल है शरीर, यह सोच सामने आया है।
तेज प्रताप देख मुनिवर का, मन मे अति घबराया है॥
फिर सोचा शिला उखाड़ूँ मै, और इसको नीचे दे मारूं।
परभव यह स्वयं सिधारेगा, मै अपना बदला ले डारूं॥

दोहा

दशकन्धर निज शीश से, शिला उठाई आन।
कपन सुन मुनिराज ने, देखा लाकर ध्यान॥

उपयोग लगा देखा दशकन्धर, मुझको मारने आया है।
तब पांव से जोर शिला पर दे, भूपाल का शीश दबाया है॥
जब रोया और चिल्लाया तो, बाली ने चरण हटाय लिया॥
आ गिरा शरण माफी मांगी, तब मुनिवर ने यो कथन किया।
क्षत्री होकर के रोया तू, एक दाब जरासी आने पर।
इस कारण रोवण नाम तेरा, है दिया आजसे हमने धर॥
नृप बार बार चरण गिरता, बाली मुनि का गुण ग्राम किया।
इतनं मे देव धरणेन्द्र ने आ मुनिवर को प्रणाम किया॥

दोहा

सेवा करता मुनि की, जब देखा रावण वीर।
अमोघ विजय शक्ति दई, तोफा इक अक्सीर॥

अमोघ विजय शक्ति पाकर, रावण खुश हो उठ धाया है।
कहे तीन खण्ड के साधन को, यह शस्त्र अद्भूत पाया है॥
इन्द्र निज स्थान गया, मुनि निर्मल ध्यान लगाय लिया।
दस विध का धर्म आराधन करके, अक्षय मोक्ष पद पाय लिया॥

तारा

दोहा

गिरी वैताड विशेष ये, ज्योयिपुर वर नाम ।
विद्याधर था ज्वलनसिह, वहां राजा अभिराम ॥
रानी जिसके श्रीमती तारा सुता प्रधान ।
चौसठ कला प्रवीण थी, रूपवती गुण खान ॥
चित्रांग नाम एक अन्य नरेश्वर, सहसगति सुत जिसका था ।
विमान चढी तारा को देखकर, मोहित चित्त हुवा उसका था ॥
चारित्र मोहिनी कर्म उदय, ना अपना आप संभाल सका ।
प्रमत्त हुवा लगा कहन मित्र से, ना मौके को टाल सका ॥

गाना नं० २२

(तर्ज—पहिले ना स्वार्थी का इतबार किया होता)
मुझ बे गुनाह के हृदय किसने कटार मारा—
हुये टुकड़े टुकड़े तन के । और जिगर पारा पारा ॥१॥
ऐसा नसा पिलाया शुद्ध बुद्ध सभी भुलाई—
किस वैद्य को दिखाऊं । मेटे जो दुख सारा ॥२॥
माला रटूंगा तेरी तल्लीन होके अब मै—
दुनियाँ मे जिन्दगी का, तू ही मेरा सहारा ॥४॥
सब हेच तेरे सम्मुख, ये राज क्या खजाना ।
शिक्षा शुक्ल किसी की मुझ को नही गवांरा ॥४॥
सर्वस्व करूं न्यौछावर । जैसे भी तेरी खातिर—
कैसे भी करके तुझ को मै पाऊंगा मझ्पारा ॥५॥

दोहा

मित्र सुमन ये कौन थी, मुझे मार गई तीर ।
नस नस मे होने लगी, अति असह्य पीर ॥

क्या विजली का टुकड़ा था, वह या रवि किरण गई आकरके।
ना जाने कहां वह लोप हुई, एक चोट हृदय पर ला करके ॥
वह रूपवती चित्त चोर मेरी, सुध बुध सारी बिसराय गई ।
कोई यत्न करो मिलने का उसे, वह मन को मेरे चुराय गई ।
दुखिया का दर्दी तेरे सिवा, अय मित्र नजर आता ही नही ।
दिल खोल दिखाऊं जिसे अपना, वह चंद्र नजर आता ही नहीं ॥

दोहा

हाल मित्र ने सब कहा, जो था पता निशान ।
करी याचना भूप से, वही ध्वनि वही तान ॥

टेवा मगवा कर ज्वलनसिंह ने, ज्योतिषी को दिखलाया है ।
स्वल्पायु है सहस गति की, गणितानुसार बतलाया है ॥
तब ज्वलनसिंह ने पुत्री का, सुग्रीव से नाता जोड़ दिया ।
और दान दिया दिल खोल, भूपको हाथ जोड़कर विदा किया ॥
पता लगा जब सहस गति को, दुख सागर मे लीन हुआ ।
सोच विचार अनेक किये, पर आर्तध्यानी दीन हुवा ।

दोहा

तारा के पैदा हुए, शूर वीर सुत दोय ।
जयानन्द अङ्गद भला, बेली सम फल जोय ॥

सहस गति ने उधर रातदिन, सोच के बहुत उपाय किया ।
रूप परिवर्तन विद्या के साधन में झट ध्यान दिया ॥
इधर लगा वह साधन में, अब दशकंधर क्या चाहता है ।
सर्व देश साधन कारण, दल बल विमान सजाता है ॥

—o—o—

रावण दिग्विजय

दोहा

समय देख सुग्रीव ने, रावण के हितकार।
अपनी सेना को किया, कूच के लिये तैयार॥

रावण और सुग्रीव सहित, सेना ले सज धज हुए रवां।
पाताल लंक जाने का दिल में, पूरा कर लिया इतमिनां॥
पता लगा जब खर दूषण को, लिये स्वागत के पहुंच गये।
भेंट हुई आपस में जिस दम, प्रेम के बादल झूम रहे।

दोहा

नदी नर्मदा के निकट, जाकर किया पड़ाव।
सभासदो के बीच मे, बैठा रावण राव॥

तत्काल चढ़ा जल ऊपर को, जा सेतु से टकराया है।
निष्कारण क्यो चढ़ा आज, जल इसका भेद न पाया है॥
फिर दिया हुक्म दशकन्धर ने, इसका कारण मालूम करो।
यदि छोड़ा है किसी शत्रु ने तो, उस दुर्जन का मान हरो॥

दोहा

बैठ विमान में चल दिये, देखा जाकर हाल।
दशकन्धर को आनकर, बतलाया तत्काल॥
अद्भुत है रचना बनी, हुवा अनुपम काम।
या यो कहिये भूमि पर, उतरा है सुर धाम॥
महाराज यहाँ से बड़ी दूर, एक देश बड़ा लासानी है।
सहस्रांशु नृप तेज रविवत्, महिष्मती रजधानी है॥
बहुत भूप सेवा करते है, सहस्र एक सुन्दर नारी।
प्रेम हेतु जल क्रीड़ा के, उसने रोका था यह पानी॥

करें कहां तक वर्णन वहां का, समझ नहीं कुछ आता है।
क्या वही स्वर्ग प्रत्येक कवि, दे उदाहरण कथ गाता है ॥
वहां नदी सरोवर के मानिन्द, है चारों ओर बना रक्खी।
लम्बी और चौड़ी शोभनीक, नौका है उस पर ला रक्खी ॥
दोनों ओर बने सेतु, कोई खम्भा जिनके मध्य नहीं।
जिस दम कपाट भिड़ जाते हैं, तो समझो और संबंध नहीं ॥
मध्योदक भवन बने अद्भुत, सुख पुण्य योग से पाया है।
अभी थोडे फट्टे खोल दिये, जिस कारण यह जल आया है ॥

गाना नं० २३

तर्ज—(पहिले न स्वार्थी का इतबार किया होता)

दुनिया में एक पानी है स्वर्ग की निशानी।
करते किलोल आके सहस्रांशु राजा रानी ॥१॥
पानी जहां नहीं है किस काम की वह भूमि।
किन्तु ये सर्व गुण की है खान राजधानी ॥२॥
वहां की कला व कौशल वर्णन करे तो कैसे।
एक एक से है बढ़ कर दीखें वहां विज्ञानी ॥३॥
वास्तव में देखा जावे तो बात भी सही है।
संसार उनके सन्मुख लगता पशु अज्ञानी ॥४॥
अप-अपने इष्ट में हैं तल्लीन रात दिन वह।
कैसे शुक्ल बतावें गौरव की सब कहानी ॥५॥

दोहा

सुनते ही दशकन्धर दी, रणभेरी बजवाय।
दल बल सबल विमान से, घेरा डाला जाय ॥
पहिले दूत पठा रावण ने, नृप को खबर पहुंचाई झट।
या भक्ति स्वीकार करो, या हमसे करो लड़ाई झट ॥

चढ़ी फौज लड़ने के लिये, आपस मे शस्त्र चलाने लगे।
और कई हुए रण भेट शूरमा, पीठ दिखाकर कई भगे॥
लिया बांध रावण ने नृप को, उल्टा बन्ध चढ़ाया है।
तब जंघाचारी महा मुनि ने, आकर के छुड़वाया है॥
यह पिता सहस्रांशु नृप का, सतबाहु नाम मुनीश्वर था।
जिन नाशवान दुनिया को, तजकर पकड़ा मारग संयम का॥

दोहा

सहस्रांशु महाराजा ने, दिल मे किया विचार।
तज झंझट संसार का, लेवे संयम धार॥

सत्यशरण लिया जिनवर का, आधीन न जो किसी ताज का है।
दुनियां का सुख अनित्य सभी, नित्य परम पद राज का है॥
है याद मुझे वह समय, मेरे एक मित्र ने था वचन दिया।
अनरण नरेश ने उसी दीक्षा का, इकरार मेरे था साथ किया।

दोहा

अनरण नरेश को उसी दम, दीनी खबर पहुंचाय।
समझ लिया कि हेच है, दुनिया का उत्साह॥
अनरण नृप भी सोचता है मेरा संकेत।
इससे बढ करके नहीं, दुनियां मे कोई हेत॥

अनरण भूपने उसी समय, दशरथ को राज्य सभाल दिया।
दई पुरी अयोध्या छोड़, संग मित्र के संयम धार लिया॥
उधर सहस्रांशु सुत के, सिर ताज दिया दशकन्धर ने।
और उसी समय उसको, अपने आधीन किया दशकन्धर ने॥

दोहा

नारद घबराया हुवा, आया रावण पास।
आदर पा भूपाल से, कहा मुनि ने भाप॥

आपके होते अनर्थ हो, फिर यही तो है दुख बड़ा ।
रहे यज्ञ में फूंक पशु, कई दुष्ट अनार्य खोद गढा ॥
सद् उपदेश दिया तो, अग्निहोत्री ने मारा मुझको ।
चल रक्षा करो अनाथो की, संग ले जाने आया तुमको ॥

चौपाई

राज नगर और मरुत नरेश, मिथ्या दृष्टि अधर्म विशेष ।
कुगुरु जन का अति भरमाया, पशुवध महा यज्ञ रचाया ॥
इतनी सुन दशकन्धर धाये, पशुओ के जा प्राण बचाये ॥
यज्ञ विध्वंस किया तब सारा, याज्ञिकों के मन रोष अपारा ।
आत्मरूपी यज्ञ रचाओ, द्वादश तप विधि अग्नि जलावो ।
अशुभ कर्म सब दग्ध बनाओ, यो कहे नारद परम पद पावो ॥

दोहा

मरुत भूप की पुत्री थी, कनकप्रभागुण खान ।
रावण संग विवाह दई, साथ मान सन्मान ॥
पा करके सन्मान अधिक मथुरा को हुवे रवाना ।
था मधु वहां का भूप ठाठ, जिसका था अधिक सुहाना ॥
मिले प्रेम से रावण को, कुछ भेंट किया नजराना ।
देख हाथ त्रिशूल, मधु से पूछे रावण दाना ॥

दौड़

पूछता गुण नृप रावण, मधु तब लगा सुनावन ।
चमरेन्द्र ने मुझे दई है, पूर्व भवका मित्र मेरा
जिन सभी कथा कही है ॥

दोहा

ऐरावत क्षेत्र भला, शतद्वारा पुरी नाम ।
सुमित्र भूप का मित्र है, प्रभव चतुर सुनाम ॥

प्रभव चतुर सुनाम, मित्र दोनो रहते मंगल मे ।
एक दिवस ले गया, उड़ा घोड़ा नृप को जंगल मे ॥
पल्ली पति की सुता नाम, वन माला मिली उपवन से ।
नृप से करके विवाह, खुशी से, आई राज भवन में ॥

दौड़

प्रभव आ मिला चाव से, पूछता कुशल भाव मे ।
जब रानी को देखा है, लगा काम का बाण तुरत
पागल सा बन बैठा है ॥

दोहा

सुमित्र ने पूछा प्रभव से, कैसा आर्तध्यान ।
साफ प्रभव ने कह दिया, जो था दिली अरमान ॥
जो था दिली अरमान, सुमित्र सुन खुशी हुवा अति मन में ।
मांगो देवे प्राण मित्र यह, कौन चीज चीजन में ॥
दई आज्ञा जावो रानी, मम मित्र के महलन में ।
रानी दई संभाल, आप छिप सुने शब्द कानन मे ॥

दौड़

प्रभव से कहे उचारी, कौन नाचीज मै नारी ।
मेरा पति देव है ऐसा, मांगे पर देवे जान तलक
क्या चीज नार और पैसा ।

दोहा

गौरव की यह बात सुन, गिरा चरण में आन ।
धन्य धन्य मम मित्र है, धन्य तू मात समान ॥
महापापी चाण्डाल दुष्ट मैं धर्म वृक्ष का कातिल हूं ।
खुद पै कटार से वार करूं, मैं मर जाने के काबिल हूं ॥

सुमित्र ने झपट हाथ, पकडा कहे वे आई क्यों मरता है।
मै समझा तू है श्रेष्ठ मित्र, तथा परीक्षा मेरी करता है ॥

गाना नं० २४

(तर्ज—ऐ मनुष्य जन्म पाने वाले)

अनमोल मनुष्यतन पाया है तो उत्तम आप विचार करो।
संसार समुद्र तरना है तो, श्रुति सुमति एक तार करो ॥
प्रथम तो सात कुव्यसन तजो, सभ्यता ग्रहो जिन राजभजो।
संयमी जीवन का साज सजो, दुस्तर भवसिन्धु पार करो ॥
वैभव कंकर के ढेरोपर, मत मन को ढेरी होने दो।
यहां अन्त मे सभी निराश हुवे, कुछ आत्म का उद्धार करो ॥३
मत विषम विषों को अपनाओ मोह कर्म जाल बेमारी है।
शुभ धर्म शुक्ल हो ध्यान सान से निज पर का सुधार करो ॥४
गौरव हीनो का दुनियां मे जीने से अच्छा मरना है।
निवृत्तिभाव से आनन्द है, कुछ नियम त्याग व्रतसार करो ॥५

दोहा

उपादान कारण हुआ, सुमित्र का तैयार।
निमित्त कारण उत्तम मिला, बना विरक्त संसार ॥
सुमित्र ने सयंम लिया, पहुंचा कल्प इशान।
हरिवाहन गृह सुत मधु, वही जन्मा मै आन ॥
प्रभव मित्र संसार मे, कई वार देह धार।
जन्मा ज्योतिर्मति के, पुण्यवान् सुकुमार ॥
सयंम ले न्याणा करा, चमरेन्द्र बना जाय।
मुझ को मित्र स्नेह से, त्रिशूल दई यह आय ॥

दो हजार योजन तक का, यह काम तुरत कर आती है।
फिर आत्म रक्षक है मेरी, ना पास किसी के जाती है ॥

गुणवान मधुक को जान, रावण ने कन्या उसे विवाही है ।
सम्बन्ध जोड़ दे पुत्री झट, आगे को करी चढ़ाई है ॥

दोहा

लगा सितारा चमकने बढ़ता जाय नरेश ।
भूपति आ चरणों गिरे, सेवा करे विशेष ॥
अष्टादश वर्षों तलक, रहा जंग से प्यार ।
सूर्य किरणों की तरह, हुवा पुण्य विस्तार ॥
फिर आये महिमण्डले, नल कुबेर दिग्पाल ।
दुर्लघ्यपुर का भूपति, राज्य करे सुविशाल ॥
आशाली विद्या पर उसे, था अत्यन्त गुमान ।
रखता था नगरी गिरद प्रचण्ड अग्निहर आन ॥

कुम्भकर्ण सेना समेत, जब वढ़ा तरफ रजधानी के ।
ना सही गई आशाली झलक, तो छक्के छुड़े गुमानी के ॥
फिर सब ने सोच विचार किया, दशकन्धर भी घबराया है ।
विमान व्योम मे चढ़ा दिये, किन्तु ना रस्ता पाया है ॥

दोहा

रावण कहे सुग्रीव से, करो उपाय विवेक ।
जिस से यह कार्य बने, रहे हमारी टेक ॥
कपि पति तब कहने लगा, सुनिये कृपा निधान ।
काम यह अति कठिन है, बिना भेद भगवान् ॥

यही समझ मे आता है, कुछ रूप वदल चहुं ओर फिरें ।
जो मिले पकड़ लालच देकर, ले भेद सभी ना फरक करें ॥
इधर लगे यह फिरने को, वहां नल कुबेर घर फूट पड़ी ।
शुक्ल जहां पर विरोध बढा, वहां समझो के इज्जत बिगड़ी ।

गाना नं० २५

अय फूट देवी तूने, सव को रुला दिया है।
अज्ञानियो के दिल पे, अड्डा जमा दिया है॥
अटूट प्रेम मे जो, लवलीन हो रहे थे।
उनके भी सुख का, कारण तूने भुला दिया है॥
मिल बैठ प्रेम से जो, निज लाभ सोचते थे।
विपरीत इसके तूने, बिल्कुल बना दिया है॥
उन्नत थे सव समझते, मानो सुमेरु चोटी।
गौरव गिराके उनका, धूलि मिला दिया है॥
सव प्रेम की तरंग मे, आनन्द ले रहे थे।
लहरें सुखा के तूने, बालू उड़ा दिया है॥
अब प्रेम के स्वपन की भी, हो रही निराशा।
भर विरोध विष को, उर मे हृदय हिला दिया है॥
है धर्म शुक्ल दोनो, यह ध्यान नाम मात्र।
अरती विरोध का तू, दरिया बहा दिया है॥

दोहा

पूर्व पुण्य से यदि मिले, सुख साधन का अंश।
अन्यों का अज्ञान वश, करने लगे विध्वंस॥

अय मित्रगणो कुछ सोच करो, किस बात पे आप अकड़ते हो।
जिस फूट ने सवका नाश किया, क्यो उसका हाथ पकड़ते हो॥
मानिन्द नरक वह घर बनता, जिसमें यह चरण टिकाती है।
मित्रो का दिल फट जाता है, जब अपना क़दम जमाती है॥
वह अधोलोकवत् देश बने, जब यह महारानी आती है।
स्वपन मात्र ना सुख शान्ति, उस देश मे रहने पाती है॥

इस रोग की मात्र औषधी यह, जिन भाषित ज्ञानामृत पीना ।
मैत्री भाव की ओर बढ़ो, व्यवहार सहित जब तक जीना ॥
अब करुणा भाव के अकुंरे, हृदय में पैदा होने दो ।
शान्ति प्रेम से राग द्वेष, दुखदायी जड़ को खोने दो ॥
चेतन और अचेतन क्या, सब में गुण है गुण ग्रहण करो ।
त्रियोग शुद्ध सबका हितकारी, सादा रहन और सहन करो ॥
कायरता तज कर शूर बनो, प्रमाद नही करना चाहिये ।
तुम उद्यमशील बनो सारे, अन्याय पत्त तजना चाहिये ॥
श्री वीतराग की वाणी से, जो सज्जन बेमुख रहते है ।
वह जन्म मरण संसार चक्र मे, पड़े सदा दुख सहते हैं ॥
सम्प सुमति का साथ छोड़, सर्वस्व अपना खोते है ।
तो जान बूझकर वह नर, अपने राह मे कांटे बोते है ॥

दोहा

यथा नाम कुबेर का, गुण थे तदनुसार ।
किन्तु घर की फूट ने, किया सर्व सुख छार ॥
दिवानाथ यदि भानु है, वह भी जगन्नाथ कहाता था ।
मानिन्द रजनी के शत्रुदल, मुंह देखत ही भाग जाता था ॥
मानिन्द रवि की किरणो के, आधीन हजारों राजा थे ।
नि.सन्देह थे भिन्न भिन्न, पर सदा हुक्म के ताबा थे ॥
वह ज्योतिषियों का इन्द्र है, तो यह नरेन्द्र कहलाता था ।
उसका भ्रमण व्योम, सरोवर मे यह दिल बहलाता था ॥
वर्णादिक स्वाधीनभोग, उपभोग किसी की कमी नही ।
स्वास्थ्यादि दश विध सुख पूर्ण, था समान कोई धनी नही ॥
और एक अनोखी विद्या जो, आशाली कहलाती थी ।
चहुं ओर कोट था ज्वाला का, शत्रु की पेश न जाती थी ॥

इसके सुदर्शन चक्र का, कभी वार रिक्त नही जाता था।
इन्द्र भूप भी नल कुबेर से, इस कारण भय खाता था॥
चढ़े हुवे थे गौरव पै, जब फूट का आ साम्राज्य हुवा।
उफ पश्चात्ताप बिना सब कुछ, खो महाराजा बेताव हुवा॥

दोहा

वैमनस्यता ने लिया, रूप भयानक धार।
नृप रानी का परस्पर, बढ़ गया द्वेष अपार॥

जहां राग वहां द्वेष की सीमा, निश्चय पाई जाती है।
द्वेष वहां पर प्रीति आ, विकल्प से असर जमाती है॥
सम विभाग का नाम नहीं, वहां स्वार्थता छा जाती है।
तब फूट महारानी भी आकर, आसन वहां बिछाती है॥
उपरम्भा ने कुमुदा दासी को, घर का भेद बताया है।
कहे प्राणों का संदेह हमें, सौकनों ने जाल बिछाया है।
किन्तु सुख सार की निद्रा से, मैं भी ना इन्हें सोने दूंगी।
और मुझे रुलाया तो इनको, फिर कैसे सुख होने दूंगी॥
ऐ कुमुदा अब देर ना कर, झट रावण पास चली जा तू।
यहां जाल बिछाया इन्होने, अब वहां पर जा जाल बिछाया तू॥
यदि बने सहायक वह मेरे, मैं उनको अकसीर दवा दूंगी।
चक्र सुदर्शन देकर मैं, आशाली भेद बता दूंगी॥
कह देना यदि अब चूके तो, फिर पीछे से पछताओगे।
पराजय कुबेर न होवेगा, तुम अपने प्राण गमाओगे॥
सन्तोप जनक दिया उत्तर मुझे, तो आयु भर सुख पावोगे।
नहीं लाभ के बदले हानि होगी, कर मलते रह जावोगे॥

दोहा

आज्ञा पा दासी चली, पहुँची कटक मंझार।
इधर खड़े थे गुप्तचर, पहले ही तैयार॥

पुण्य प्रबल महा रावण का, सभी तरह पौबारे हैं।
उल्टा दैव कुवेर से समझो, कर्मो के फल न्यारे है ॥
अय आजकल के पामर प्राणियों, क्यों आपस में लड़ते हो।
क्रोध परस्पर करके क्यो, महादुःख कूप मे पड़ते हो ॥

दोहा

अर्ज उभय कर जोड़कर, करती हूँ सरकार।
उपरम्भा की विनती पर, कुछ करे विचार ॥
नृप से कुछ अनबन होने पर, महारानी आपको चाहती है।
आशाली विद्या सहित, लिये चक्र वह रानी आती है ॥
मीन मेख आदि विचार, करने का कोई काम नही।
यदि अब चूके तो, समझ लेना इस फेल का खुश अंजाम नहीं।

दोहा

रावण ने कहा बोल मत रसना करले बन्द।
क्यो हम पर गेरन लगी, प्रेम जाल के फन्द ॥
प्रेम जाल के फन्द सभी क्या अनुचित बात सुनाई।
ऐसा भाषण करने पर, क्या तुझे शर्म ना आई ॥
साथ हमारे चत्रापन पर, धूल डालनी चाही।
आज हमारे उज्ज्वल, मुख पर स्याही मलने आई ॥

दौड़

प्रथम तो सभी फरेब है, राग से हमे परहेज है।
सहायता हमे ना चाहिये, डाकू चोर उचक्को की
गणना से हमे ना लाइये ॥

गाना नं २६

ऐयाशी करते है इसरत मे, पड़ गौरव को खोते हैं।
नतीजा निकलता अन्तिम वे, सिर धुन धुन के रोते है ॥

यह भी एक कुव्यसन भारी, पराई नार हर लेना।
अवश्य सर्वस्व खोकर, बीज वे दुर्गति का बोते है॥
बनी ना जिनकी अपनो से, परायों से बनेगी क्या।
घरेलू झगड़ो से यह, नीचता के ख्याल होते हैं॥
यही कर्तव्य मानव का, सदा नीति करे पालन।
वही दुनिया के गौरव की, शिखर चोटी पे सोते है॥
गिरावट का यह मारग है, शुक्ल बचने से इसके तो।
नीति अरिहन्त वाली से, कर्म मल तक को धोते है॥

दोहा

तके आसरा नीच सब, कायर क्रूर अधीर।
रखे भरोसा आप पर, शूर वीर रणधीर॥
शूरवीर रणधीर भरोसा, भुज वल पर रखते है।
चक्र भूप आशाली क्या, नहीं अन्तक से झुकते हैं।
दुनिया भर के शूर सामने, हो न कभी हटते है।
गौरव की रक्षा के कारण, सत्य पुरुष मरते है॥

दौड़

हमें कुछ भी ना चाहिये, आप बस यहां से जाइये।
लगी क्या जाल बिछाने, मारु चाबुक तान सभी बुद्धि आ
जाय ठिकाने॥

दोहा

धिक्कार शब्द खाकर चली, कुमुदा हो लाचार।
स्वागत विभीषण ने किया, उसका समय विचार॥
कुमुदा आप ना हो कभी, रंचक मात्र उदास।
रानी की और आपकी, पूरण होगी आस॥
पहिले दशकन्धर पे जाके, भूल आपने खाई है।

कुछ ऐसे होते है स्वभाव, कुछ होती बेपरवाही है ॥
यह काम सदा ऐसे वैसे, बनते है औरो के द्वारा।
निर्भय अब यहां पर आजावो, और समझो अपना पौबारा ॥

दोहा

विभीषण की जब सुनी, रावण ने यह बात।
मानो स्वकुल के हुवा, गौरव का आघात ॥

रावण—स्वावलम्बी होते सदा, शूरवीर अवतार।
फिर योग्य अयोग्य का चाहिये जरा विचार ॥
चाहिये जरा विचार लिया, क्यो तैंने नीच सहारा।
क्षत्रापन के गौरव को, यह है एक धब्बा भारा ॥
यदि वह सचमुच आही गई, तो कट जाय नाक हमारा।
शक्ति होते हुए धूर्त, जन की संख्या मे डारा ॥

दोहा (विभीषण)

ना हमे नीच विचार है, ना कुछ गौरव हार।
एक लाभ दूजे मिले, करना पर उपकार ॥
शरणागत को शरणा देकर, कष्ट सदा हरना चाहिये।
जो स्वयं मिले लक्ष्मी आकर, तो उसे नहीं तजना चाहिये ॥
इसके प्राणो की रक्षा के, रक्षक हम कहलायेगे।
फिर करवा देंगे मेल परस्पर, दम्पति हिल मिल जायेगे॥
चक्र सुदर्शन आशाली, विद्या की हमको चाहना है।
यदि चूक गये तो लाभ, अपूरब फेर हाथ नहीं आना है ॥
मरते विष के खाने वाले, व्यापारी कभी ना मरते है।
द्रव्य काल अनुसार सदा, वह सभी कार्य करते है ॥
इक लक्ष्य को सन्मुख रखते हुए, यहां हुआ हमारा आना है।
अब साम दाम और दण्ड भेद, युक्ति से काम बनाना है ॥

क्या क्षत्रापन रह जावेगा, ऐसे वापिस हो जाने से ।
क्या विघ्न ना सन्मुख आवेगा, कुछ आगे कदम बढ़ाने से ॥
यह भी शक्ति इक इन्द्र की जो दाहिनी, भुजा कहलाती है ।
यदि यही हाथ से निकल गई, तो पछताना रहे बाकी है ॥
साधारण कोई चीज नहीं, यह आशाली एक विद्या है ।
यहां घवरा गये सभी योद्धे, अब पीछे हटे तो निन्दा है ॥
ये पुण्योदय है समझ सभी, कुदरत ने मेल मिलाया है ।
अब इसे नहीं तजना चाहिये, यह भी एक अद्भुत माया है ॥

दोहा

दशकन्धर ने जब सुनी, रहस्य भरी यह बात ।
मौन धार बैठा रहा खुशी से फूला गात ॥

गाना नं० २७

जिधर भी देखो जहाँ-तहाँ, यह सभी पसारा प्रेम का है ।
नर सुर इस और परलोक, क्या बस सभी नजारा प्रेम का है ॥
ग्रह गणों का भी मेल होता, शशि की शोभा बढ़ाने वाला ।
गिरी द्वीप और समुद्र रचना यह खेल सारा प्रेम का है ॥
वसन्त ऋतु जलवायु सबजी का, प्रेम अनुकूल गूढ़ होता ।
फल फूल पत्ती व मीठे स्वर क्या, सभी इशारा प्रेम का है ॥
मात-पितु की स्नेह दृष्टि, यार मित्र व बन्धु गण क्या ।
स्वामी भ्राता व भगिनी पत्नी, यह नाता सारा प्रेम का है ॥
किन्तु होते अनित्य सब यह, धर्म कर्म निज ध्यान भक्ति ।
श्रद्धा चारित्र सेवा सतगुरू की, मोक्ष द्वारा प्रेम का है ॥
विपरीत होती है इसके सृष्टि, विरोध जहां पर के भापता है ।
शुक्ल उन्नति वहां पर होती, आगमन प्यारा प्रेम का है ॥

दोहा

एक ने दूजे की लई, मान परस्पर बात ।
पुण्य खड़ा आ सामने, जैसे शुभ प्रभात ॥
रानी से विद्या लई, आशाली और भेद ।
विधि सहित साधन करी, मिट गया जो था खेद ॥
चक्र सुदर्शन लिया हाथ, जो महा अनोखी शक्ति है ।
जिसने शस्त्रादिये उन्हो पर ही आ बनी आपत्ति है ॥
बस प्रेम ही है बलवान अति, और फूट महा निर्बलता है ।
यह है प्रसिद्ध के विरोध जिन्हों में काम ना उनका चलता हैं॥
रावण और विभीषण का सब प्रेम से भय काफूर हुवा ।
जहां खुशी हरस्यायत थीं, वहां से सुख आनन्द दूर हुवा ॥
रावण ने धावा बोलते ही, दुर्लंघ नरेश को घेर लिया ।
और होनी ने अपना चक्र, सीधे से उल्टा फेर दिया ॥
स्वाधीन कुबेर किया अपने, और उपरम्भा संग विदा किया ।
या यों कहिये कि तौक गले, परतन्त्रता का पहिन लिया ॥

गाना नं० २८

तर्ज—(पाप का परिणाम प्राणी भोगते संसार मे)

सच कहा क्षण-क्षण मे ये किस्मत बदल जाने को है,
जीव बणजारे का यह टांडा भी लद जाने को है ।१।
आयु साज समाज किसी का एक रस रहता नहीं,
चोट कर्मो की पड़े तब सब बिखर जाने को है ।२।
बादल की छाया काया माया राज जर क्या महल है,
सुरपति का राज सिंहासन भी डुल जाने को है ।३।
संपदा विपदा मनुष्य पर, कर्म वस पड़ती सदा,
शुक्ल ज्ञानी ध्यानी जन, भव सिन्धु तर जाने को है ।४।

सर्व सिद्धि के लिये पुरुषार्थ साधन मुख्य है,
धर्म ही सब के लिये, आनन्द वर्षाने को है।५।

दोहा

कैसी ही हो पण्डिता, कैसी ही प्रवीण।
झूठ दगा उल्टी मति, त्रिया अवगुण तीन॥

चौपाई

अब रथनुपुर की करी चढ़ाई, जो थी रडक हृदय दुखदायी।
सीमा पर जा कटक जमाया, इसी समय एक दूत पठाया॥

दोहा

सहस्रार नृप इन्द्र को कहता बारम्बार।
बेटा अब ना मान कर अपना समय विचार॥
अपना समय विचार, है इससे सहस्रांशु नृप हारा।
नल कुबेर सुर सुन्दर आदि, मान सभी का मारा॥
आज्ञा में भूप अनेक, मुख्य सुग्रीव बड़ा बलवारा।
चढा पुण्य प्रचण्ड तेज, सूर्य सम आज उजारा॥

दौड़

प्रथम ही प्रेम बढ़ावो, रावण से भागिनी विवाहो।
ध्यान गौरव का करना, यदि छिड़ा संग्राम पुत्र तो पड़ेगा संकट जरना॥

दोहा

सुनी बात जब इन्द्र ने, जल बल हो गया ढेर॥
प्रबल सिंह सम उछल कर, खैंच लई शमशेर।
बोला ले तलवार तुम्हीं, ने तो कांटे बोये हैं।
लंका किष्किन्धा, आदि देश सभी खोए हैं॥

कायर अति बल हीन, अपौरुष तुम्हारे मन होए हैं।
प्रथम ही देता मसल, दिया मुझे रोक आज रोये हैं॥

दौड़

अरि की करे बड़ाई, मेरे मन को नही भाई।
भय क्या दिखलाते हैं, उदय होत ही भानु के
सब तारे छिप जाते है॥

दोहा

निर्लज्जता की बात है, जो तुम किया विचार।
शत्रु को दे बहन मैं, करूं सांप से प्यार॥
इतने मे दशकधर का दूत भी पहुँचा आय।
इन्द्र कहने लगा, पहले माथ नमाय॥

दोहा

नमस्कार मम लीजिये, धीर वीर महाराज।
दो अक्षरी एक बात मैं कहने आया आज॥
कहने आया आज आपका, भला सदा चाहता हूँ।
शक्ति भक्ति दो जीव के, रक्षक बतलाता हूं॥
करो जो हो स्वाधीन आपके, मैं वापिस जाता हूं।
देओ भेट संग्राम करो या, अन्तिम समझता हूं॥

दोहा

दूत वचन सुन इन्द्र को, छाया रोष अपार।
बेइज्जती से दूत को, धक्का दे किया बाहर॥
रण तूर बजाया उसी समय, सुन शूर सभी हर्षाये हैं।
अब वीर परस्पर रण भूमि को, तेजी से उठ धाए हैं॥
अति घोर संग्राम हुवा जहाँ रक्त फुवारे चलते हैं।
आते है अग्नि बाण उन्हे जल बाण से शीघ्र मसलते है॥

दोहा

शक्ति को सब देखते, पुण्य ओर नहीं ध्यान ।
पुण्य बिना शक्ति सभी, होती तृण समान ॥
मेघनाथ ने इन्द्र की, मुश्के ली चढ़ाय ।
मान भंजने के लिये, लंका दिया पहुँचाय ॥
रावण सुत ने इन्द्र को, लिया युद्ध मे जीत ।
प्रसिद्ध नाम तब से, हुआ जग में इन्द्रजीत ॥

ऐश्वर्य अपना जमा वहां, फिर लंक पाताल में जाने लगे ।
त्रिखण्डी रावण को सब जन, जय जय के शब्द सुनाने लगे ॥
उत्सव की वह महा धूम, सब तीन खंड में छाई है ।
अब लंका में प्रवेश किया, घर घर में बंटी बधाई है ॥

दोहा

भयानक कारागृह में दिया इन्द्र को ठोंस ।
प्रबल से दुर्बल किया, सम्पदा ली सब खोस ॥
सहस्रार ने विनती, की रावण से आन ।
पुत्र भिक्षा आप से, मांगत हूँ मैं दान ॥

बोला रावण दूं छोड़ किन्तु, यह ध्यान अवश्य धरना होगा ।
अब कुछ दिन लिये, राज्य मार्ग को रोज साफ करना होगा ॥
कर दिया क्षमा हमने इसको, बस एक आपके कहने पर ।
वरना यह सजा के लायक था, अपराध का पुंज जमाने भर ॥

दोहा

कर प्रतिज्ञा भूप ने, इन्द्र लिया छुड़ाय ।
नीच काम करना पड़ा, मन में अति पछताय ॥

गाना नं० २६

(तर्ज—है दूर देश उस रंग का । कोई रंगते हैं ब्रह्म ज्ञानी)

कर्मों ने नाच नचाया, क्या से क्या मुझे बनाया
सुर पुर के सम मैं इन्द्र था, सुधर्म सभा सम घर था ।
सब राज साज सुन्दर था, बन गई स्वप्ने की माया
कर्मों ने मान गलाया । १ ।

कोई संग न साथी अङ्गी, सामान कहां वह साधन जंगी
हुआ आज नीच एक भंगी, परतन्त्र महा दुख पाया
हो गई स्वप्ने की माया । २ ।

उदय पूर्व कर्म दुखदाई, जिसने यह दुर्गति बनाई
जिन्दगी सब वृथा गमाई, कुछ भी ना धर्म कमाया
है ढलती फिरती छाया । ३ ।

अब शुक्ल मुनि कोई आवे, मन का सब भ्रम मिटावे ।
शान्ति का पाठ पढ़ावे, तोड़े कर्मों की माया—
आगे कुछ नहीं कमाया । ४ ।

चौपाई

ज्ञानवान् मुनि एक पधारे । तब इन्द्र विनती उच्चारे ॥
कौन कर्म प्रभु किया अति भारी । जिसने करी दुर्गति हमारी ॥

दोहा

पूर्व भव का जो सम्बन्ध, कहे मुनि समझाय ।
जिसका फल तुमको मिला, सुनलो कान लगाय ॥

अरिंज नगर में ज्वलनसिंह, नृप वेगवती रानी तिसके ।
अहिल्या नामक सुता अनुपम, रूपवती जन्मी जिसके ॥
रचा स्वयंवर राजा ने, नृप आये शोभा मतवाली ।
आनन्द माली नृप के गले में, कन्या ने वर माला डाली ॥

दोहा

नाम तड़ित प्रभ तुम, तभी कोपे मन मंझार ।
आनन्द माली से, रहा तेरा द्वेष अपार ॥

अनित्य समझ आनन्द माली ने, दुनिया तज चारित्र लिया ।
ध्यानारूढ़ देख मुनिवर को, तैने दारुण दुःख दिया ॥
आनन्द माली का भ्राता, कल्याण मुनि गुण आगर था ।
तेजू लेश्या लगा छोड़ने, तप जप का जो सागर था ॥

दोहा

सत्यवती तब नार ने, मुनि शान्त किया आय ।
लेश्या तुरन्त सहार ली, तुझको दिया बचाय ॥

कई जन्म बाद सहस्रार के घर, आ जन्मा इन्द्र नाम से तू ।
पुण्य भुगत के हुवा लज्जित, मन्द कर्मों के परिणाम से तू ॥
दुःख दिया था जो मुनिराजों को, यह उसका ही फल पाया है।
फल कर्म गति का समझ इन्द्र ने, संयम मे चित्त लाया है ॥

दोहा

तीन खंड का अधिपति, दशकंधर नृप राय ।
बड़े बड़े भूपाल सब, गिरे चरण पर आय ॥

चौपाई

एक दिवस दशकंधर राई । नग सुवर्ण पर पहुँचा जाई ॥
अनन्त वीर्य वहां केवल ज्ञानी । तीन काल के अन्तर्यामी ॥
सुन उपदेश धर्म सुखदाई । दशकंधर दिया प्रश्न सुनाई ॥
ऐसा कौन कहो नृप राई । मेरी घात करे जो आई ॥

दोहा

मुनिवर ने तब यो कहा, सुनो त्रिखंडी नाथ ।
पड़ेगा पाला आपको, वासुदेव के हाथ ॥

परनारी सम्बन्ध से, होगा तेरा नाश ।
पुण्य आपका है अभी, कुछ समय तलक प्रकाश ॥
उसी समय रावण ने, दिल मे यह प्रतिज्ञा धार लई ।
परनारी ना चाहे जो मुझको, उससे करूंगा प्यार नहीं ॥
करके नियम चला लंका को, मुनिवर को प्रणाम किया ।
मन वचन कर्मसे नियम, निभाने का दिल निश्चय धार लिया ॥

(इति रावणोत्पत्त्यधिकार)

हनुमानुत्पत्ति

दोहा

उत्पत्ति उस वीर की, सुनो लगा कर कान ।
नाम अमर जिन यहां किया, फिर पहुंचे निर्वाण ॥

गाना नं ३०

पवनसुत अंजनी के जाए, धर्म के अवतार थे ।
सत्य के प्रतिपाल योद्धा, देश के शृंगार थे ॥

वीरता के पुंज तेजस्वी, गदाधारी यति ।
लंकपति आदि भी जिनकी, शक्ति पे बलिहारी थे ॥
फांद के सागर को खलदल, दल सिया सुध लाये जब ।
राम सेना सहित उनपै, हो रहे बलिहारी थे ॥
तेज तप संयम का पालन, भक्ति शक्ति थी अटल ।
देश व्रतधारी थे योद्धा, सर्व शुद्धाचार थे ॥

क्या लिखे महिमा शुक्ल, उपमा कोई मिलती नहीं ।
दीनवन्धु थे वह, दुःखियो के प्राणाधार थे ।

(तर्ज—वहरे शिकस्त गाना)

गुण वर्णन मैं करूं कहां तक न इतनी शक्ति जवान में है ।
शूर वीरता तेज निराला वीर्य सामर्थ्य हनुमान में है ॥
सच्चे पक्ष के थे प्रतिपालक, उत्पात बुद्धि हर आन में है ।
कष्ट निवारा था माता का प्रगट नाम किया जहान में है ॥
उपकार तेरा नहीं दे सकता यह शब्द राम की जवान में है ।
वड़े-वड़े योद्धा किये पसपा, शक्ति अद्भुत कमान में है ॥
तप संयम की क्या करूं वड़ाई, शक्ति नहीं प्रमाण मे है ।
शुक्ल विराजे जा शिवपुर में, यह लज्जत पद निर्वाण मे है ॥

दोहा

रूपाचल पर्वत भला, शोभनीक स्थान ।
वाग वगीचे महल का, गौरव अधिक महान ॥

आदित्य नगर प्रहलाद भूप, गृह केतुमती रानी दानी ।
उदयाचल पे भानु प्रकाश, स्वपने में देखा पटरानी ॥
वृत्तान्त सुनाया राजा को, नृप ने फल स्वप्न का वतलाया ।
शुभ जन्म हुवा जव पुत्र का, राष्ट्र भर मे आनन्द छाया ॥

दोहा

दान वहुत नृप ने दिया, निर्धन किये धनवान् ।
नाम धरा फिर कुमर का, पवन जय गुणवान् ॥

शुभ लक्षण थे वत्तीस अग मे, सर्व कला के ज्ञाता थे ।
प्रण वीर कुंवर रणधीर पवन, वलवीर थे जग विख्याता थे ॥
महेन्द्रपुर इक अन्य नगर था, भूप महेन्द्र वहाँ का था ।
थे सौपुत्र वलवान्, और पुत्री का नाम अंजना था ॥

दोहा

पुत्री के वर के लिये, देखे राजकुमार।
पवन कुमर विद्युत प्रभ, थे कुबेर अवतार॥
प्रथम टेवा विद्युत का, महाराजा ने मंगवाया है।
शुभ लग्न स्पष्ट करने के हेतु, पण्डित को दिखलाया है॥
अष्टांग ज्योतिषी बतलाया, तप संयम चित्त लगायेगा।
वर्ष अठारह की आयु मे, प्राणान्त हो जायेगा॥

दोहा

पवन जय निश्चय किया, छोड़ विद्युत उसी आन।
तीन दिवस मे कर दिया, शादी का सामान॥
पवन जय तब कहे मित्र से, क्या तुमने देखी बाला।
पहिले मुझको दिखला दो, जिससे विवाह होने वाला॥
एक घड़ी का चैन नही, बिन देखे राजकुंवारी के।
कैसे है विलक्षण लक्षण, देखूं जाकर देश दुलारी के॥

दोहा

प्रहसित मित्र कहे कुमर से, धीर धरो मन मांह।
सूर्य अस्त हो जाय तो, फिर विचार कुछ नांह॥
जब हुआ शाम का समय, विमान मे बैठ महेन्द्रपुर आये।
जा खड़ा किया विमान, महल पै अंजना के दर्शन पाये॥
बैठी हुई संग सहेलियों के, शोभायमान सुकुमारी थी।
मानो तारा मण्डल मे प्रगटी, चन्द्रमुखी उजियारी थी॥

दोहा

पुण्य रूप तन देख कर, पाई खुशी अपार।
स्नेह दृष्टि से देखते, थके न पवन कुमार॥

नव युवकायें थीं इधर, गा रहीं मंगलाचार।
होनहार के हृदय मे, था कुछ और विचार॥

(गाना सहेलियो का-कव्वाली)

गोरी मुख पर है काली लटा छा रही
चन्द्रमा पर है मानो छटा छा रही।
उमड़ आई दरिया बरसने लगी,
चांदनी चन्द्रमा को तरसने लगी।
है जटा शंकरी पर जटा छा रही,
चन्द्रमा पर है मानो घटा छा रही।
तेरी उलझी लटा कौन सुलझायगी,
हम संवारे तो मंहदी उतर जायगी।
है शुक्ल पक्ष मे क्या छटा छा रही,
चन्द्रमा पर है मानो घटा छा रही।

दोहा

सब सखियां थी गा रही प्रेम भरा यह गान।
तब आरम्भ किया हास्य यो एक सखी ने आन॥

देखो री सखी अंजना देवी, धर्मात्मा पुण्य निशानी है।
सुर नल कुबेर सम पति, पवन वर मिला अनुपम दानी है॥
है राजदुलारी चन्द्रमुखी, सूरज मुख पवनकुमार सखी।
अंजना है शीलवती पवन भी, वीरता का अवतार सखी॥
चिर जिए युगल जोड़ी बांकी, सौंदर्य के भण्डार सखी।
जग मे यश कीर्ति पाये शुक्ल, भारत के प्राणाधार सखी॥

दोहा

मिश्रकेशी कहे सखी, गुण भी देखो बीच।
विद्युत प्रभ कहां केशरी, पवन जय कहां रीछ॥

बसन्त तिलका ने कहा तुम नहीं जानो भेद ।
विद्यु त प्रभ स्वल्प आयु है, सरती नही उम्मेद ॥

चौथी बोली सोच समझ कर, बात नहीं तू करती है ।
कहाँ अमृत कहाँ जहर सभी को, एक भाव से धरती है ॥
अपना ही तान अलाप रही, गौरव ना जरा पिछानती है ।
यह संस्कार पिछले जन्मो के, तू बावली क्या जानती है ॥

दोहा

बसन्त तिलका से सखी, बोली कुछ झुंझलाय ।
सुन मेरी तू बात को, वृथा ना यों घबराय ॥

स्फटिक रत्न सुकांच कहां, और कहां मुलम्मा कहां मणि ।
राढा मणि स्वर्ण मेल कहां, कहां हेम कहां लोहिताक्ष मणि ॥
कहां विद्यु त प्रभ चर्म शरीरी, कहां पवन जय भवधारी ।
कहा गुलाब और फूल सेवती, केसूफूल लसन क्यारी ॥

दोहा

सुनते ही व्याख्यान यह, हुवा पवन जय लाल ।
तलवार खैंच कर मे लई, बोला आँख निकाल ॥

बोला आंख निकाल मेरा यह प्रेम नहीं रखती है ।
अपमान मेरा सुन खुश होती, मन ही मन मे हंसती है ॥
है इसके आधीन सभी, फिर मना नही करती है ।
क्या मित्र ये शून्य चित्त, मम अर्धाङ्गिनी बनती है ॥

दौड़

मार कर आज दुधारा, करूं इसका सिर न्यारा ।
प्रहसित तब बात सुनाई, नारी अवध्य कहाए बता
शूरमता कहां चलाई ॥

दोहा

राजकुमारी सब तरह, है मित्र निर्दोष।
निन्दा कुछ करती नहीं, ना मन मे कुछ रोष॥
विवाहों के यह कार्य है, इनका यही स्वभाव।
गाली हंसी अपमान सब, होते है रंग चार॥

अभी तो कुछ भी नही हुवा, फिर ब्याह मे तुम्हें दिखायेंगे।
बर्ताव यही तुमसे होगा. देखे क्या आप बनावेगे॥
उसी समय वापस आये, दिल गुस्से मे था भरा हुवा।
पर शादी से इन्कार किया, अपमान का भूत था चढ़ा हुवा॥

दोहा

फिर समझाया मित्र ने, प्रेम भाव मे आन।
मांग ब्याहे बिन छोड़ना, यह भी है अपमान॥

क्षत्री नहीं वह मुर्दा जिसकी मांग दूसरा ले जावे।
अपमान है अपने कुल का, और निज मान नहीं परसे जावे।
प्रहसित मित्र ने समझाकर, कंकना तथा मुकुट बंधाया है।
अति सजी जंज गाजे बाजे, हस्ती पर पवन चढ़ाया है।

दोहा

शोभा अधिक विमान की, वर्णी नही कुछ जाय।
मान सरोवर जाय के, डेरा दिया लगाय॥

महेन्द्र नृप ने लड़की का, मान सरोवर विवाह किया।
हस्ती रथ विमान दहेज में, माणिक्य मोती हार दिया॥
चौंसठ कला प्रवीण, अंजना पहिले ही गुण आगर थी।
फिर भी विदा समय माता ने, शिक्षा दई सुधाकर थी॥

गाना नं० ३१

सिधारो लाड़ली मेरी, यह शिक्षा भूल ना जाना।
यह शिक्षाप्रद वचन मेरे है, भोली भूल ना जाना॥
पति पूजा पति भक्ति है सच्चा धर्म नारी का।
धर्म सम्बन्धी सब ग्रन्थो का, पढ़ना भूल ना जाना॥
न रखना खेद मन मे प्रेम, करना ननंद देवर से।
सकल सम्बन्धियो का, मान करना भूल ना जाना॥
ससुर सासु से लडना, झगड़ना कुढ़ना नही होगा।
सदा मिल बैठ करना धर्म, चर्चा भूल ना जाना॥
पति की चरण धूली का, तिलक मस्तक चढ़ा लेना।
पति पग पे सदा सिर को, निमाना भूल ना जाना॥
आये गृह पे अतिथियो को, खिलाना प्रेम से भोजन।
सती साधु को देना दान, प्रेम से भूल ना जाना॥
कभी भूतो व प्रेतो से, न डरना भूल कर भी तुम।
सदा छलियो के छलछिद्र से, बचना भूल ना जाना॥
नही त।बीज गन्डो को, भटकना दूर पे पोपो के।
किसी धूर्त के फन्दे ना, फंसना भूल ना जाना॥
किसी यन्त्र या मन्त्र तन्त्र को, करना नही सेवन।
यह जादू टूणे है सब, पोप लीला भूल ना जाना॥
कभी संकट सताये तो, पढ़ो नमोकार मंत्र को।
सदा अरिहन्त का शरणा, तू जपना भूल ना जाना॥
शुक्ल आनन्द की वर्षा, सदा वर्षे तेरे गृह मे।
है करता धर्म ही प्राणी की, रक्षा भूल ना जाना॥

दोहा

प्रेम भाव से विदा हो, आये निजस्थान।
सुनो विचित्रता कर्म की, जरा लगाकर कान॥

आदित्य नगर मे आते ही, रानी महलो पहुँचाई है।
और पवन जय नृप के दिल मे, बस वही रंजगी छाई है।।
कर्म किसी के सगे नही, यह भंग रंग में करते है।
इस कर्म जाल मे फंसे हुवे, संसारी नित्य दुख भरते है।।

दोहा

बोली गोली से बुरी, तीखा आरा जान।
आरा से बोली बुरी, कर देती घमसान।।
बोल कुबोल न बिसरे, शूल समा सालन्त।
रति कभी ना उपजे, प्रतिदिन आर्तवन्त।।

ना कभी पास जाये रानी के, ना उसको देखना चाहता है।
अंजना को दिन रात निरन्तर, यही रंजोगम खाता है।।
निश दिन पड़ी झुरे महलों मे, भेद ससु ने जब पाया।
समझाया बहु विधि कुमर, पर ख्याल तलक भी नही लाया।

दोहा

प्रहसित सब कहने लगा, तुम हो चतुर सुजान।
किन्तु उचित तुमको नहीं, अंजना का अपमान।।

निन्दा उसकी होती है, जो शूरवीर रण से भागे।
दृढ धर्मी वह कहलाता है, जो बुरा काम मन से त्यागे।।
वह मित्र दुष्ट जो छल करता, ब्रह्मचारी दुष्ट शील त्यागे।
बुरा काम वह दुनिया मे, जिसके करने से यश भागे।।
वह नार दुष्ट जो तजे पति, है दुष्ट पति त्यागे नारी।
वह दुष्ट जो न त्यागे वैर, बदकार कार न तजता बदकारी।
वह भी दुष्ट कहलाता है, जो निरपराधी को दुःख दे।।
तथा वह भी होता दुष्ट मित्र को, संकट में ना जो सुख दे।

दोहा

समझाया सब तरह से, दे उपदेश विशाल।
एक नहीं हृदय धरी, पत्थर बूंद मिशाल॥
रावण का एक दूत तब, आ पहुँचा तत्काल।
जो आज्ञा महाराज की, सभी बताया हाल॥

दश कन्धर की यह आज्ञा है, दल बल लेकर जल्दी आओ।
वरुण भूप नहीं माने आन, तुम जल्द सहायक बन जाबो।
संग्राम महा नित्य होता है, और वरुण अति गर्वाया है।
सुग्रीवादिक सब आ पहुँचे, अब आपको शीघ्र बुलाया है॥

दोहा

वरुण भूप के पुत्रो मे, शक्ति ला मदकार।
खर दूषण को जिन्होने, डाला कारागार॥

है शक्ति मे गम्भीर वरुण की, फौज का पार ना आता है।
नही हलवे का खैर, बैरना दिल से जरा भुलाता है॥
सैना है कूच को तैयार सिर्फ एक देर तुम्हारे जाने की।
अब सबने ही दिल ठानी है, शत्रु को स्वाद चखाने की॥

दोहा

जंगी वस्त्र पहन कर, हुए भूप तैयार।
झट रण तूर बजा दिया, हाथ लई तलवार॥
तैयार पिता को देखकर, आये पवनकुमार।
पिता लड़े संग्राम मे, सुत को है धिक्कार॥

अज्ञानी वह पुत्र रहे घर, पिता जाय संग्राम लड़े।
अविनयी वह शिष्य, गुरु की आज्ञा के जो विरुद्ध पढ़े॥

पिता नहीं वह शत्रु जो, बच्चों को नहीं पढ़ाता है।
नहीं शूरमा है कायर, जो रण में पीठ दिखाता है॥
नालायक वह बहू सदा. जो सास से टहल कराती है।
विनय रहित जो पुरुष, कीर्ति उसकी भी छिप जाती है॥
मैं रहूं पिता संग्राम जाय, यह बात न मुझको भाती है।
है कायरता का कर्म मुझे, इस कर्म से लज्जा आती है॥

दोहा

हय गय रथ पायक सभी, हुए विमान तैयार।
जंगी वस्त्र पहिन कर, मन में खुशी अपार॥
पता लगा जब नार को, आई दर्शन काज।
हाथ जोड़ कहने लगी, सुनो अर्ज महाराज॥

ना कभी आज्ञा भंग करी, ना तन मन से अपराध किया।
केवल शरणा एक आपका, क्यो उससे भी धिक्कार दिया॥
आप तो हैं रक्षक मेरे, फिर कसर कोई मुझमें होगी।
जिस अपराध से आपके, मन मे नाराजगी बैठी होगी॥

दोहा

पवन जय जब देखता, तिरछी दृष्टि डाल।
बिन पानी सम फूल के, महारानी का हाल॥

चमक दमक सब मुर्झाई, शृंगार नहीं कोई अंग मे।
शुभ लक्षण जो पड़े हुए, वह कैसे छिप सकते तन मे॥
ताम्बूल न कोई मिस्सी है, ना अंजन आँख मे लाती है।
फिर भी तो यह सुन्दर पुतली, हीरे की चमक दिखाती है॥

दोहा

आगे बढ़ रानी झुकी, गिरी चरण में आन।
आप मेरे भर्तार है, आप ही प्राण समान॥

एक आसरा चरणो का है, दोष क्षमा सब कर देना ।
विजय आपकी हो रण मे, फिर दासी को दर्शन देना ॥
आप क्षमा के है सागर, और नारी मूढ़ अज्ञान हूं मैं ।
बार बार तुम चरणो में, इक मॉग रही क्षमादान हूं मै ॥

दोहा

पवन कुमर ने रोप मे, धक्का दे किया बाद ।
उस अपराध का अब, तुम्हे आने लगा स्वाद ॥
उस समय क्या रसना गहने थी, अब चपर २ जो चलती है।
बेइज्जती सुन खुश होती थी, अब धरणी शीश मसलती है ॥
ये क्या चरित्र फैलाया है, ऊपर से प्रेम दिखाती है ।
जैसे तूने किये काम यह, उसका ही फल पाती है ॥

दोहा

इतना कह कर कुमर ने, दीना बिगुल बजाय ।
मान सरोवर जाय के, डेरा दिया लगाय ॥
तिरस्कार पति ने किया, रानी चित्त उदास ।
बैठ महल मे ले रही, लम्बे लम्बे श्वांस ॥

अजना का गाना नं० ३२

दिया दुख यह कर्म ने भारा, हुवा विमुख कन्त हमारा । (ध्रुव)
कोई दोष नजर नहीं आता, ना भेद कोई बतलाता जी ॥
अब यही फिक्र एक भारा, हुवा विमुख कन्त हमारा ।
मैने पिछले भव के मांही, बड़े पाप किये दुःखदायी जी ॥
दम्पति के मन को फाड़ा, हुवा विमुख कन्त हमारा ।
जो सुनेगी मात हमारी, दुख पायेगी अति भारी जी ॥
मैने किसके पल्ले डारा, हुवा विमुख कन्त हमारा ।
पीहर पूछेंगी सखियां मेरी, दुःख सुख की बात घनेरी जी ॥

क्या कहूँगी हाल विचारा, हुवा विमुख कन्त हमारा ।
अय कर्म दुष्ट हत्यारे, तैंने कब के बदले निकाले जी ।
वर्षे नयनो से जल धारा, हुवा विमुख कन्त हमारा ॥

दोहा

बसन्त तिलका ने कहा, रानी दिल मत गेर ।
सभी ठीक हो जायगा, है कोई दिन का फेर ॥

कभी भिखारी बने जीव, कभी राजन पति बन जाता है ।
कभी नरक दुःख भोगे जीव, कभी स्वर्ग महा सुख पाता है ॥
जब उदय पाप कोई होता है, तो सबके दिल फिर जाते है ।
चढ़े पुण्य चरणों मे गिरते, और ठोकरें खाते है ॥

दोहा

मान सरोवर पवन जय, सोया सेज मंझार ।
चकवी पति वियोग मे, रोवे जारों जार ॥

सुने रुदन के शब्द कुमर को, नींद नहीं कुछ आती है ।
पूछा मित्र प्रहसित कहो, यह क्यों इतना चिल्लाती है ॥
इसकी चीख पुकार हमें, आराम नहीं करने देती ।
भर भर आती नीद आंख मे, जरा नहीं पड़ने देती ॥

दोहा

प्रहसित कहे यह, दम्पति रहता है संयोग ।
रजनी आ बैरन हुई, स्वामी हुआ वियोग ॥
सोच कुमर को आगई, कांप उठा तत्काल ।
पक्षी की जब यह दशा, अंजना का क्या हाल ॥

इसी तरह वह रात दिवस, रोती और कुरलाती होगी ।
हार शृङ्गार छोड़ सारे ना, खाती न पीती होगी ॥

पहिले तो कुछ आशा थी, पर अब निराश हो जावेगी।
रण से वापिस आने तक, वह अपने प्राण गमावेगी॥

चौपाई

उसी समय प्रहसित से बोले, भाव सभी जाने के खोले।
सन्तोष बिना मर जावे नारी, है पतिव्रता राजदुलारी॥

दोहा

दोनों बैठ विमान मे, आये तुरत आवास।
रानी दुख मे ले रही, लम्बे-लम्बे श्वांस॥

दोहा

प्रहसित तब कहने लगा, रानी खोल कपाट।
कुमर पवन जय आये है, लम्बी करके बाट॥
रानी तब कहने लगी, कौन है हटो पिछाड।
पहिरे है चारो तरफ, तू कहां महल मंझार॥
कौन तू महल मंझार, पति मेरा संग्राम गया है।
छल बल करता कौन, मेरे तू महलो मे आया है॥
पकड़ा दूंगी अभी यदि, मरना पसन्द आया है।
बारा वर्ष हो गये पति ने, चरण नहीं पाया है॥

दोहा

नाम ना सुनना चाहते, कहो, कैसे घर आते।
मुझे तू क्यो बहकावे, भाग्यहीन मै कहाँ पति
परमेश्वर दर्श दिखावे॥

दोहा

रानी जी निश्चय तुम्हें, भ्रम और संताप।
बैठ झरोखे स्वामी के, दर्शन करलो आप॥
दर्शन करलो आप प्रहसित, मै मित्र हूँ स्वामी का।
तूं है मेरी मात सती, मै सेवक महारानी का॥

तेरे दुख से आज दुखी, हृदय अपार स्वामी का।
देखो दृष्टि डाल नयन, झरना हो रहा पानी का ॥

दौड़

कटक सब मान सरोवर, विमान से आये है घर।
लौट कर फिर जाना है, देरी का नहीं काम पता क्या
कब मुड़के आना है ॥

दोहा

बैठ झरोखे अंजना लगी देखने हाल।
निश्चय कर पट महल के, खोल दिये तत्काल ॥
पवन जय प्रवेश हुआ तो, महा प्रसन्नता छाई है।
मेघ शब्द सुन घोर मोर, मम मीठी कूक सुनाई है ॥
थल पर मीन तड़फती को, जैसे जल आके फरस रहा।
आषाढ़ के लगते ही जैसे, बागड में पानी बरस रहा ॥

दोहा

भद्रे ! क्षम अपराध मम, दिया तुझे दुःख भूर।
दोष नही तेरा कोई, मेरा सभी कसूर ॥
बिना विचारे किया काम मैं, मिला तुझे अनजान पति।
और तू महान् गम्भीर समुद्र, शीलवती है पूरी सती ॥
अब आर्तध्यान तजो मन से, शीतल स्वभाव चन्दन तेरा।
मै हूं कटुक जहर मानिन्द, पत्थर समान हृदय मेरा ॥

दोहा

ऐसी बातें मत कहो, लगता मुझको पाप।
मैं चरणो की धूल हूं, परमेश्वर प्रभु आप ॥
आप तो रक्षक हैं मेरे, मैं ही निर्भागि नकारी हूं।
कुछ दोष नहीं महाराज आपका, मैं कर्मो की मारी हूं ॥

जो भी है अपराध मेरा, सब भूल क्षमा करना चाहिये ।
मै हूं नाथ शरीर की छाया, मुझे भुलाना ना चाहिये ॥

दोहा

दुख फिकर जैसा नही, दुनिया मे कोई रोग ।
खुशी प्रसन्नता सम नही, सुख का और संयोग ॥

दुख चिन्ता सब दूर हुई, अब दिल मे अति हर्षाये है ।
फिर हंसे रमे दम्पति प्रेम, दोनो ने अधिक बढ़ाये हैं ॥
जब लगा कुमर वापिस जाने, रानी ने गिरा सुनाई है ।
पास चिन्ह कुछ रहने को, यह सब ही बात बनाई है ॥

दोहा

प्राणपति तुम तो चले, लड़ने को संग्राम ।
मुझको देते जाइये, उत्तर का सामान ॥

इस बात को सभी जानते है, नहीं कुमर महल मे जाता है ।
फिर चले आप संग्राम यहां, नही मेरी कोई सहायता है ॥
मुझे निशानी दे दीजे, क्यो कि अपवाद से डरती हूँ ।
एक आसरा चरणो का, धर ध्यान गुजारा करती हू ॥

दोहा

नामांकित दे मुद्रिका, पहुंचे कटक मंझार ।
फेर गये लंकापुरी, रावण के दर्बार ॥
रावण ने दिया वरुण पे, अपना कटक चढ़ाय ।
लगा घोर संग्राम फिर, रणभूमि मे आय ॥
अंजना के होने लगे, प्रकट गर्भ आकार ।
गुप्तपने की बात थी, कोई न जाने सार ॥
पता लगा जब सास को, केतुमति तसु नाम ।
आग बबूला होगई, गर्जी सिंहनी समान ॥

दोहा

अरी पापिनी अंजना, अंजन कैसा नाम ।
जैसा तेरा नाम है, वैसा तेरा काम ॥
जैसा तेरा काम पापिनी, यह क्या कर्म कमाया ।
पुत्र मेरा प्रदेश दुराचारण, कहां उदर बढाया ॥
अरि कलंकिन निर्भागिन, तै कुल को दाग लगाया ।
कुमर गया नहीं महल, बता ये किसका गर्भ धराया ॥

दौड़

पतिव्रता कहलाती, जरा भी नही लजाती ।
डूब के मर जाना था, या तो रखती शील नही यह
मुख नहीं दिखलाना था ॥

सास का गाना नं० ३३

अय अंजना पापन महा निरभागिन,खोया है कुल का गौरव मेरा ।
माया चारी करी तैने भारी ॥ अय०
यदि सत्य हाल सुन पाऊंगी, तो दया भी तुझ पर लाऊँगी ।
निर्वाह की शकल बनाऊंगी, आयु तेरी निभवाऊंगी ॥
नहीं आफत तुझ पर आवेगी, रो रोकर समय वितावेगी ॥
इस घर में जगह न पावेगी, वन वन में धक्का खावेगी ।
ऊपर से भोली सूरत है, हृदय मे महा कदूरत है ॥
धिक्कार ये तेरी सूरत है, जो कुलमर्यादा चूरत है ।
वदनामी का ढोल बजा दूंगी, दुनिया से तुझे मिटा दूंगी ।
सब करके अभी दिखा दूंगी, नाको से चने चबा दूंगी ॥

अंजना का गाना नं० ३४

तू है लासानी-पुण्य निशानी, कायम रहे यह गौरव तेरा-
हितकारी सासु हमारी—ध्रुव

किन्तु अन्धी यह ताकत है, जो लाती हम पर आफत है।
यह नौतर ही जो जाफत है, क्यों गला हमारा कापत है ॥
क्या इसमें तेरी बड़ाई है, गम्भीरता सभी भुलाई है।
दीनो पर करी चढ़ाई है, जो प्रलय काल बन आई है ॥
ना भरम की कही दवाई है, इसका अंजाम तबाही है।
तुझको अब बेपरवाही है, ऐश्वर्य में गरवाई है ॥
कुछ कर्मो से डरना चाहिये, दुखियो का दुख हरना चाहिये।
यह कोप दूर करना चाहिये, देना सबको सरना चाहिये ॥
सब रौद्र ध्यान यह दूर करो, विनती हमरी मजूर करो।
सब चिन्ता दूर हजूर करो, चरणो से न हमको दूर करो ॥

केतुमति अय अजना पापन, धिक्कार है तेरे सतीत्व पर, पतिव्रत पर, इस कृत्य पर ॥

अजना अरि प्रथम हृदय मे तोलो। फिर कुछ बोलो वचन सुजानकर। गुणवान ससु जी बोलो कुछ वचन सुधारकर, कुछ ख्याल कर, सुन कान कर ॥ ध्रुव।

केतुमति अरि उल्टी हम पर धौस जमा कर बोलती जैसे नृत्यकर।

अजना निष्कारण क्यो झगड़ा है।

केतुमति क्या सुना नहीं।

अंजना वृथा सब रगड़ा है।

केतुमति दुःख मिला नहीं।

अंजना अरि होते है गम्भीर बड़े, नित्य निज कर्त्तव्य पर ध्यान धर ।
केतुमति कुल को कलङ्क तै लाया ।
अंजना कहिये कैसा ।
केतुमति कैसे ये उदर बढ़ाया ।
अंजना चाहिये जैसा ।
केतुमति अरि धिक्कार हजारांकार, और धिकधिक शिक्षक गुरू कृत्य पर ॥
अंजना गुरू निन्दा सास न करना ।
केतुमति बकवाद न कर ।
अंजना कुवचन ना मेरे जरना ।
केतुमति अविनय से डर ।
अंजना गुरू निन्दक से ना डरूॅ, धरूँ ठोकर सुरपति अज्ञानी पर ।
केतुमति बस, जबान को कुलूप लगावो ।
अंजना मै चोर नही ।
केतुमति कुकर्त्तव्य पर पछतावो ।
अंजना पति बिन और नहीं ।
केतुमति माया चारन, व्यभिचारन, लानत है तेरी कुरीत पर ।

दोहा

सास धीर मन मे धरो, सुनो लगा कर कान ।
गर्भ तुम्हारे पुत्र का, नहीं और का मान ॥
नहीं और का मान अंगूठी, देख पास है मेरे ।
जिस दिन गये संग्राम, उसी दिन आये रात अंधेरे ॥
या मंगवा ले पता वहां से, यदि न निश्चय तेरे ।
कटुक वचन ना बोल, ससु लगते हैं कांटे मेरे ॥

नाम बदनाम न करना, मुझे है तेरा शरणा।
चरण में शीश निवाऊं, निकले दोष यदि मेरा तो
उसी समय मर जाऊं॥

दोहा

गिरी गिराई मुद्रिका, लगी कहीं से हाथ।
धक्का देकर सुत गया, आया बतावे रात॥
जिसको नाम नहीं भाता, उसको आया बतलाती है।
समझ दुराचारण तुझको, माता भी नहीं बुलाती है॥
कलंकित करके दोनो कुल, फिर सती भी बनना चाहती है।
निकल पापिनी यहां से, क्यों काला मुंह नहीं कर जाती है॥

दोहा

केतुमति ने उस समय, सेवक लिये बुलाय।
ले जावो इसको अभी, पीहर देओ पहुँचाय॥
यह कलंक यहां से ले जाओ, महेन्द्र नृप को दे आना।
यदि नहीं रखे तो वहीं इसे, धक्का देकर वापिस आना॥
कह देना सब बात साफ, यह सती जो तुमने ब्याही है।
उन सबको तो डोबाई, अब तुमको डोबन आई है॥

दोहा

सेवक जन लेकर गये, महेन्द्र नृप के पास।
एकान्त बुलाकर के कहा, जो था मतलब खास॥
जब सुना हाल हुआ दुःख बड़ा, दाँतो मे अंगुल दबाई है।
यह सुता नहीं शत्रु मेरी, कीर्ति सब धूल मिलाई है॥
अब शीघ्र यहाँ से ले जावो, और विजन स्थान छोड़ो जाकर।
दुष्टा ये स्वयं मर जावेगी, अपनी करनी का फल पाकर॥

दोहा

कैसे पाला था इसे, लाड चाव के साथ।
मेरे गौरव का किया, इस दुष्टा ने घात ॥

अमृत मे विष बेल और, घन से बिजली होती पैदा।
दीपक से जैसे काजल, तैसे यह मुझसे हुई पैदा ॥
सर्प कटी हुई अंगुली को, रखने से जहर पसरता है।
इसी तरह इसको रखने से, अपयश मेरा बरसता है ॥

दोहा

देख सका ना दुःख महा, मन्त्री चतुर सुजान।
राजा को कहने लगा, ऐसे मधुर जबान ॥
राजन् करना चाहिये, सोच समझ कर काम।
गुप्त महल रखो इसे, लेवो भेद तमाम ॥

ससुर गृह रूसे लड़की तो, पीहर में आ जाती है।
यहाँ से आगे और कही पर, ठौर नहीं दिखलाती है ॥
जल मे नही अग्नि होती, ना ज्ञान असंगी पशु में है।
इस लड़की मे कोई दोष नही, यदि है तो केवल ससु में है ॥

दोहा

मन्त्री तुमको नही पता, पवन जय प्रदेश।
यहां भी घृणा थी उन्हे, कारण कौन विरोष ॥

अपनी बेइज्जती पर मन्त्री, सब कोई पर्दा पाता है।
ऐसा कौन है दुनिया में, जो अपनी धूल उड़ाता है ॥
जब छिपी हुई यह बात नहीं, फिर कहो तो क्या बन सकता है।
यदि वमन उछल गई छाती से, तो रोक कौन जन सकता है ॥

दोहा

आज्ञा पाकर भूप की, ले गये वन मंझार।
वसन्तमाला और अंजना, छोड दई निराधार ॥
दोनो उस वन खड मे, रोवे आंसू डार।
व्याकुलता छाई अति, दर्शत कष्ट अपार ॥

अंजना गाना नं० ३५

दुख पड़ गया हम पर भारा, इस बेइज्जती ने मुझको मारा।
बारा वर्ष पति की जुदाई, मुश्किल से बनी थी रसाई ॥
फिर गर्भ ये मैंने धारा, इस बेज्जती ··· ।१।
फिर सासने ताने मारे, वो भी सहन किये मैंने सारे।
आखिर काला मुंह करके निकाला, इस बेज्जती ··· ।२।
पिता पालक भी हो गया उल्टा, माता भाई भी ना कोई सुलटा।
अब तो आशा भी कर गई किनारा, इस बेज्जती ·· ।३।
जिस माता के था जन्म धारा, हाय उसने दिया ना स ।
पति भी परदेश सिधारा, इस बेज्जती ने मुझको मारा।४।
खिला किस्मत का यह फिसाना, मेरा शत्रु बना कुल जमाना।
प्रभु तेरा ही एक सहारा, इस बेज्जती ने मुझको मारा।५।
कौन धीर बंधावे हमारी, इस बन खण्ड के मझधार
विना धर्म ना कोई हमारा, इस बेज्जती ··· ·· ।६।
कहां संग सहेली हमारी, पास रहती थी हर वारी।
आज सबने किया है किनारा, इस बेज्जती ··· ।७।

दोहा (वसन्तमाला)

रानी जी धीरज धरो, तुम हो गुण गम्भीर।
रोने से कुछ ना बने, हरो धीर से पीर ॥

गाना नं ३५

(वसन्तमाला बहरे तवील)

अरि रानी तूं रोके सुनाती किसे,
बिना धर्म के कोई हमारा नहीं।
आके कष्ट से कोई सहायक बने,
ऐसा दुनिया मे कोई प्यारा नहीं।
रानी जब तक सरोवर मे पानी रहे,
वहां चारो तरफ से आ मेला भरे।
सूखे पानी कोई ना चरण आधरे,
उड़ता पत्ती भी लेता उतारा नहीं।
सारे माता पिता मित्र बन्धु कोई,
और सासु सुसर भाई दारा पति।
कोई मीठा वचन भी ना कहता सती,
जब होता है पुण्य सितारा नहीं।
जिन राज भजो मन धीर धरो,
सिद्ध ईश्वर प्रभु का ही ध्यान करो।
शुक्ल शोभन कर्म से ही पाप हरो,
बिना धर्म के होगा गुजारा नहीं।

अंजना गाना नं० ३६

कर्म चक्र ने निश्चय ही मुझे, दरदर रुलाया है।
किसी का दोष क्या इससे, लिखा कर्मो का पाया है॥
किसी को आसरा देकर, निराशा कर् दिया होगा।
इसी कारण मेरी जननी ने, भी मन से भुलाया है॥
सताई है अवश्य निर्दोष, कोई आत्मा मैने।
मुझे व्यभिचारिणी कहकर, जो सासु ने सताया है॥

किसी प्यारी को प्रीतम से, जुदा मैंने किया होगा।
यही कारण जो विरहानल, से मन मेरा जलाया है ॥
विपत्ति सम्पत्ति ऐश्वर्य, सुख दुख और निर्धनता।
स्वयं निज कर्म से प्रत्येक, प्राणी ने बनाया है ॥
अमानत में खयानत, शुक्ल मुझसे हो गई होगी।
जो मुझसे मेरे जीवन, धन को कर्मों ने छुड़ाया है ॥

दोहा

दासी कहे रानी सुनो, यह वन खण्ड उजाड़।
रो रो कर मर जायंगी, कुछ नही निकले सार ॥
कुछ नहीं निकले सार, शेर चीतादि खा जावेगे।
चलो अगाड़ी निकल कहीं, विश्राम फेर पावेगे ॥
पाल गर्भ हो पुत्र तेरे, दुख सभी भाग जावेगे।
पुत्र का मुख देख देख, मन अपना बहलावेगे ॥

दौड़

धर्म है एक सहाई, ना कर चिन्ता मन माहीं।
ध्यान सर्वज्ञ का लावो, पंच परमेष्ठी हिये धार
रानी मत दिल घबरावो ॥

दोहा

दोनो आगे चढ़ चली, निर्जन बन घनघोर।
हिंसक जीव फिरे अति, बोल रहे कही मोर ॥
एक मुनि वहां गुफा मे, खड़े लगाकर ध्यान।
दासी से रानी कहे वह, क्या देख पहिचान ॥

दोहा (दासी)

आते है मुझको नजर, है कोई मुनि महान्।
निश्चय कर मैंने कहा, करते आत्म ध्यान ॥

श्वेत वस्त्र है जैन मुनि, मुख पर मुखपत्ति लगी हुई।
दो हाथ लटक रहे नीचे को, और दृष्टि ध्यान में जमी हुई ॥
ये लाखो में नही छिप सकते, निग्रन्थ मुनि अति श्रेष्ठ यति।
बस अब समझो कि आन जगी, महारानी अपनी पुण्य रति ॥

दोहा (रानी)

दर्शन हो निग्रन्थ के, निश्चय कटते पाप।
दासी मेरी फड़कती, वामी है शुभ आंख ॥

गाना नं० ३७

समझ ले अब विपत्ति, दूर सारी होने वाली है।
जाग आयेगी शुभ किस्मत, मुसीबत सोने वाली है ॥
मुनि के चल करें दर्शन, हाल पूछेगी कर्मो का।
श्री जिन वाणी मेरे, आज मल को धोने वाली है ॥
पुण्य मेरे उदय आये, पाप सब दूर जायेंगे।
कृपा अरि हन्त भगवन् की, बीज शुभ बोने वाली है ॥
रत्न सम्यक्त्व है मुझ पर, शील संतोष भी कायम।
मुनि संगति मेरी ये आज, कालिस खोने वाली है ॥
विपत्ति और अटवी मे, अनुपम लाभ यह पाया।
मेरे इस धर्म गौरव को भी, दुनिया जोहने वाली है।

चौपाई

उसी समय मुनि पास सिधाई। दर्शन कर रानी सुख पाई ॥
धन्य जन्म प्रभु तुमने धारा। आप तरे औरों को तारा ॥

मै दुखियारी निर आधारा। धर्म रूप आसरा तुम्हारा॥
चरण कमल प्रभु शीश नमाऊं। अनमोल समय यह कब २ पाऊ॥

दोहा

विधि सहित वन्दना करी, करके अति गुण ग्राम।
थकी हुई थी बैठ कर, लगी लेन विश्राम॥

चौपाई

दासी ने फिर शीश नवाया। कर वन्दना निज हाल सुनाया॥
कारण कौन प्रभु बतलावो। कर्म भेद सारा दर्शावो॥
कलंक लगा किस कारण भारी। जिसने हम पर विपदा डारी॥
अमित गति चारण मुनि बोले। कर्म सिद्धांत भेद सब खोले॥
अनन्त कर्म कहां तक बतलावे। कुछ जन्मो का हाल सुनावे॥

दोहा

सुनले रानी कान धर, कर्म बीज वट वृक्ष।
जिसका फल तुम भोगती दोनो ही प्रत्यक्ष॥

जम्बू द्वीप के भरत क्षेत्र मे, मन्दरपुर वर नगरी कहिये।
प्रिय नन्दी एक वणिक, जया नामक जिसकी नारी लहिये॥
पुत्र नाम सागर तिसके, था बाग भ्रमण एक रोज गया।
दर्शन करके श्री मुनिराज के, सम दम खम की खोज हुवा॥

दोहा

निर्मल व्रत को पाल के, दूजे स्वर्ग मंझार।
रुप वैक्रिय धार के, भोगे सुख अपार॥

नगर मृगांक सरि चन्द्र नरेश्वर, प्रियंगु
स्वर्ग छोड़ रानी के जन्मा, सिंह चन्द्र सुत
पुनः देवलोक पहुँचे, तप संयम शुभ
आगे सुनो वृत्तान्त इसी का, फिर ज

दोहा

बैताड़ गिरि है अरुणपुर, भूप सुकण्ठ उदार।
कनकादरी रानी भली, रूप कला सुखकार ॥

कनकोदरी के पुत्र हुवा था. नाम सिंहवाहन जिसका।
राज सम्पदा भोग फेर, संयम में ध्यान हुवा तिसका ॥
विमल नाथ के शासन मे, लक्ष्मी धर मुनि थे तपधारी।
पास उन्हीं के संयम लेकर, तप संयम किया अति भारी ॥

दोहा

शरीर औदारिक छोड़ के, लंतक स्वर्ग मंझार।
मन इच्छित भोगे वहां, जिसने सुख अपार ॥

पूर्ण कर वह सुर की आयु, गर्भ तेरे मे आया है।
सुखदायक सन्देशा अंजना, पहिले तुम्हे सुनाया है ॥
इस पुत्र के पैदा होते ही, दुख तेरा नस जायेगा।
और पूर्व से भी अधिक, तेरे हृदय मे सुख बस जायेगा ॥
चर्म शरीरी जीव इसी भव में, यह मोक्ष सिधायेगा।
यह नाम प्रसिद्ध करके तेरा, अति शूर वीर कहलायेगा ॥
अब हाल तेरा बतलाते हैं, यहां कनक रथ एक राजा था।
थी कनक पुरी राजधानी, नीति से राज्य चलाता था ॥

दोहा

कनकोदरी लक्ष्मीवती दो थी जिसके नार।
कनकोदरी के सुत हुआ, रूप कला शुभकार ॥

चौपाई

लक्ष्मीवती सुत दिया लकोई, पुत्र विरह मे माता रोई।
भेद मिला सुत लिया निकाल, बारा घड़ी दुःख हुवा मुहाल ॥

हुई बेज्जती और कर्म बन्धाया, उसका फल रानी तू पाया ॥
फिर लक्ष्मी ने धर्म शुद्ध पाला, पहिले स्वर्ग सुख अधिक रसाला ॥

दोहा

देव लोक सुख भोग के, आई तू इस धाम ।
पवन जय है पति मिला, अंजना तेरा नाम ॥

वसन्ततिलका वहिन तेरी थी, इसने प्रशंसा अति करी ॥
सामूदानी कर्म भोगने, यह भी तेरे साथ वरी ॥
जो कोई दुख दे औरो को, वह कभी नही सुख पाता है ।
वस्मा जैसे कभी नहीं, मेहन्दी जैसा रंग लाता है ॥

दोहा

अशुभ कर्म रानी तेरा, होने वाला दूर ।
मामा आन मिले तुम्हे, मिले सभी सुख भूर ॥

पति भी आन मिले जल्दी, मत घबरावो मन में रानी ।
गगन गति कर गये मुनि, चारण कह कर शीतल वाणी ।
रानी ने चरण धरा आगे, एक सिंह सामने जबर खड़ा ॥
यह देख शेर को घबराई, जैसे हृदय पर वज्र पड़ा ॥

दोहा

शरणा ले अरिहन्त का, पढ़न लगी नमोकार ।
उधर खड़ा है शेर वह, इधर खड़ी है नार ॥

शील धर्म का तेज शेर, नही आगे पैर बढ़ाता है ।
अनमोल श्री जिन धर्म, सभी आपत्ति दूर भागता है ॥
मणि चूड़ एक विद्या धर, उस बन मे गया विचरने को ।
और अष्टापद का रूप किया, अबलाओं का दुख हरने को ॥

दोहा

अष्टापद के रूप को, देख भागा यह शेर।
रानी भी आगे बढ़ी, तनिक लाई देर॥
आगे जाकर आ गया, सुन्दर एक स्थान।
दासी रानी ने वहां, किया देख विश्राम॥

शुभ नक्षत्र लगा आन, रानी ने पुत्र जाया है।
रूप रंग को देख स्वयं, चन्द्रमा भी शर्माया है॥
प्रसन्न चित्त हो रानी भी, अपने मन में हर्षाई है।
वर्तमान निज दशा देख, कुछ दिल में आर्ति आई है॥

दोहा

हाय आज वन खण्ड मे, मै दुखियारी नार।
राज महल लेता जन्म, होती खुशी अपार॥

गाना नं० ३८

लाल मेरे बेटा मेरे ओछे है भाग—(स्थायी)।
पिता आज तेरा आता, तुझे हृदय लगाता॥
उत्सव अधिक मनाता, तेरा कर अनुराग।
नारी मङ्गल गातीं, हाथों धाइयें खिलातीं॥
नानी भूषण पहनाती, लागी लेते सब लाग।
कैदी सब छूट जाते, दानशाला मंडाते॥
ले ले बधाइयां आते, गाते मङ्गल राग।
लेता जन्म राजधानी, करता सैर विमानी॥
पिता साथ रानी, मम दिल होता बाग बाग॥
वन वन फिर फिर हारी, मैं हूं कर्मों की मारी।
शुक्ल दुःख यह भारी, लग रहा सीने पर दाग॥

दोहा

विद्याधर प्रति सूर्य, जा रहा बैठ विमान ।
अबलाओं का रुदन सुन, ऐसे बोला आन ॥
कहो वहिन तुम कौन भयानक, निर्जन वन मे आई हो ।
रही उदासी छाय बदन पर, क्यो इतनी घबराई हो ॥
कारण इसका बतलावो, और पता चिन्ह अपना सारा ।
तुम हो मेरी बहिन धर्म की, मै सच्चा वीरन थारा ॥

गाना नं० ३६

बताएं क्या भला तुम को, निशां अपना पता अपना ।
नहीं संसार मे कोई, नजर आता सगा अपना ॥
न माता न पिता कोई, न सासु ही बनी अपनी ।
पत्नी जिनकी बनी थी मैं, नही वह भी बना अपना ॥
नहीं पाताल मे आकाश मे, तिरछे मे ठोर अपनी ।
रही एक सिद्ध शिला बाकी, वहाँ पर वास ना अपना ॥
ठिकाना बेठिकानो का, किसी वन मे ना उपवन मे ।
निराशा मात है अपनी, दर्द दुख है पिता अपना ॥
जगत भर ने तो ठुकराया, भुलाये भूलना चिन्ता ।
शुक्ल मै ढूंढ हारी ना मिला, कोई सखा अपना ॥

दोहा (प्रति सूर्य)

समझ लिया मैने, तुम्हे है आपत्ति भूर ।
कहो यथार्थ बात जो, करूं सभी दुःख दूर ॥

दोहा (वसन्त तिलका)

पवन जय भारत है, महेन्द्र नृप तात ।
केतुमति सासु सही, हृदय सुन्दरी मात ॥

नाम अंजना रानी का मै हूॅ, वीरन दासी इसकी ।
नहीं सासरा पिहर हमारा, तो फिर आस करें किसकी ॥
पवन जय संग्राम गए है, केतुमती घर कंकाली ।
कलंक दिया घर बाहर निकाला, यह हम पर विपदा डारी ॥

दोहा

प्रतिसूर्य कहने लगा, नयनों में भर नीर ।
मै पुत्री मामा तेरा, धारो मन मे धीर ॥

चौपाई

पुत्र भानजी सखी समेत, बैठे विमान अति दिल हेत ।
निज नगरी को चला महाराय, हर्ष हृदय मे नहीं समाय ॥

दोहा

विमान बीच एक झूमका, सुन्दर शब्द रसाल ।
बच्चा लेने उछलता गिरा, धरन तत्काल ॥
माता हुई उदास बदन के, रंग ढंग सब बिगड़ गये ।
किया रुदन अपार मात क्या, सब ही के दिल धड़क गये ॥
गिरा समझ पर्वत ऊपर, जीने से सभी निराश हुए ।
प्राण पखेरू समझ लिया, अब इसके परभव बास हुए ॥

दोहा

उसी समय विमान को, नीचे लिया उतार ।
देखा बच्चा शिला पर, करता सुख संचार ॥
कुमर गिरा जिस शिला पर, हो गई चकनाचूर ।
कहे मामा पुण्यवान यह, महाबली अति शूर ॥
उसी समय ले किया प्यार फिर, शीघ्र मात के अंक दिया ।
जरा मात्र ना लगी चोट यह, समझ नाम बजरंग दिया ॥

मता ने लेकर बच्चे को, अपने हृदय लगाया है।
वह खुशी कथन नहीं कर सकते, फिर आगे पेच दबाया है ॥

चौपाई

आ उत्सव हनुपुर मे कीना। मामे दान खोल कर दीना ॥
कैसे कहे अद्भुत छवि न्यारी। घर घर मंगल गावे नारी ॥
हनुपुर नगर दशोठन भारी। हनुमत नाम दिया सुखकारी ॥
अपर नाम श्री शैल प्रधान। कल्प वृक्ष सम सुख महान ॥
राज हंस जिम क्रीडा करे। बत्तीस लक्षण शुभ अंग परे ॥
सुख को देख मात सुख पावे। दाग देख अति मन मे लजावे ॥

दोहा

और दुख सब हट गये, सुख मिल गया अमोल।
दुःख एक बाकी रहा, जो सिर चढ़ा कुबोल ॥

धन्य घडी धन्य भाग वही, जब पति मेरा घर आवेगा।
रही समुद्र-डूब वही। कालस आ दूर हटावेगा ॥
सत्य मेरा प्रगट होगा, यह दाग पति आ धोवेगे।
धक्के दिये जिन्होने मुझको। लज्जित अन्त मे होवेंगे ॥

दोहा

पवन जय नप वरुण से, जीता दल मे जाय।
हर्ष हुए दिल मे अति, सब प्रशंसे आय ॥

प्रस्थान किया सबने वहां से, रावण लंका को आया है।
और पवन जय ने आन पिता, माता को शीश नवाया है ॥
जब पता लगा निज रानी का, हृदय पर वज्रपात हुवा।
झट गिरा धरन मुर्च्छित होकर, पितु माता को संताप हुआ ॥

दोहा

निर्दोषन को दुख दिया, अन्याय कियो तें मात ।
बिना मौत मारा उसे, मेरी कर दई घात ॥
मेरी कर दई घात मात, तैंने यह पाप कमाया ।
बारह वर्ष सहा दुख जिसने, अन्तिम धक्का खाया ॥
पहिले देकर दोष फेर, तैंने पिहर पहुंचाया ।
इसका फल अब समझ मात, तूने पुत्र नहीं जाया ॥

दौड़

कहां देखू अब जाई, शेर चीते ने खाई ।
मरूं अब मार कटारा, निर्दोषन को दिया दुख
मैं महा पापी हत्यारा ॥

दोहा

मात पिता तथा मित्र ने, लिया कुमर समझाय ।
देखन को चारों तरफ, दिये विमान दौड़ाय ॥
अंजना के पितु माता से, पता लिया नृप जाय ।
महेन्द्र नृप ने कहा । बनखण्ड दई पहुँचाय ॥
साले आदि चले सभी, सब स्थानो में खोज करी ।
पैदल फौज फिरे बन बन, विमान शहर और गिरि गिरि ।
नहीं पता चला कुछ रानी का, तब पवन जय घबराया है ॥
और पास बुलाकर मित्र को, अपना सब भेद बताया है ।

दोहा

मित्र कहो जा मात से, मम अन्तिम प्रणाम ।
मिली नहीं अंजना सती, करूं वास सुरधाम ॥
समझाया मित्र ने पर, नहीं कुमर एक मन में मानी ।
फिर शस्त्र सब लिये मांग, प्रहसित बोल मीठी वाणी ॥

चला वहाँ से माता को, जो था सब हाल सुनाया है।
सुन गिरि धरन मूर्छित होके, इतने मे राजा आया है॥

दोहा

हो सचेत कहने लगी, मै पापिनी निर्भाग्य।
बधु गई पुत्र चला, लगी कलेजे आग॥

गाना नं० ४० (केतुमति)

जो सतावे और को, सुख वह कभी पाता नहीं।
आज अब मुझ पर बनी, यह दुःख सहा जाता नहीं॥
मैने सताई अंजना, पुत्र मेरा मरने लगा।
राज गारत हो सभी, यह दुःख मुझे भाता नहीं॥
बेटा प्रहसित तूने कभी, मित्र जुदा किया नहीं।
आज क्या होनी बनी, क्यो जाके समझाता नहीं॥
छोड़ तू आया अकेला, घात प्राणो की करे।
फिर शुक्ल मै क्या करूं, कुछ भी कहा जाता नहीं॥

दोहा (प्रहसित)

माता जी मैं क्या करूं, समझाया हर बार।
जब मैं कुछ न कर सका, तब आ करी पुकार॥
शस्त्र तो मै ले आया, करे और ढङ्ग कुछ खबर नही।
था दिल मे बेचैन उसे, कोई घड़ी पलक का सबर नहीं॥
शीघ्र बैठ विमान चलो, जाकर उनको समझावेगे।
यदि हुई देर अपघात करे, कर मलते ही रह जावेंगे॥

दोहा

इतने मे ही आ गया, हनुपुर से विमान।
अंजना का जो था पता, सभी बताया आन॥

राजा रानी और मित्र, प्रहसित पवन पे आये है।
था जलने को तैयार चिता मे, देख सभी घबराये हैं॥
शीघ्र कुमार को हटा लिया, लक्कड़ सब दूर हटाये हैं।
हनुपुर है अन्जना रानी, सब भेद खोल दर्शाये है॥

दोहा (प्रह्लाद नरेश)

शूरवीर योद्धा बली; क्षत्रिय राजकुमार।
नारी पीछे जान दे, यह क्या करी विचार॥

दोहा (पवनजय)

अबला पीछे मरन का, मम नही पिता विचार।
निर्दोषन को दुख दिया, यही कष्ट अपार॥
इतने कष्ट दिये सबने, नही रोष फेर भी लाती है।
अवगुण तज लेती गुण सबके, पूर्ण सती कहाती है॥
पतिव्रता विनयवान् पूरी है, मानन्द शीतल चन्दन के।
धर्म दृढ़ दुख सहने मे, ऐसी जैसे तरुवर वन के॥

दोहा

पवन जय आदि सभी, हनुपुर हुए तैयार।
बैठ विमान में चल दिये, दिल में खुशी अपार॥
खेचर ने जाकर कहा, हाल अंजना पास।
दुःख पति का सुन हुई, मन मे अति उदास॥
क्या मै पापिन ऐसी जन्मी, जो सबको ही दुखदायी हूं।
सुख नहीं देखा एक दिवस, जिस दिनकी मै परणाई हूँ॥
फिर नहीं ऐसा कर्म करूं, मुनिराज ने जो बतलाया था।
कर्म बीज हो गये गिरि, कुल बारह घड़ी कमाया था॥

दोहा

प्रतिसूर्य भूपाल ने, लिया विमान सजाय।
अंजना सुत दासी सभी, बैठे मन हर्षाय॥
गये सामने मिलने को, मित्र प्रहसित की नजर पड़ी।
झट बोले देखो पवन कुमर, वह दासी रानी दोनो खड़ी॥
इतने में ही आन मिले तो, खुशी का ना कोई पार रहा।
मिले प्रेम से आपस मे, सुख दुख का सारा हाल कहा॥

दोहा

हाथ जोड़ अंजना सती, गिरी चरण मे आन।
पतिदेव का इस तरह, करन लगी गुण गान॥

गाना नं० ४१ (अंजना)

मरे तुम्ही इष्टदेव, दूसरा ना कोई। (स्थायी)
बिन पति पत लाज गई, सासु ससुर ने त्याग दई।
कोटि विपत्ति नाथ सही, यह दुर्गति भई॥१॥
दर्शन बिन नाहीं चैन, खोजत थके राह नैन।
दीन दुखी करत वैन, रैन दिवस रोई॥२॥
जब से पिया रूठ गये, कोटि प्रभु कष्ट सहे।
गौरव गुण नष्ट भये, विपत बेल बोई॥३॥
आवो पिया पधारो पिया, दर्शन दिखावो पिया।
नेत्रो की ज्योत शुक्ल, बाट तकत खोई॥४॥

दोहा

हनुमान के रूप को, देख मोहित नर नार।
सभी लाल को प्रेम से, लेते हाथ पसार॥
उसी समय ले पिता पुत्र को, हृदय तुरत लगाया है।
पुण्य सितारा देख कुमर का, पवन जय हर्षाया है॥

कोई शीश चरण चूमे, कोई प्रेम से लाड लडाता है।
कोई करे लाड की बाते और, कोई लेकर गोद खिलाता है॥

दोहा

माता पिता भाई बहिन, सम्बन्धि परिवार।
सभी हनुपुर आ गये, मिलते भुजा पसार॥

भीड़ एकत्रित हुई बहुत, सब अंजना के गुण गाते हैं।
याचक लोग सभी खुश होकर, जय जय शब्द सुनाते हैं।
उत्सव अधिक हुवा भारी, दस दिन तक मंगलाचार रहा।
सब क्षमा मांगते अंजना से, महासति शब्द गुंजार रहा॥

गाना नं० ४२

प्रति सूर्य ने थाल परोसे, मेवा मिष्टान सजाय के।
प्रति सूर्य ने थाल परोसे (ध्रुव)
ऋद्धिसिद्धि पुण्य के प्रताप से विराजी आय।
मोतिया क्या मेसूपाक, अमृति वेदाना जान।
रसगुल्ला चक्की वालु स्याही जलेबी और खुरमा जान जी।
बदाम पाक पेड़ा बरफी घेवर लड्डू कलाकन्द ले ज तो नौरंगी।
बूंदी केवड़े की है सुगंध, अन्दर सा गुलाब जामुन।
मलाई लच्छे की बरफी, खाने से होवे आनन्द।
फिर सोहन हलवा लाय के मठडी और सुहाल परोसे॥१॥

पूरी और कचौरी वब्बर घेवर माल पूवे खीर।
पूर्ण पोली मेवा के समोसे, नमकीन बीर।
स्वर्ण झारी सोने के कलसो में भरा नीर जी।
लौंजी सांगर छुवारे सूंठ, मेवा के त्रिकूट करे।
दही बड़े मक्खन बड़े, रायते कई न्यारे-न्यारे।

स्वादिष्ट अचार सब सब मुरब्बे भी लाकर धारे।
पापड़ कई प्रकार के फिर सेवरु दाल परोसे ॥२॥
फल-फूल मेवा कई मिश्रित पक्का तैयार किया।
अरवी भिन्डी मटर कचनार केला तोरी घिया।
व्यजन छत्तीस साग कस्तूरी भिंगार साग।
जीमन समय साज बाज साथ गावे मंगल राग।
शोभन सभी फर्नीचर राजा का सरावे भाग।
भूपाल ने बड़ी उमंग से क्या कहूं जो माल परोसे ॥३॥
पीवे दूध मलाई जामे मिश्री दई है डाल।
जीम पकवान कर धोय के हुवे तैयार।
खाएँ मुख वासना सब शोभा को रहे निहार जी।
राजा जी का महल इन्द्र महल से अधिक मान।
क्यो कि दृढ़ धर्मी उपकारी अति पुण्यवान।
नृप राज ने सन्मुख आनके, फिर सब को माल परोसे ॥४॥

दौड़

क्षेम कुशल वर्ती वहा, सभी प्रसन्न महान्।
फिर वहां से प्रस्थान कर, पहुंचे निज स्थान ॥
आठ वर्ष का जब हुवा, हनुमान् सुकुमार।
गुरुकुल मे पढ़ने लगे, विद्या ही गुण सार ॥
सोलह वर्ष पढ़ी विद्या, सब बहत्र कला का ज्ञान हुवा।
शस्त्र कला क्या शास्त्र वेत्ता, शूर वीर बलवान् हुवा ॥
वरुण भूप दश कन्धर का, फिर से युद्ध अपार हुवा।
आज्ञा पा दशकन्धर की, नृप पवन जय तैयार हुवा ॥

दोहा

पवन जय प्रति सूर्य, लगे युद्ध मे जान।
सम्मुख आ हनुमान ने, करी चरण प्रणाम ॥

करी चरण प्रमाण, आपकी प्रेमाज्ञा पाऊं मैं।
स्वयं विराजे सिंहासन, संग्राम पिता जाऊं मैं॥
वरुण भूप को कुचल. मना कर आन अभी आऊं मैं।
धरो पीठ पर हाथ मेरे, क्षत्री सुत कहलाऊं मैं॥
धसूंगा जब जा रण मे, मचे खल बल सब दल में।
क्षत्रिय का बच्चा हूं, देवो मुझे आशीश नही रण
के फल से कच्चा हूं॥

दोहा

आज्ञा पा भूपाल की, चला वीर हनुमान।
सुग्रीवादि भूपति, मिले युद्ध मे आन॥
लगा घोर संग्राम होन फिर, दल बल का कोई पार नहीं।
नभ मे लड़े विमान और, चलते है अग्नि बाण कहीं॥
वरुण भूप के लड़को ने, दशकन्धर नृप को बांध लिया।
जब लगे उठाने रावण को, हनुमान ने आकर रोक लिया॥
वरुण सुतो पर डालकर, नाग फांस का जाल।
दशकन्धर को हनुमान ने खोल दिया तत्काल॥
क्रोधातुर हो वरुण भूप ने, हनुमत को फिर घेर लिया।
लिये सहायता के रावण ने, निज दल आगे ठेल दिया॥
वज्रंग चढ़े जब तेजी से तो, सभी वरुण दल घबराया।
चिन्ह दिया झट सन्धि का, है समय समय की सब माया॥

दोहा

मान सभी मर्दन हुवा, अन्तिम मानी हार।
शर्तें रावण की सभी, करी वरुण स्वीकार॥
वरुण भूप की कन्यका, सत्यवती शुभ नाम।
परणाई हनुमान को, समझ वीर अभिराम॥

अनंग कुसुमा शूर्पनखां की, पुत्री रूपवती प्यारी।
वह हनुमान को परणाई, रावण ने समझा हितकारी॥
वानर पति ने निज पद्म, सुरागा पुत्री वज्रंग को व्याही।
शूरवीर अति बली समझ, राजो ने पुत्रियां परणाई॥

चौपाई

आदर पा हनुमत घर आया। मात पिता को शीश नमाया॥
भोगे सुख पूर्ण संसारी। धर्म जिनेश्वर अति हितकारी॥

—※—

जनक परिचय

दोहा

मिथला नगरी अति भली, हरिवंशी राजान्।
वासव केतु भूपति, विपला नार सुजान॥
तेज बड़ा रवि तुल्य है, नाम जनक जग जोय।
प्रजा पाले प्रेम से, पिता सरीखा होय।

—※※※—

सूर्यवंशावली

दोहा

जिस कुल मे पैदा हुवे, श्रीरामचन्द्रजी आन।
हाल सुनो क्रम से सभी, हुए जो है राजान्॥
जम्बूद्वीप दक्षिणार्ध, अयोध्यपुरी राजधानी थी।
आदीश्वर आद्य नरेश, जिन्होने दया मुख्य मानी थी॥
सुनन्दा सुमंगला नृप के, दो सुन्दर रानी थी।
निन्यानवे पुत्र सुमंगला के, हुए बड़ी जो पटरानी थी॥

दौड़

सुनन्दा के वाहुबल, एक ही सिंह अतुल बल।
बड़ा भरतेश्वर ही था, वज्र ऋषभ संहनन जिन्हों का रूप अति सुन्दर था॥

दोहा

पुत्र वहुत भरतेश के, बड़ा सूर्य यश नाम।
राज तिलक उनको हुवा, शूर वीर बलवान्॥
सूर्य यश से सूर्य वंश, शुभ नाम प्रसिद्ध हुवा भारी।
क्रम से भूप अनेक हुवे थे, शूरवीर पर उपकारी॥
मुनि सुव्रत स्वामी के समय थे, विजय नरेश्वर बलधारी।
पुरन्दर वज्रबाहु दो नंदन. हेम चुला तिस की नारी॥

चौपाई

नगर अदितपुर अति अभिराम, हेमवाहन राजा का नाम।
चूड़ामणि नामक पट नारी, पुत्री मनोरमा अति सुख कारी॥
वज्र वाहु संग किया विवाह, मंगलाचार हुवा उत्साह।
नव वधु कुमर एक दिन लाया, उदय सुन्दर साला संग आया॥
मार्ग मे मुनि सागर पाया, देख कुंवर ने शीश नमाया।
कर गुण ग्राम चरण कर लाये. धन्य भाग शुभ दर्शन पाये॥

दोहा

उदय सुन्दर हासी करी, लेवो संयम भार।
बार बार यह ना मिले, मनुष्य जन्म अवतार॥

गाना नं० ४३

तर्ज—सदा तुम करते रहो जी त्यागी मुनि का संग (ध्रुव)
रतन हीरे कंचन सब ही होते रंग विरग।
ज्ञान दर्श चारित्र धारो करो कर्म से जंग।१।

समकित धारो कर्म विडारो, मोह कर्म कर भंग।
समदम खम को धार हृदय में, तज सब रंग विरंग ।२।
काया माया बादल छाया, यह संसार भुजंग।
रागद्वेष क्या पाप अठारह, करे जीव को तंग ।३।
सत संगत से शुभ गति पावे, मनुष्य तिर्यच विहंग।
धर्म या धर्मी बिना ना पाले, कोई किसी का अंग ।४।

दोहा (वज्रबाहू)

तुमभी क्या तैयार हो, लेने को यह भार।
इससे बढ़कर है नहीं, दुनियां में कोई सार ॥

दोहा (उदय सुन्दर)

चार महाव्रत धार लो, मैं भी हूं तैयार।
देरी का क्या काम है, यही बात का सार ॥

राजकुमर फिर मुनि पास से, संयम व्रत धारण लागा।
उदय सुन्दर यह देख हाल, फिर पीछे को भागन लागा ॥
बोला यह बात हास्य की है, विवाह का जरा विचार करो।
रोवेगी बहिन मेरी पीछे, मुझ पर ना यह संताप धरो ॥

दोहा (वज्रबाहु)

कुलवन्ती है यह सती, मन में फिकर ना धार।
वचन न तोड़े शूरमा, तोडे मूढ़ गंवार ॥

क्षत्रिय नहीं कहलाता है वह, जिसे वचन का पास नहीं।
है उसका यदि प्रेम धर्म से, होगी कभी उदास नही ॥
जन्म मरण का अन्त नही, फिर सदा यहां किसने रहना है।
शुभ अवसर मिले ना बार-बार, बस यही हमारा कहना है ॥

गाना ४४

तर्ज (साफ हृदय से रटो माला श्री भगवान् की)

मनुष्य को अपने वचन का । पास होना चाहिये ।
आपत्तियो के सामने नही ह्रास होना चाहिये ॥ १ ॥
संयमी जीवन बने तो और कुछ चाहिये भी क्या ।
ससार या मोह कर्म का नहीं । दास होना चाहिये ॥२॥
तरसते है देवगण । अनमोल संयम के लिये ।
साधन मिला तो काम भी कोई खास होना चाहिये ॥३॥
पूरण रत्न सच्चे महाव्रत । आज गुरुवर दे रहे—
सार्टिफिकट ले मोक्ष मे ही । वास होना चाहिये । ॥ ४ ॥
संयोग सब नश्वर जगत के । स्वप्नसम माया सभी ।
वीतरागी ज्ञान का अभ्यास होना चाहिये ॥ ५ ॥
कह चुके अब शुक्ल क्षत्री का वचन टलता नहीं ॥
ज्ञानक्रिया से कर्म का नास होना चाहिये ॥६॥

दोहा

समझ लिया संयम बिना, मिले नहीं निर्वाण ।
चार महाव्रत धार के किया आत्मकल्याण ॥

विजय भूप को पता लगा, वैराग्य भाव दिल आया है ।
पुरन्दर सुत को दिया राज, तप संयम मे चित्त लाया है ॥
पुरन्दर भूप ने निज सुत कीर्तिधर को ताज सजाया है
फिर छोड़ दिये जंजाल सभी, तप संयम ध्यान लगाया है॥

दोहा

कीर्तिधर नृप का सदा, रहता चित्त उदास ।
मन्त्रीश्वर कहने लगा, भूप न तज रणवास ॥

चौपाई

जब घर नन्दन जन्मे आई । तब संयम लेना नृपराई ॥
जिसके पीछे नहीं सन्तान । उसका घर श्मशान समान ॥

दोहा

मन्त्री की यह बात सुन, लिया भूपमनमोड़ ।
बोला सुत होगा तभी, देवेगे मोह तोड़ ॥
सहदेवी के पुत्र हुवा, नही भेद बताया रानी ने ।
पर ऐसी नहीं यह चीज, हमेशा छिपे कहीं राजधानी मे ॥
लगा पता जब भूपति को, ता जन्म उत्साह किया भारी ।
सुत अपने को दिया राज, और आप बने सयम धारी ॥

दोहा

जिनवाणी हृदय धरी करते उग्र यिहार ।
पुरी अयोध्या आ गये, विचरत वह अणगार ॥
सुना आगमन मुनि का, रानी मन दुख पाय ।
प्रथम राज को तज गया, अब ना सुत ले जाय ॥
अन्य फकीर बुलाये रानी, जटा जूट जक्कड़ धारी ।
दिनरात जहां उड़ता सुलफा, और बम बम शब्द रहे जारी ॥
फिर उनसे कहा यह रानी ने, यह साधु शहर वाहिर कर दो ।
यदि तंग करे तुमको कोई, तो मुझको शीघ्र खबर कर दो ॥

दोहा

अब तो फिर क्या ढील थी, चढ़े वह भंगड नाथ ।
नगर बाहर मुनि कर दिया, धक्कम धक्के साथ ॥
जब सुनी बात यह जनता ने, तो दिल मे दुख हुवा भारी ।
यह दशा देख कर बाबो ने, की रानी से आहो जारी ॥

शान्त भाव मुनिराज रहे, न क्रोध जरा भी आया है।
और उधर धाय माता ने, भूप को सुकौशल समझाया है॥

दोहा

बिचरत मुनि आया यहां, बेटा तेरा तात।
नगर बाहर करवा दिया, ऐसी तेरी मात॥
लाड चाव के साथ मे, पाला तेरा बाप।
हाय आज उसको दिया, राणी ने संताप॥
सुकौशल ने जब सुने, धाय मात के वैन।
दारुण दुख हृदय हुवा, भर आया जल नैन॥

अहो खेद माता ने पिता, मुनि दुख दे बाहिर निकाला है।
फिर हैं संसार के त्यागी वह, संयम व्रत जिन्होने पाला है॥
फंसे जो प्राणी दुनिया मे, उसका होता मुंह काला है।
मिले मोक्ष सुख उसे गायन, जो प्रभु का करने वाला है॥

गाना नं० ४५

तर्ज (म्हारी कौन करेगा पार नैया सागर से—)
त्यागी जन करते पार नैया सागर से

ये संसार-असार कहानी, झूठा नाता राजा रानी,
अन्त नहीं कुछ सार॥१॥
माता ने क्या नाता पाला, निज पति त्यागी बाहर निकाला।
दे धक्के की मार॥२॥
कर्म प्रकृति न्यारी न्यारी, भोगे प्राणी वारी वारी
स्वार्थ का संसार॥३॥
अस्नेही से स्नेह करूंगा, वीतराग की सरन परूंगा
हो आत्म उद्धार॥४॥
सम्यक् ज्ञान दर्श चारित्र, वीरता हो शुद्धभाव पवित्र
शुक्ल ध्यान सुख कार॥५॥

दोहा

हुआ तैयार नृप जाने को, उसी समय मुनि पास ।
विरक्त भाव मन में लगी, संयम की अभिलाष ॥
चित्र जयमाला रानी ने, निज पति से विनय उचारी है ।
राजवंश बिन सुत के स्वामी, कैसे चले अगाड़ी है ॥
जा पुत्र तेरे उर जन्मेगा, भूपाल ने ऐसा बतलाया ।
राज तिलक देना उसको बस मेरे मन संयम भाया ॥

दोहा

मन्त्री के सिर पर धरा, सभी राज का भार ।
आप पिता के पास जा, संयम व्रत लिया धार ॥
जब सुना मात सहदेवी ने, झट गिरी धरन मूर्छा खाकर ।
वह आर्तध्यान के वशीभूत, मर बनी सिंहनी झुंझलाकर ॥
सुकौशल और कीर्तिधर, मिल पिता पुत्र यह दोनो मुनि ।
तप संयम मे लीन हुए, शुभ शुक्ल ध्यान मे लगी ध्वनि ॥

दोहा

चातुर्मास के बाद फिर, कर दिया उग्र विहार ।
आन मिली वह सिंहनी, मार्ग के मंझधार ॥
मुनिवर बोले सुनो शिष्य, यह अति परिसह आया है ।
अब होने दो मुझ को आगे, तप संयम बहुत कमाया है ॥
बोले शिष्य क्यो कायर बनूं मैं आपका शिष्य कहाता हूँ ।
और करूँ तुम्हें डर कर आगे, इस बात से मैं शर्माता हूँ ॥

गाना नं० ४६

तर्ज—(मैं सच्चा भक्त बन जाऊँ, प्रभु देश धर्म गुरु जन का)
मै सच्चा भक्त बन जाऊ, गुरु त्यागी श्री जिनवर का । (ध्रुव)
परिसह मिलकर लाखो आवे, सिंह या फनियर आके डरावे ।

रंचक भय नहीं लाऊँ ॥ गु० १ ॥
आपने ही ये ज्ञान सिखाया, निर्भय सेवा कर्म बताया।
कर्त्तव्य पथ बलि जाऊँ ॥ गु० २ ॥
कर्म वीर मैं क्षमा धीर हूँ, षट काया का एक पीर हूँ।
तन की बलि चढ़ाऊँ ॥ गु० ३ ॥
अब जल्दी गुरुवर मोहे तारो, सहित आलोचना के संमारो।
कृतकृत्य बन जाऊँ ॥ गु० ४ ॥
शुक्ल ध्यान हो क्षिपक श्रेणी, ज्ञान दर्श चारित्र त्रिवेणी।
निज गुण को प्रगटाऊँ ॥ गु० ५ ॥

दोहा

पीछे कर निज गुरु को, आगे हुआ मुनि वीर।
आई सिंहनी कूद के, लक्ष्य पै जैसे तीर ॥
मुनि समाधि लीन ध्यान, क्षपक श्रेणी का लाया है।
जिस सुत को पाला माता ने, बस आज उसी को खाया है ॥
ब्रह्मज्ञान अन्तिम पाकर, मुनि जा निर्वाण सिधाया है।
कीर्तिधर ने भी अन्तर पा, अक्षय मोक्ष पद पाया है ॥

दोहा

चित्र जयमाला नार ने, जाया सुन्दर नन्द।
हिरण्यगर्भ नामे भला, शत्रु कन्द निकन्द ॥
हिरण्यगर्भ के नार है, मृगावती शुभ नाम।
नधुक नाम का सुत हुआ, दुःखी जन को विश्राम ॥
हिरण्यगर्भ भूपाल ने, देखा श्वेत सिर केश।
विरक्त भाव मन मे हुआ, सुन यमदूत सन्देश ॥
दिया नधुक को ताज भूप ने, आत्म कार्य सारा है।
रानी सिंह का नधुक भूप के, रूप रंग कुछ न्यारा है ॥

शास्त्र कला की थी ज्ञाता, पतिव्रता धर्म बजाती थी।
लिये पति के करूँ न्योछावर, प्राण तलक यह चाहती थी ॥

दोहा

उत्तर दिशा भूपाल का लगा होन संग्राम।
दक्षिण आक्रमण किया, एक शत्रु ने आन ॥

एक शत्रु ने आन तुरत, रानी ने करी चढ़ाई।
शत्रु को पराजय करके, अपने महलो मे आई ॥
भूप नघुक ने जब रानी की, सभी बात सुन पाई।
देख वक्र व्यवहार, दुराचारण नृप ने ठहराई ॥

दौड़

फौज कम नहीं हमारी, युद्ध में गई क्यों नारी।
बेइज्जती का कारण है, कहे नपुंसक हमको दुनिया,
रानी गई लडन है ॥

दोहा

कुछ विरुद्ध रहने लगा, रानी से महाराय।
भ्रम छेदने का रही, रानी सोच उपाय ॥
एक समय महाराज को, उत्पन्न हो गई दाह।
औषधि ना कोई लगे, दिल मे दुख अथाह ॥

रानी किया विचार भ्रम, राजा का दूर हटाऊं अभी।
निश्चल हो बीजाक्षरो से, किया नमोकार का जाप तभी ॥
मै पतिव्रता यदि पूर्ण हूँ, कोई अन्य पुरुष नहीं बांछा।
तो मम हाथ फेरने से, पति देव मेरा होवे अच्छा ॥

दोहा

रानी ने यह बात कह, फरसा नृप का अङ्ग।
रोग तुरन्त भागा सभी, गरुड़ से जिमे भुजंग ॥

भ्रम दूर नृप का हुवा, मन में खुशी अमूल ।
पूर्ववत् राजा हुवा, रानी के अनुकूल ॥
पुत्र हुवा महारानी के, सौदास नाम रक्खा जिसका ।
दिया पुत्र को ताज क्योंकि, संयम में ध्यान हुवा नृप का ॥
अष्टाइक उत्सव करके, श्री जिनवर का गुण गाया है ।
जीव न कोई मारे ऐसा, नृप ने हुक्म सुनाया है ॥

दोहा

सौदास नृप को कुव्यसन था, एक कुसंग अनुसार ।
हर घड़ी मदिरा मांस से, करता था' वह प्यार ॥
देख समय मंत्रीश ने, दी शिक्षा सुख कार ।
नहीं राजा का कर्म यह, जो पकड़ा व्यवहार ॥

चौपाई

पूर्व पुरुष हुवे जितने भी, मांस नहीं खाया किसी ने भी ।
अभक्ष्य पदार्थ जो कोई खावे, धर्म नष्ट हो नरक में जावे ॥
ऊपर से नृप करी सफाई, अन्दर वसा मांस मन माही ।
पाचक से बोले नृप राई, मांस बिना क्षण रहा ना जाई ॥

दोहा

अय पाचक यदि तू मुझे, आज खिलावे मांस ।
पारितोषक देऊं तुझे, पूरूं मन की आस ॥
अति अन्वेषण किया भृत्य ने, मांस नहीं कहीं पाया है ।
और मृतक एक मिला बच्चा, बस उठा उसी को लाया है ॥
बना दिया वह ही भृत्य ने, जिस समय भूप ने खाया है ।
कई गुणा बढ़ कर आगे से, स्वाद अतितर आया है ॥

चौपाई

एक शिशु नृप नित्य मरवावे । पाया भेद मंत्री समझावे ॥
दुष्ट कर्म यह सुन महाराई । तड़फें पिता जिनके और माई ॥

दोहा

समझाया मंत्रीश ने, नही माना भूपाल ।
राज पुरुष प्रजा सभी, बिगड़ गये तत्काल ॥
एक रंग होकर सबने, सीमा से बाहिर नृप राज किया ।
सिंह रथ पुत्र जिसको, प्रजा ने मिल कर राज दिया ॥
दक्षिण दिशा सौदास गया, वहां मुनि मिला इक तप धारी ।
करी चरण प्रणाम मुनि थे, ज्ञानी बाल ब्रह्मचारी ॥
(तर्ज—मैने जान लिया है प्यारे रे झूठा है संसार)
संसार हिंडोला प्यारा रे फरमा गये अवतार ॥टेर॥
जो नर्क गति मे दुख है, तो पशु गति मे क्या सुख है ।
आनन्द सुर गति से विमुख है; नरतन में क्या है सार ॥१॥
यह चार गति का घर है चौरासी का चक्कर है ।
सोलह कषाय दुक्कर है दुख मे फिरता है संसार ॥२॥
हो दस प्रकार से अन्धा, कर्मों के वस में बन्दा ।
यह काल अनादि फंदा रे, स्वप्ने का संसार ॥सं०॥३॥
कभी ऊंचा कर्म बनावे, कभी नीचे को पटकावे ।
क्यो नहीं धर्म शुक्ल दो ध्यावे रे आतम का हितकार ॥४॥

चौपाई

दिया उपदेश मुनि हितकारी । मदिरा मांस पाप महा भारी ॥
यहां बेइज्जती परभव दख कारी । नरको मे अति होय ख्वारी ॥
सुन परभव दु:ख नृप घबराया । तब मुनिवर ने नियम कराया ॥
अशुभ कर्म के बने सुत्यागी । पुण्य दशा पूर्व की जागी ॥

दोहा

नगर महापुर से गये, वहां के जो मंत्रीश ।
नृप हीन प्रजा सभी, चाहते थे कोई ईश ॥

सौदास देख बत्तीस लक्षण, सब प्रजा के मन भाया है।
योग्य समझ दे पंच दिव्य, सिंहासन पर बैठाया है॥
अब लगा सितारा बढ़ने को, नृप अमर बेलवत् छाया है।
और देख समय अब नगर अयोध्या अपना दूत पठाया है॥

दोहा

दूत आन कहने लगा, सिंहरथ के पास।
हुक्म आपको है दिया, नृपराए सौदास॥
मै वैसे भी हूं पिता तुम्हारा, सेवा करो मेरी आकर।
या रण भूमि में आजावो, बस कहूँ साफ मै समझा कर॥
स्वीकार किया नहीं पुत्र ने, सौदास चढ़ा दलबल लेकर।
उधर अयोध्या पति सिंह रथ, आया तुरन्त बिगुल देकर॥

गाना नं० ४७

जिन्दगी है वीरता की, वीरता कमाये जा।
आपति को काट छांट, कदम बढ़ाये जा, पावं को उठाये जा।टेक।
क्षत्रापन की ये ही शान, हाथ मे रखो मैदान,
तोड़ दो शत्रु का मान, धीरता बधायेजा, वीरता दिखायेजा॥१॥
जिन्दगी है चन्दरोज, नाम पाना ये ही मौज,
ठेल दो अगाड़ी फौज, कर्मवीर कहायेजा, शत्रु को दबायेजा॥२॥
देश धर्म न्याय सेवा, पाले पावे मोक्ष मेवा,
शुक्ल गुरु राज सेवा, भाव से बजायेजा, कर्तव्य निभायेजा॥३॥

दोहा

रण भूमि मे जुट गये, पिता पुत्र दो वीर।
पराजय सुत दल मे हुआ, जीता पिता अखीर॥

गाना नं० ४८

हुआ प्रेम उत्पन्न पुत्र का, हृदय से ला प्यार किया।
दोनो राज्य दिये सुत को, और आप मुनिव्रत धार लिया॥

इस अवसर्पणी काल मे, सूर्य वंश महा प्रधान हुवा।
प्रत्येक भूप इस वंश का, अन्तिम सयम ले निर्वाण हुवा॥

दोहा

समय-समय पर प्रकृतियां, उदय और उपशान्त।
आत्म गुण मे लीन हो करें सभी का अन्त।

(तर्ज—पाप का परिणाम प्राणी भोगते)

अपने सुत को जीत के, मैं क्या विजय वाला हुवा।
निज अंश का शत्रु बना, निज हाथ का पाला हुवा॥
देश धर्म समाज घर को, हानि पहुंचाते है जो।
ससार चक्कर मे रुले, इतिहास मुंह काला हुवा॥
गौर कर देखें तो अपने मे ही पायेगी कसर।
किन्तु जड़ा अज्ञान से निज अक्ल के ताला हुवा॥
निज गुण सिवा मुझको शुक्र, वैभव सभी खारा लगे।
है ज्ञान दर्श चारित्र मे, कर्मो ने भंग डाला हुवा॥

दोहा

राज तिलक जिनको मिला, आगे उनके नाम।
अनुक्रम से सुनलो सभी, शूर वीर अभिराम॥
ब्रह्म रथ नृप चतुर्मुख, हेमरथ सत्य रथ।
उदय पृथु वारि शशि, आदिरथ समर्थ॥
मान भ्राता समर्थ बली, वीरसेन शुभ नाम।
प्रत्युमन्यु अति शूरमा, पद्मबन्धु सुख धाम॥
रतिमन्यु मन श्रेष्ठ है, बसन्ततिलक नरेश।
कुबेरदत्त कुंथु सर्म, द्विरद और विशेष॥
सिंह दर्श दिल पाक हरि, कसि पूजी सुखदाय।
पूज्य स्थल प्रोढो शशि, और ककुत्स्थ रघुराय॥

चौपाई

कोई मोक्ष स्वर्ग गया कोई। सूर्यवंश बड़ा जग जोई ॥
पुरी अयोध्या अणरन्य राजा। प्रजा का सारे सब काजा ॥
अनन्त रथ दशरथ दो सुत याके। पुण्यवान सुत दोय पिता के ॥
राज तिलक दशरथ को सजाया। अणरन्य ने संयम चित्त लाया।

दोहा

अणरन्य और अनन्त रथ, सहस्रांशु नृप साथ।
लीन शुक्ल शुभ ध्यान में, सफल जाये दिन-रात ॥
एक मास की आयु में, दशरथ को मिला ताज।
चंद्र कला सम बढ रहा, दिन प्रति दल बल साज ॥
अस्त्र शस्त्र आदि सभी, बहत्र कला का ज्ञान।
विनय विवेक विचार सब, पण्डित चतुर सुजान ॥
यौवन वय प्राप्त हुवा, शूरवीर बलधार।
दाता भोक्ता और गुणी, वसुधा यश विस्तार ॥
दर्भ स्थल का भूप सुकौशल, अमृत प्रभा रानी जिस के।
इन्द्राणी अवतार अनुपम, अपराजिता सुता तिस के ॥
दशरथ नृप को परणाई, जहां उत्सव हुवा अति भारी।
प्रेम परस्पर दम्पति में, जैसे के समक्ष क्षीर वारि ॥

दोहा

त्र सुभू भूपाल के, सुशीला रानी जान।
सुमित्रा पुत्री भली, चौसठ कला निधान ॥
विवाह हुवा जिसका दशरथ से, भूप ने प्रीति दान दिया।
ग्राम प्रान्त सेवक जन भी, देकर उत्तम सम्मान किया ॥
पूर्व पुण्य प्रगटा आकर, दिन-दिन प्रति वृद्धि पाता है।
उधर ज्योतिषी से रावण, निज हाल पूछना चाहता है ॥

रावण का भविष्य

दोहा

एक दिवस रावण-प्रभु बैठा, सभा मंझार।
ज्योतिषी से तव प्रश्नयूं, किया समय विचार॥

गाना नम्बर ४९

तर्ज—(पाप का परिणाम—।)

कौन है संसार मे जो मेरी तुलना कर सके।
मै हूँ ऐसा भी कोई कहने का जो दम भर सके॥१॥
नेत्र उठते ही मेरे त्रिलोकी थर थर कांपती।
प्राण त्यागे बिन मेरा हुंकार कोई जर सके॥२॥
सुर पति भी कांपते है—मनुष्य मात्र चीज क्या।
मेरे वैभव को न सब ससार मिल के हर सके॥३॥
तेरे ज्योतिष में कहो क्या दीखता है सो बता।
कौन योधा मेरे सनमुख, पांव आकर धर सके॥४॥
अष्टांग निमत्तक की शुक्ल परीक्षा ही करनी है मुझे।
वरना आगे सिंह के क्या हिरण तृणां चर सके॥५॥

दोहा

परदारा सम्बन्ध से, करे कोई मेरी घात।
सभी असम्भव सी लगी, मुनि कथन की बात॥
तीन खण्ड मे बतलावो, कोई है मुझको मारन वाला।
सुनते ही नाम मात्र मेरा, योद्धा पर छा जाता पाला॥
असुर भी आज कांपते है, फिर मनुष्य मात्र है चीज ही क्या।
मसल दिये सब ही कांटे, और सहस्र एक साधी विद्या॥

दोहा

निमन्तक तब कहने लगा, सुनो श्री महाराज।
सदा किसी का ना रहा, आयु साज समाज॥

यही अनादि नियम अटल है, कभी सवेरा श्याम कभी।
बने सुरपति पुण्य उदय, हो हीन पुण्य खुश जाय सभी॥
चक्रवर्ती से चले गये, ना जिस्म किसी के साथ गया।
राज खजाने गए छोड़ था, जिसका भाग्य संभाल लिया॥

गाना नं० ५०

पैदा हुवा जो मही पर, अन्तिम वह एक दिन जायगा।
फूल खिलकर बाग मे, आखिर को वह कुम्हलायगा॥
यह महल मन्दिर और खजाने, सब पड़े रह जायंगे।
डेरा बने परभव मे जा, जब काल सिर पर आयगा॥
राज पाट और फौज पलटन, मित्र गण के देखते।
सामने बन्धु जनो के, काल तुमको खायगा॥
अङ्गरक्षक पुत्र नारी, क्या सहायक जन सभी।
इनके द्वारा ही यह तन, अग्नि मे डाला जायगा॥
हो रह खुश देख सम्पत्ति, सो सभी काफूर हो।
आप जैसो का पता नहीं, आपका कहां पायगा॥

दोहा

इन्द्रादिक भी ना रहे, मनुष्य मात्र क्या चीज।
उलट पलट संसार का, श्री जिन भाषा बीज॥

जनक सुता के हेतु भूप, दशरथ सुत तुमको मारेगा।
तीन खण्ड का बने अधिपति, ताज शीश निज धारेगा॥
लगे सभी अट अट हंसने, उसका उपहास उड़ाते हैं।
तब वीर विभीषण सभा मध्य, अपने यो भाव सुनाते है॥

दोहा

दशरथ को और जनक को, परभव देऊ पहुंचाय।
उत्पत्ति होवे नहीं, बीज दग्ध हो जाय॥
नाश करूं दोनो का जाकर, झूठा इसे बनाऊंगा।
सब देऊ खटका मेट भ्रात का, तभी अन्न जल पाऊंगा।
थे नारद जी वहां विद्यमान, सुन बात सभी मिथिला आये॥
और भाव विभीषण के नारद ने, जनक भूप को समझाये।
फेर अयोध्या में आकर के, दशरथ को समझाया है।
भयभीत हुआ यहां रघुवंशी, मिथिलेश वहां घबराया है॥
तब मन्त्री ने यह समझाया, तुम लिये यात्रा के जावो।
हम ठीक सभी कुछ कर लेगे, पीछे का भय तुम मत खावो।

गाना नम्बर ५१

समय को देख के सब कार्य करना ही मुनासिब है।
धैर्य गंभीरता से, बात को जरना मुनासिब है ॥१॥
जलवायु बदलने को, जनक और आप कहीं जावे।
भार मुझ ही जो कुछ है, सभी धरना मुनासिब है ॥२॥
करूंगा जो भी कुछ मैं वह, तुम्हे भी कह नहीं सकता।
पंच परमेष्ठी का लेना, एक शरणा मुनासिब है ॥३॥
शुक्ल ले शरण जिनवर का, गुप्त यहां से निकल जावो।
राजमोह भेष और सब कुछ, विसरना ही मुनासिब है ॥४॥

दोहा

भेष बदल कर चल दिये, छोड़ राज घर बार।
पीछे मन्त्री ने किया, अद्भुत एक विचार॥
लेपमयी तस्वीर एक, दशरथ की मूर्ति बनाई है।
रंग आदि भर के सब ही, सिंहासन पर बैठाई है॥

अद्‌भुत ढंग रचा ऐसा, पहिचान कौन कर सकता है।
वर्णन क्या हम करें ना, दम शंका का कोई भर सकता है॥

दोहा

यही ढंग मिथिलापुरी, जनक भूप का जान।
समय देख कर आगया, विभीषण बैठ विमान॥

बैठ विमान विभीषण ने, इक घूम गगन मे लाई है।
शीघ्र वाजवत् देख समय, अपनी तलवार चलाई है॥
फेर व्योम में दौड़ गए, थी मन्त्री की हथफेरी सब।
पकड़ो-पकडो दुष्ट गया वह, मारके नप को जान से अब॥

दोहा

ज्ञान था मन्त्री को सभी, शत्रु गगन मंझार।
निश्चय दिलवाने निमित्त, शुरू किया व्यवहार॥

अङ्गरक्षक सेवक योधे, सब मारे-मारे फिरते है।
सब रुदन करें रानी सेवक, जन जरा धीर नहीं धरते हैं॥
सिंहासन पर पड़ा भूप, बस रक्त ही रक्त हुवा सारे।
शब्द भयानक हा हा कार कर, रोते हैं बांधव प्यारे॥

दोहा

संस्कार मृतक किया, मन्त्री ने तत्काल।
देख विभीषण चल दिया, मन में खुशी कमाल॥

यही अवस्था करी जनक की, रावण को जा बतलाया।
जो खटका था सो मिटा दिया, दशकन्धर मन में हर्षाया॥
यह मन्त्री के अतिरिक्त भेद ना, और किसी ने पाया है।
उधर फिरे दोनों राजे, अपना सर्वस्व बचाया है॥

—o—o—

कैकेयी स्वयम्वर

दोहा

कौतुक मंगल नगर में, शुभ मति है भूपाल।
पृथ्वी रानी की सुता कैकेयी रूप विशाल ॥
द्रोणमेघ था पुत्र भूप के, शूर वीर अति बल धारी।
रचा स्वयम्वर लड़की का, आडम्बर बहुत किया भारी ॥
बड़े बड़े भूपति आये, स्वागत की आर्ती तार रहे।
लगी खबर यह दशरथ को, मन मे यों सोच विचार रहे ॥

गाना न० ५२

[तर्ज—जमाना तेरी कैसी बिगड़ गई चाल रे]

समय ने कैसा खाया है फेर कमाल रे ॥ टेर ॥
सूर्य वंशी हुवे जगत् में सब ही गौरवशाली ॥
हाँ-हाँ, भाग्य हीन मै आकर जन्मा गई वंश की ज़ाली।
बड़ों की रीत ना पाली, समय की चाल निराली।
कैसा है हाल निढाल रे ॥१॥
संमति भूप ने कैकेयी का स्वयंवरा मंडप रचवाया ॥ हाँ-हाँ ॥
आज पुण्य मे कसर हमारे नौता तक ना आया हमींको एक भुलाया,
फेरिस्त मे नाम ना आया, हृदय मे शाले शाल रे ॥२॥
गौरव हीनो का दुनियां मे जीना हीं मरना है ॥ हाँ-हाँ ॥
क्षत्रिय वीरों का तो दुनियां मे रण भूमि शरणा है।
और फिर क्या करना है अवश्य एक दिन मरना है ॥ हाँ-हाँ ॥
रंक चाहे भूपाल रे ॥३॥
धर्म देश के लिये शुक्ल कुर्बान सभी करना है ॥ हाँ-हाँ ॥
जावेंगे वहां अवश्यमेव अन्याय तोड़ धरना है

प्रण यही करना है फेर किससे डरना है,
तोड़ो कर्म जंजाल रे ॥४॥

दोहा

सूर्य वंशी नित्य रहे, राजो के सिर ताज।
पुण्य हीन निर्भाग्य हम, गणना मे नहीं आज ॥

खेद आज सूर्यवंशिन को, नौता तक नहीं आया है।
क्या मै ही ऐसा जन्मा जिसने, वंश का नाम लजाया है ॥
जिस होनी ने कल होना है, वह आज ही क्यों ना हो जावे।
आन ना जावे वंश की चाहे, मेरी जिन्दगी खो जावे ॥
पर गणना मे नहीं नाम हमारा, कैसे स्वागत पावेगे।
ख्याल नहीं इस बात का भी, तलवार से जगह बनावेगे ॥
वन का राजा सिंह कहाता, किसने उसको ताज दिया।
यह उसके पराक्रम का फल है, जो ईश सभी ने मान लिया ॥
जो कोई हमसे अन्याय करे तो, झगड़े से क्या डरना है।
हां गौरव हीन का दुनियां मे, जीने से अच्छा मरना है ॥
यही 'सम्मति जनक भूप की, अवश्यमेव चलना चाहिये।
व्यवहार को जिसने तोड़ दिया, तो उस खल को दलना चाहिये ॥

दोहा

दोनो मित्र चल दिये, सहमत हो तत्काल।
ठाठ बाट चाहे न्यून था, पर था पुण्य विशाल ॥

वहां जा बैठे यह भी दोनों, जहां कुछ सिंहासन खाली थे।
और बड़े बड़े भूपति बैठे, जिनके सेवक रखवाली थे ॥
थी मान मे गर्दन ऊपर को, कानो में कुंडल पड़े हुए।
शुभ सच्चे मोती हीरो से, मानो थे सारे जड़े हुए ॥

जब समय हुवा कर माला का, लाखों वरनारी साजे हैं।
शशि समान हुए दशरथ, बाकी तारोवत् राजे है॥

दोहा

आरम्भ हुवा व्यवहार अब, बैठे चतुर सुजान।
अपने-अपने पुण्य की होने लगी पहिचान॥

गाना नं० ५३

तर्ज—(गम खाना चीज बड़ा है)

वह पुण्य राशि सज आई स्वयंवर मे राजदुलारी (कुमारी) ।टेक।
सोलह सिंगार सहज अगमाई, सोलह ऊपर अधिक सुहाई,
आभा सी विजली बन आई क्रान्ति छवि अपार है,
शशि वदना राजदुलारी ॥१॥
आज नहीं कोई इसके तोले, सोच सभी ने इष्ट टिटोले,
मौन धार मन ही मन बोले, धन्य वही राजकुमार है, जिसकी
यह बने प्यारी ॥२॥
जादू की यह है वरमाला, स्त्री रत्न एक यह आल्हा,
पुण्यवान् वह कौन भुपाला, आकर्षण जिसमें सार है,
इस लक्ष्मी का अधिकारी ॥३॥
शुक्ल पुण्य से सब कुछ मिलता, धर्महीन नित्य हाथ मसलता।
सदा जमाना रंग बदलता, होता उसका उद्धार है,
जिन वाणी जिस दिल धारी ॥४॥

चौपाई

आई मंडप राजदुलारी, दासी संग सहेली सारी।
राजो के प्रतिबिम्ब दिखावे। धाय मात ऋद्धि बतलावे॥
सोलह शृंगार सहज अंग माही, सोलह ऊपर अधिक सुहाई।
देख रूप सब का मन मोहे, इन्द्राणी सम छवि अति सोहे॥

दोहा

मन ही मन यों सब कहें, धन्य वही भूपाल।
जिसकी यह रानी बने, डाल गले वर माल ॥
दशरथ नृप मन में बसा, पहनाई वर माल।
हरिवाहन नृप जल गया, चढ़ा रोष विकराल ॥
चढ़ा रोष विकराल है, किसको वरमाला पहनाई।
तमाशबीन कोई खड़ा आन, गिनती राजों में नाहीं ॥
दे वरमाला भाग यहां से, इस मे तेरी भलाई।
नहीं मार तलवार अभी, गर्दन की करूं सफाई ॥

दौड़

चूक लड़की ने खाई, भूल कर तुझे पहनाई।
देर अब जरा ना करना, यदि नहीं परभव पहुँचाऊं
तुझे ना, यहां कोई शरणा ॥

दोहा

अनुचित बातें जब सुनीं, दशरथ भूप उदार।
ललकारें यों सिंह सम, सहसा ले तलवार ॥
क्या आंखे काढ-काढ़ कायर, सूर्य को चमक दिखाता है।
और धमकी देकर प्रबल सिंह से, वरमाला को चाहता है ॥
भाग यहां से जान बचा, मरना स्वीकार क्यों करता है।
सूर्यवंशी सिंह कभी क्या गीदड़ से भी डरता है ॥

दोहा

देख तेज रणधीर का, शुभमति करे विचार।
यह मामूली व्यक्ति नहीं, शूर वीर बलधार ॥
बन चुका जमाई मेरा अब, इसलिये पक्ष लेना चाहिये।
रण तूर बजाकर मान भंग, इनका सब का कर देना चाहिये ॥

उसी समय रण भूमि में, सब जुटे शूरमा आ करके।
हो गये बहुत रण भेट वीर, कई गिरे मूर्छा खा करके॥

दोहा

दशरथ नृप का सारथी, गिरा धरन मे जाय।
देख दृश्य यह कैकेयी, मन में कुछ घबराय॥

करी विनती रानी ने, महाराजा की आज्ञा चाहती हूँ।
सम्पूर्ण कला है ज्ञात मुझे, संग्रामी रथ चलाती हूँ॥
कृपा आपकी से देखो, मैं अपने हाथ दिखाती हूँ।
जीतो शत्रु दल को तुम, मैं विकट को हवा बनाती हूँ॥

दोहा

कवच पहिन रानी चढ़ी, और दशरथ झुंझार।
सहसा दल मे मच गया, हूं हूं हा हा कार॥

पराजय होकर भागे शत्रु विजय हुई दशरथ नृप की।
खुशी हुआ बोला नृप रानी, मांगो जो मरजी मन की॥
जो कुछ मांगोगी सो दूंगा, क्षत्री मैं कहलाता हूं।
आपकी देख वीरता को मै, फूला नहीं समाता हूं॥

दोहा

रानी तब कहने लगी, वर रक्खो भण्डार।
लेऊंगी प्रभु आप से जब होगी दरकार॥

प्रेम भाव से दशरथ नृप को, शुभमति भूपने विदा किया।
शूरवीर जामात समझ, दिल खोल द्रव्य और मान दिया॥
मिथलेश गया मिथला नगरी, सब तरह मित्र का साथ दिया।
राजगृही नगरी में जाकर, दशरथ नृप ने वास किया॥

दोहा

कुछ नीति कुछ बुद्धि से, चढ़ा पुण्य का जोर ।
आस पास के देश मे, करी मित्रता और ॥
अपराजिता और रानी सब ही परिवार बुलाया है ।
शुभ स्थान देख गद्दी, रचना की हुक्म चलाया है ॥
लगा पुण्य प्रतिदिन बढ़ने जैसे घनघोर घटा छाई ।
शुक्ल पुण्य अनुसार समागम, मिलता है सब सुखदाई ॥

श्रीरामजन्म

दोहा

सुख में सोती एक दिन, सुन्दर सेज मंझार ।
महारानी अपराजिता, स्वप्न विलोके चार ।
प्रथम स्वप्न में देखा हस्ती, अद्भुत चाल निराली है ।
मद झर रहा कपोल शब्द, गुंजार छवि मतवाली है ॥
स्वप्न दूसरे प्रबल सिंह, चिंहाड़ शब्द लहरें करता ।
उछल कूद चहुं ओर रहा, और नहीं किसी से भी डरता ॥

दोहा

ग्रहगणों का अधिपति, रोहिणी का भर्तार ।
उतरता आकाश से, चन्द्रमा सुख कार ॥
चौथे स्वप्न में सूर्य आया, सहस्रांशु फैलाता हुवा ।
किया आन उद्योत उस समय, तेजी अति खिलाता हुवा ॥
खुली आंख निश्चय करके, निज पति पास आई रानी ।
हाथ जोड़ के नमस्कार, शीतल मुख से बोली वाणी ॥

गाना नं० ५४

(तर्ज—कुछ नीर पिलादे)

कहो प्राणनाथ क्या स्वप्न मुझे सुखकार है,
दुखहार है, गुलजार है ॥ टेर ॥
सच प्राणप्रिये यह स्वप्न दायक सुखदान है,
गुणवान है पुण्यवान है (ठे० रा०)
तो पुण्य उदय शोभन है।
(भू०) बिल्कुल है सही,
(रा०) क्या पुण्यवान् नन्दन है।
(भू०) जन्मेगा वही
(रा०) तो क्या करना मुझको चाहिये,
भाषो जो जो हितकार है ॥१॥ कहो

(भू०) नित्य आत्म ध्यान लगाओ,
(रा०) सत्य पति देव !
(भू०) दुखियो को सुखी बनाओ, जीतहमेव।
दान, शील, तप, शुद्ध भावना से सब का कल्याण है
॥२॥ कहो ॥

मुझे नित्य काम क्या करना (भू०) व्याख्यान सुनो
(रा०) सुखकारी क्या है शरणा।
(भू०) प्रभु नाम गुणो
(रा०) तो समझ लिया मैंने आकर कोई जन्मेगा अवतार है
॥ ३ ॥ कहो ॥

(भू०) सर्वज्ञ शास्त्र नित्य पढ़ना
(रा०) शुद्ध ज्ञान यही।
(भू०) सद्गुण चाहिये नित्य बढ़ना

(रा०) कल्याण यही
(भू०) शुक्ल कार्य शुद्ध उन्हीं का जिसका शोभन ध्यान है
॥ सच ॥ ४ ॥

दोहा

रंग ढंग सब स्वप्न का, बतलाया तत्काल ।
खुशी की ना अवधि रही, सुना सभी जब हाल ॥

कहा सुन रानी कोई पुण्यवान्, सुत जन्म तेरे उर पावेगा ।
नाम प्रसिद्ध करे अपना, और कुल का सुयश बढ़ावेगा ॥
आधार भूत सब दुनिया का, अय रानी वह कहलावेगा ।
पर दुःख भंजन प्रेम सदा, सागर मानिन्द लहरावेगा ॥

दोहा

गर्भ दोष सब टाल कर, पोष कारे सुख कार ।
शुभ नक्षत्र में सुत हुआ, होने लगी जयकार ॥

कैदी दिये छुड़ाय खुशी में, दान दिये नृप ने भारी ।
गायन नृत्य अति धूमधाम, घर घर मङ्गल गावें नारी ॥
पद्म चिह्न से तन सोहे, शुभनाम पद्म दिया सुखकारी ।
अभिराक लगने से फिर हुवे, राम नाम के अधिकारी ॥

दोहा

दूजी नार सुमित्रा, स्वप्न विलोके सात ।
सुख शय्या आराम से, सोती पिछली रात

प्रथम स्वप्न में हस्ती देखा, चारों ओर उछलता हुवा ।
प्रबल सिंह दूसरा आया, कुम्भ स्थल को दलता हुवा ॥
तीजे शशि रवि चौथे, आ अपनी चमक दिखाई है ।
धूम रहित शिखा अग्नि, शुद्ध नजर पांचवें आई है ॥

दोहा

छठे सरोवर में कमल, खिले हुए शुभ रङ्ग।
रानी को ऐसा मिला, स्वप्ने में प्रसंग॥
भरा समुद्र देख सातवें, रानी मन हर्षाई है।
निश्चय कर फिर पति पास, जा सारी बात सुनाई है॥
सुनते ही राजा के मन में, खुशी का ना कोई पार रहा।
फल विचार स्वप्नों का नृप ने, रानी को सब हाल कहा॥

दोहा

रानी सुत होगा तेरे, प्रबल सिंह समान।
तेज प्रताप सम रवि के, फैले पुण्य महान्॥
शुभ पुण्य अहो रानी जिसका, सागर मानिन्द लहरायेगा।
आधीन करे सब दुनिया को, अति शूर वीर कहलायेगा॥
निर्भय सिंह हस्तियों में, ऐसे यह दरजा पावेगा।
जब उतरेगा रण भूमि में, सन्नाटा सा छा जावेगा॥

दोहा

यथा योग्य नित्य पथ्य से, रही गर्भ को पाल।
मास सवा नौ में हुवा, आन अनुपम लाल॥
देवलोक से चलकर आया, पुण्यवान योद्धा भारी।
राज कुमार का रूप देख कर, प्रेम करें सब नरनारी॥
नारायण शुभ नाम दिया, प्रसिद्ध महा अति सुखकारी।
उत्सव का कुछ पार नहीं, दशरथ नृप दान किया भारी॥

दोहा

बहत्तर कला प्रवीण थे, दोनों राज कुमार।
शूरवीर योद्धा अति, देख खुशी नर नार॥

देख भुजा बल दशरथ राजा, पुरी अयोध्या आया है।
कैकेयी रानी के पुत्र हुवा, शुभ नाम भरत कहलाया है॥
शत्रुघ्न पुत्र हुवा चौथा, दशरथ नृप सुन हर्षाया है।
नग गज दन्तो तरह, भूप मेरू मानन्द शोभाया है॥
सुप्रभा रानी के हुवा शत्रुघ्न, पाठान्तर से कहते हैं।
चाहे जैसे हो प्रेमपूर्वक चारो भाई रहते हैं॥

गाना नं० ५५

(तर्ज—प्रेम हो भाई भाईयो मे तो क्या आना)

सूर्य आगे भगे रजनी, यूं दुख सब भाग जाता है॥टेर॥
भाप बन कर बने बादल, बूंद मिल कर बने दरिया,
सभी मे डालकर जीवन नदी नाले बहाते है॥१॥
अनन्त मिल के परमाणु, मनुष्य का तन बने शोभन,
प्राणदश की सहायता से, स्वर्ग अपवर्ग पाता है॥२॥
रत्न त्रय के समह में जो तन तल्लीन बन जाते,
उडा कर कर्म लस्कर को सच्चिदानन्द कहाते हैं॥३॥
देवगुरु और धर्म शास्त्र ध्यान दो सोभत मिल जावें,
शुक्ल आवागमन का आत्मा फेरा टलाता है॥४॥
प्रेम जिन ब्रह्म और विश्नु, प्रेम है देव देवन का,
आज तक प्रेम भाईयो का सभी संसार गाता है॥५॥

दोहा

दशरथ राजा की हुई पूरी सभी उमंग।
पुण्य उदय कुल बाग में, खिलने लगा शुभ रंग॥

राम लक्ष्मण की जोड़ी, नीलाम्बर पीताम्बर सोहे।
था प्रेम परस्पर दोनो का, अति राज हंस सम मन मोहे॥

भरत शत्रुघ्न की जोड़ी, थे अतुल बली योधा भारी।
तेज प्रताप प्रचण्ड अति, महा वृद्धि होने लगी सारी॥
ग्रीष्म अन्त जैसे श्रावण, या जैसे मेला जंगल मे।
शुभ शुक्ल समाज मिला ऐसे, सुख जैसे सुर नन्दन वन में॥
यह पहिला अधिकार हुवा, दशरथ राजा सुख पाया है।
तेल बिन्दु सम गयाफैल, जगी सामान बनाया है।

तर्ज—(कौन कहता है कि जालिम को)

सर्व सिद्धि के लिये ब्रह्मचर्य ही प्रधान है,
सत्य भाषण दूसरा, निर्बद्ध मेढ़ी समान है॥१॥

समभाव और एकाग्रता, निज लक्ष मे तल्लीन हो।
निर्भीक निरभिमान हो और साधन सभी का ज्ञान हो॥२॥
सेवा भक्ति और विनय से योग्य गुरू की तो कृपा,
एकान्त सेवी मौन ग्राही अटल श्रद्धावान् है॥३॥
कार्याकार्य विचारक और भाव ऊंचे हो सदा,
गुरु शास्त्र धर्म देव संगसेवा मे जिसका ध्यान है॥४॥
दान जप तप भावना शुभ पुण्य का संचय भी हो,
शुक्ल साधन धर्म ध्यानी, शुद्ध खान व पान हो॥५॥
जैसी जिसकी भावना, सिद्धि भी तदुनासार है,
मंत्र का नम्बर बदलने का भी जिसको भान है॥६॥

॥ इति प्रथमो भागः समाप्त ॥

॥ ॐ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री रामायण द्वितीय भाग

सीताभामण्डलोत्पत्ति

मंगलाचरण

दोहा

जिनवाणी नित्य दाहिने, अरिहन्त सिद्ध जगदीश ।
परमेष्ठी रक्षा करें, त्रिपद धार मुनीश ॥

अजर अमर अमूर्ति, निराकार भगवन्त ।
लोकालोक में आपका, फैला ज्ञान अनन्त ॥

फैला ज्ञान अनन्त स्वयं, सत्चित आनन्द अविनाशी ।
फिरें भटकते जीव चराचर, पड़ी कर्म गल फांसी ॥
सत्चित् निश्चय पास किन्तु, आनन्द की करें तलाशी ।
अज्ञान अन्ध में पड़े जीव, नहीं पावें मोक्ष सुख राशी ॥

दौड़

बिना जिन देव धर्म के, पास नहीं कटे कर्म के ।
घूम सारे जग आया, बिना तुम्हारे देव सहारा
नहीं दूसरा पाया ॥

दोहा

भामण्डल सीता सुता, युगल पणे अवतार ।
प्रसन्न हुवा राजा जनक, और विदेहा नार ॥

यह कर्म बड़े बलवान् जीव को, खुशी मे दुःख दिखलाते है।
करते प्राणी नेत्र बन्द कर, फिर पीछे पछताते है॥
अब सुनो हाल भामण्डल का, जिसने आकर के जन्म लिया।
होगया विरह बचपन से ही, नहीं मात तात अन्न पान किया॥

दोहा

जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र मे, दारुण नामक ग्राम।
अनुकोशा का है पति, द्विज वसुभूति नाम॥
अनुभूति है नाम पुत्र का, वधू सरसा सुखदायी है।
कयान विप्र ने मोहित होकर, सरसा स्वयं चुराई है॥
ढूंढन को पतिदेव गया, नहीं पता कहीं पर पाया है।
पीछे मोह वश गई मात, और संग पिता उठ धाया है॥

दोहा

जात वाम की फिर मिले, मिले लाल दुश्वार।
पुत्र के मोह मे फिरे, दोनो होते ख्वार॥
मार्ग मे निग्रन्थ मिले जिन, दुःख नाशक उपदेश दिया।
मोह कर्म सिर डाल धूल, दोनो ने संयम भेष लिया॥
पहिले स्वर्ग पहुँचे जाकर, सुरपुर के सुख भोगे भारी।
आ जन्म लिया वैताडगिरी, फिर भी हुए दोनो नरनारी॥

कड़ा

प्यारे जी चन्द्रगति भूपाल नाम विद्याधर भारी।
पुष्पावती अभिराम, नाम सुन्दर तसु नारी॥

दोहा

सरसा नजर बचाय के, भागी अवसर देख।
संयम का शरणा लिया, अविचल रखे टेक॥

दूसरे स्वर्ग पहुँची जाकर, अनुभूति विरह मे भटका है ।
अनमोल मनुष्य तन खो बैठा, भव चक्र गर्भ मे लटका है ॥
हुआ हंस बालक जाकर, हस्ती ने ग्रहण कर फेंक दिया ।
जा पड़ा मुनि के चरणो मे, नमोकार मन्त्र का शरण दिया ॥

चौपाई

देवलोक मे पहुँचा जाई । वर्ष सहस्र दश आयु पाई ॥
जीव कुसंगति से दुःख पावे । शुभ संगति से सुख मिल जावे ॥

दोहा

विदग्ध नामक नगर में, प्रकाशसिंह महाराय ।
रेवती नामक नार के, पुत्र जन्मा आय ॥

कुण्डल मण्डित नाम पुत्र का, सुन्दर जिसकी काया है ।
अब सुनो हाल कयान विप्र का, ज न्म जहाँ आ पाया है ॥
चक्रध्वज राजा चक्रपुरी का, धूमसेन पुरोहित जिसका ।
स्वाहा रमणी है विप्राणी, पिंगल सुत कयान हुआ तिसका ॥

दोहा

करती थी नृप कन्यका, विद्या का अभ्यास ।
पिंगल अति मोहित हुआ, देख रूप प्रकाश ॥

समय देख अपहरण करी जा, विदग्ध नगर निवास किया ।
इस काम बाण ने बड़ों-बड़ों का, अन्त में समझो नाश किया ॥
विदग्ध नगर के नरनारी, इस रूप पे आश्चर्य करते थे ।
कई वशीभूत होकर मोह में कुछ के कुछ शब्द उचरते थे ॥
कुण्डल मण्डित कुमर हाल सुन, घोड़े पर चढ़ आया है ।
देख रूप उस राजदुलारी, का मन अति हर्षाया है ॥
चारित्र मोहिनी उदय हुआ, सद्ज्ञान हृदय से दूर हुआ ।
उस रूप की महिमा गाने लगा, जब राजकुंवर मजबूर हुआ ॥

दोहा

अतुल्य पुण्य इसने किया, मिला जो अद्भुत रूप ।
किन्तु पति इसको मिला, अनपढ़ और कुरूप ॥
अनपढ़ और कुरूप, यह किसने लाल गधे गल डाला ।
सांचे जैसा ढाला जिस्म है, अद्भुत रूप निराला ॥
इस कौवे गल नही शोभती, यह रत्नो की माला ।
लूं छीन इसे तो पिता मेरा, यहाँ का न्यायी भूपाला ॥

दौड़

दिला वापिस ही देगा, मेरा नहीं पक्ष करेगा ।
यही अब ढंग रचाऊँ, ले पर्वत पर चढूँ दूर जाकर
कहीं वास बनाऊँ ॥

दोहा

जो कुछ आया हाथ मे लेकर के सामान ।
दोनो वहाँ से चल दिये, नग* मे किया मुकाम ॥
पीछे पिगल फिरे भटकता, विरह ने आन सताया है ।
हार गया सिर पीट पीट, अन्तिम संयम चित्त लाया है ॥
सुधर्म देवलोक मे पहुंचा, विराधक सुर पदवी पाई है ।
कुंठल मंडित ने यहां दशरथ के, राज्य मे धूम मचाई है ॥
डाके और चोरी छल से, प्रजा को लगे सताने को ।
इस तरह आसुरी वृत्ति से, लगा अपना समय बिताने को ॥
बालचन्द्र दिया भेज भूप, दशरथ ने उसे पकड़ने को ।
जा घेरा डाला सेनापति ने, डाकू चौर जकड़ने को ॥
कुंडल मडित को फुर्ती से विषम स्थान मे रोक लिया ।
निज शक्ति और चातुर्य से, पकड़ बंधन मे ठोक दिया ॥

*पर्वत

नियत समय पर कोतवाल, दशरथ के सन्मुख लाया है।
भूपाल ने रहस्य समझ कुंडल मंडित को यों समझाया है॥

दोहा (दशरथ)

विषय वासना जगत में, शत्रु महा कठोर।
अशुभ कर्म से बन गया, राजकुमर से चोर॥
शिक्षाप्रद वचन हमारे है, मन से अब आर्ति ध्यान तजो।
इस दुष्ट विलासिता को तज कर मनुष्य बनो जिन राजभजो॥
क्षमा सभी अपराध किया, तुमसे न द्वेष हमारा है।
पहिचानो अपने गौरव को, इसमें ही भला तुम्हारा है॥

दोहा

शिक्षा देकर इस तरह, मन रिपुता से मोड़।
कुंडल मंडित को दिया, दशरथ नृप ने छोड़॥
उपकार मान नृप का, चला पहुंचा निज स्थान।
कुंडल मंडित को रहे, नित्य प्रति आर्तध्यान॥

छन्द

राज का रहे ख्याल निशदिन, शोच अति मन मे करे।
ताज पाऊँ राज का, मेरा पिता जल्दी मरे॥
अविनीत पन का ताज अब तो, सिर मेरे रक्खा गया।
स दिन से आया भाग, अरु कुव्यसन यह चक्खा गया॥
मम बुद्धि पर परदा पड़ा और सोच सब मारी गई।
अब राज की भी हाय कुंजी, हाथ से सारी गई॥
रहता पिता के पास और गुप्त रखता वाम यह।
स्वामी बना रहता हमेशा, क्यों बिगड़ता काम यह॥

दोहा

इतने मे आया नजर, मुनिचन्द्र ऋषि राय।
कुमार जाय वंदना करी, चरणन शीस नवाय ।।
जो भी मन की बात थी, सभी दई बतलाय।
सुनकर के मुनि ने दई, कर्म गति दर्शाय ।।

छन्द

बोले मुनि हे कुमर तू, कुछ धर्म चित्त लाया नहीं।
खेद अति है भय जरा, परभव का भी खाया नहीं ।।
प्रत्यक्ष तुझ को कुव्यसन का फल तो यहां कुछ मिल गया।
जो था सितारा पुण्य का, वह सब किनारा कर गया ।।
अब और जो कर्तव्य तेरा, नरक का परिणाम है।
घात चिंते भूप की, यह दुष्ट तेरा ध्यान है ।।
देऊँ तुझे शिक्षा समझ, तन मन से रखना पास यह।
दोनो भवो में लाभदायक, छोड़ती नहीं साथ यह ।।
धर ध्यान श्री अरिहन्त का, अन्तः करण निग्रह करो।
द्वादश नियम कर गृहस्थ के, गुण ग्रहण मे दृष्टि धरो ।।

दोहा

सागारी व्रत मुनि से, लिये कुमर ने धार।
किन्तु इच्छा राज की, रहती मन मंझार ।।
इसी विचार मे मरा अन्त, आ जनक भूप के जन्म लिया।
सरसा ब्राह्मण की पुत्री, बन फिर तप संयम में ध्यान दिया ।।
पहुची ब्रह्म लोक+ जाकर वहां दीर्घ काल आराम किया।
सुर आयु भोग विदेही, रानी के सीता अवतार लिया ।।

+ पांचवे देवलोक

दोहा

जनक भूप ने जब लखा, राजकुमर का रूप।
रानी से फिर उस समय, यों बोले वर भूप॥
पुण्य उदय अपना हुआ आज अति सुख कार।
युगल पने आकर हुवा पैदा राज कुमार॥

पैदा राजकुमार खुशी का, अवसर मिला जबर है।
देख देख मुख इनका रानी, आता नही सबर है॥
क्या जन्मे आकर नल कुबेर, कुछ लगती नही खबर है।
दमक रहा भानु मानिन्द, मस्तक जैसे इन्द्र है॥

दौड़

बुलंद सितारा इनका, समान कोई नहीं जिनका।
रूप क्या तेज निराला, देखो रानी बहन भाई क्या
एक ही सांचे ढाला॥

दोहा

राजा प्रजा सब खुशी, घर घर मंगलाचार।
जनक भूप ने दान के, खोल दिये भंडार॥

उत्सव का कुछ पार नहीं, अति खुशी सभी दिलछाई है।
और जय जय कार की, ध्वनि सहित दी सबने आन बधाई है॥
धाइयाँ पांच लगी पालन, सब आगे पीछे फिरते है।
अब होनहार के आगे चल, देखो क्या रंग बिखरते है॥

भामंडल का अपहरण

दोहा

पिंगल का जो जीव था, पहिले स्वर्ग मंझार।
अवधिज्ञान से एक दिन, देखा दृष्टि पसार ॥
देखा दृष्टि पसार देव के, क्रोध बदन में छाया।
पूर्व वैरी समझ आन, भामण्डल तुरन्त उठाया ॥
देऊं इसको मार, देव के मन मे यही समाया।
राजकुमार का पुण्य प्रबल, यो असुर सोच मन लाया ॥

छन्द

मारूं यदि इस बाल को, महापाप लगता है मुझे।
छोडूं यदि जीता इसे, यह भी नही जचता मुझे ॥
बाल हत्या है बुरी, रुलता फिरूं संसार मे।
कौन सा अब ढग करूं, जिससे लेऊं निज खार* मे ॥
रक्खूं गिरी बैताढ्य पर, वहाँ से न कोई लायगा।
खा जायगा कोई श्वापद§, या स्वयं मर जायगा ॥

चन्द्रगति विद्याधर का भामण्डल को उठाना

दोहा

देव वहां से चल दिया, रख शिला पर लाल‡।
उधर भ्रमण को आ गया, रथनुपुर भूपाल ॥
चन्द्रगति रानी समेत, विमान बैठ कर आया है।
जब देखा बच्चा पर्वत पर, राजा मन मे हर्षाया है ॥
लिया उठा कर कमलो मे, तो खुशी का न कोई पार रहा।
दे दिया गोद मे रानी के, घड़ियों तक देता प्यार रहा ॥

---

* वैर §हिंसक पशु ‡बच्चा

दोहा (चन्द्रगति)

बोला अय रानी पुत्र बिन, सुना था सब राज ।
पुण्य उदय तेरा हुआ, आज सधे सब काज ॥

इसके समान नही रानी, कोई नजर दूसरा आता है ।
भामंडल नाम धरे इसका, बस यही मेरे मन भाता है ॥
दाबी कला विमान की, झट रानी महलों में पहुँचाई है ।
पुत्र जन्मा महारानी ने, सब जगह यह बात फैलाई है ॥
दिल खोल भूप ने दान दिया, और उत्सव अधिक मनाया है ।
वंदी छोड़ दिये सारे, सब जन समूह हर्षाया है ॥
लगा पुत्र वृद्धि पाने, दिन दिन अति कला सवाई है ।
अब हाल सुनो मिथिला का, जहाँ कर्मों ने चाल चलाई है ॥

(मिथिला में शोक)

दोहा

जनक भूप की दासियां, रही चंडोल × डुलाय ।
कोई देती लोरियां, कोई रही झुलाय ॥

कोई रही झुलाय, धाय जब दूध पिलाने आई ।
लड़की है प्रत्यक्ष किन्तु, नहीं देता कुमर दिखाई ॥
उसी समय घबराय दासियाँ, सब एकत्र हो आई ।
चहुं ओर से आने लगे, रोने के शब्द दुखदाई ॥

दौड़

धाय माता का दिल धड़के, सभी के मस्तक ठिनके ।
देख बिन कुमर हिंडोला.
गिरी धरण मुर्झाय अंगरक्षक का भी दिल डोला ॥

× पालना (झूलना)

दोहा (कवि)

दासियां घबराई हुई, पहुंची रानी पास।
दु:खदाई वाणी सभी, बोली ऐसे भाष॥

दोहा (दासी)

आश्चर्य हुआ रानी महा, कहे किस तरह बात।
लुप्त हो गया सामने, तव सुत नहीं दिखात॥

गाना नं० १ (बहर तवील)

(दासियों का रानी से कहना)

अए रानी सभी यह प्रत्यक्ष है,
इस हिन्डोले में छौना तुम्हारा पड़ा।
दृष्टि डाली तो यहां पर नही लाड़ला,
जिससे धड़क कलेजा हमारा पड़ा।
क्या गगन मे गया या धरण में धंसा,
हमे इस भवन मे नजर न पड़ा।
कोई आता या जाता न दीखा हमे,
देखो रानी चहुं ओर पहरा खड़ा।

दोहा

हृदय विदारक जब सुने, महारानी ने बैन।
पुत्र विरहिनी मात फिर लगी इस तरह कहन॥

गाना न० २ (बहर तवील)

(विदेही का विलाप)

आज अपना यह दु:ख मैं कहूं किस तरह,
मेरे दिल को तसल्ली है आती नहीं।

मेरा छौना कन्हैया किधर को गया,
मेरी वज्र की फटती यह छाती नही ॥१॥
कोई लाकर के देवो मुझे जैसो हो,
उसकी सूरत मुझे नजर आती नहीं ।
अभी जाऊं जमी मे तुरत ही समा,
पर यह पापिन भी मुझ को छिपाती नहीं ॥२॥

दोहा

खबर लगी जब भूप को, आये भवन मंझार ।
दखित हृदय से इस तरह, बोले +गिरा उचार ॥

छन्द (जनक)

क्या था और क्या हो गया, क्या माजरा नायाब है ।
रात है या दिन कही या, आ रहा कोई ×ख्वाब है ॥
हैरत से हैरत हो रही, आश्चर्य यह आया मुझे ।
पुत्र कहां गायब हुवा, यहां पर नहीं पाया मुझे ॥
हे प्रभु ! मालूम नही, सुत को बला क्या ले गई ।
उल्टी है किस्मत आज यह, सुत की जुदाई हो गई ॥
राज सम्पत्ति रत्न क्या, सब खाक तेरे बिन कुंवर ।
पुत्र कहाँ छौना कहाँ कुछ भी नहीं लगती खबर ॥

दोहा

नृप रानी प्रजा सभी, रोवे जारों जार ।
उधर कुंवर को खोजते, पैदल फिरे सवार ॥
जनक कहे रानी सुनो, अपने दिल को थाम ।
खोज हो रही पुत्र की, गिरी* गुहर अरु ग्राम ॥

+वाणी ×स्वप्नम् *गुफा

दोहा

छान बीन कर सब तरह, देख लिये सब धाम।
अन्त निराशा भूप ने, आ समझाई† बाम॥
बोले अए रानी! आज दैव, कारण ही नजर आता है।
पूर्व रिपु ले गया असुर कोई, पता नही पाता है॥
समझ नही जन्मा पुत्र, बस यही दैव‡ चाहता है।
कर्मों के अनुसार प्रिया सब, सुख दुःख मिल जाता है॥

दौड़

मोह को दूर भगाओ, ध्यान श्री जिन चित्त लाओ।
कर्म गति के है चाले, देख देख मुख पुत्री का बस
रानी मन बहला ले॥

दोहा

पुत्री का मुख देखताँ, शीतल तन मन जान।
माता पिता ने रख दिया, सीता जिसका नाम॥
चन्द्रकला सम बढ़ रही, चौसठ कला निधान।
रूप कला और गुण सभी, शील रत्न की खान॥

दोहा

सीता जैसा जगत् मे नहीं किसी का रूप।
जहाँ तहाँ भेजे देखने, वर कारण नर भूप॥
देखे राजकुमार बहुत, वर मिला नहीं कोई शानी का।
कोई मिले बराबर गुणवाला, था यही ख्याल महारानी का॥
समरूप अद्वितीय गुणधारी, किसी राजकुमार को चाहते थे।
अति पुरुषार्थ करने पर भी, सन्तोष जनक नही पाते थे॥

---

†स्त्री ‡भाग्य

जब कार्य बनने वाला हो तो कारण कोई बन जाता है ।
और यथा कर्म अनुसार वही, ताना बन कर तन जाता है ॥
था अर्ध बर्बर देश विकट, 'अतरंग' नाम म्लेच्छ बड़ा ।
प्रान्त लूटता जनक भूप का, नित्य प्रति होने लगा झगड़ा ।

दोहा

शक्ति देख 'अतरङ्ग' की, जनक गया घबराय ।
खबर अवध में मित्र को तुरन्त दई पहुंचाय ॥
दई तुरन्त पहुंचाय, दूत ले पता अयोध्या आया ।
नमस्कार कही जनक भूप की, अपना शीश निमाया ॥
जो था कारण आने का, दशरथ नृप को समझाया ।
बनो सहायक आप मित्र के जल्दी तुम्हें बुलाया ॥

दौड़

कष्ट जो सिर पर आवे, मित्र बिन कौन हटावे ।
दूत से दशरथ बोला, चलो अभी जाकरूं खातम क्या
है डाकुओ का टोला ॥

दोहा

कवच पहिन शस्त्र लिये, हो झटपट तय्यार ।
उसी समय कर जोड़ यों बोले †पद्म कुमार ॥

दोहा (रामचन्द्र जी)

आप बिराजो यहीं पर, दो मुझको आदेश ।
जाकर आपके मित्र का, टालूं सकल क्लेश ॥
टालूं सकल क्लेश, दुधारा ले झुक पड़ूं जिधर को ।
निर्भय होकर देवो आज्ञा, प्यारे शेर बबर को ॥

---

†राम

पुत्र लायक होय जिन्होंके, पिता क्यो जाय समर को ।
शक्ति हीन अविनीत हो तो, जीना किस अर्थ कुमर को ॥

दौड़

अभी रण क्षेत्र जाऊं, पकड़ अतरङ्ग को लाऊं ।
शीश पर हाथ चढ़ाओ, निश्चिन्त होकर पिता अयोध्या
मे आनन्द उडाओ ॥

दोहा

आज्ञा दी भूपाल ने, मन मे खुशी अपार ।
सेना ले कुछ संग मे, चले राम बलधार ॥

शत्रु संग जा संग्राम किया, म्लेछ समर मे खाक हुए ।
अतरंग म्लेच्छ का तेज व गौरव, राम के आगे राख हुए ॥
जब धनुष बाण टंकार किया तो मानो बिजली आन पड़ी ।
भगी फौज सब अतरंग की, कुछ करके आर्त ध्यान खड़ी ॥

दोहा

विजय हुई श्री राम की, गया जनक क्लेश ।
प्रसन्न चित्त हो राम की, सेवा करी विशेष ॥

श्री राम का पराक्रम देख जनक, निज रानी को समझाने लगा ।
सुन आज विदेहा पुण्य तेरा, मन चाहा मानो आन जगा ॥
श्री रामचन्द्र की समता का, संसार मे कोई शूर नहीं ।
सब गुण धारक अति सुख दायक, फिर पुरी अयोध्या दूर नहीं ॥

दोहा

करी सगाई पुत्री की रामचन्द्र के साथ ।
मिथिला वासी हर्ष से, सभी झुकाते माथ ॥

सब जोड़ी देख प्रसन्न हुए, घर घर में खुशी मनाई है ।
श्री रामचन्द्र को भूम झाम, जनता सब देखन आई है ॥
नर नारी मुख से कहते थे, यह सीता पुण्य निशानी है ।
नल कुबेर सम मिले राम. वर जोड़ी बड़ी लासानी है ॥
श्री रामचन्द्र के शुभ तन मे, इक महा आकर्षण शक्ति थी ।
क्योंकि पूर्वभव मे इन्होंने, की तप संयम भक्ति थी ॥
मुग्ध थे मिथला के नर नारी श्री राम की सुन्दरताई पर ।
शुभ लक्षण छवि निराली को. लख न्योछावर सुखदाई पर ॥
सब नार परस्पर कहती है, है राजकुमर कैसा ज्ञानी ।
चन्द्र बदन तन कोमल है, स्वरूप बना क्या लासानी ।
खलकत अड गई बानरो मे, महलो से देख रही रानी ॥
नजर घूम गई पनिहारिन की, भरना भूल गई पानी ।
रूमाल अंगूठी और नारियल, राम को दई निशानी है ।
सीता का रिस्ता किया तुम्हे, नृप ने यह कहा जबानी है ॥
कह देना नृप दशरथ से, सब आपकी मेहरबानी है ।
सब कष्ट मिटा मम रैयत का, नहीं आप सा को सुखदानी है ॥

दोहा

राम विदा होकर चले, जन्म-भूमि की ओर ।
मात प्रतीक्षा कर रही, जैसे चन्द्र चकोर ॥

पुरी अयोध्या में आकर, पितु मात को शीश निमाया है ।
आशीश दिया निज पुत्र को, दम्पति का मन हर्षाया है ॥
जनक भूप ने दशरथ से सम्बन्ध का सब व्यवहार किया ।
दशरथ नृप ने मित्र का जो, था कथन सभी स्वीकार किया ॥

दोहा

मिल कर घर घर नारियां, बांटे मोदक थाल ।
मेवा और मिष्टान्न संग, ऊपर दिये रूमाल ॥

गाना नं० ३

मच रही अवध में धूम, खुशियां घर घर मे। टेर।
हिल मिल नारी गावे राग है, धन्य तुम्हारे आज भाग है।
धन्य अयोध्या भूप, खुशियां घर घर मे ॥ १ ॥
गाना गाने आई अप्सरा, नक्काल और आ गये मसखरा।
तननतान तन धम, खुशियां घर घर मे ॥२॥
राज्य अधिकारी देत इशारा, अब क्या देरी बजे नक्कारा।
और वाजिन्त्र अनूप, खुशियां घर घर मे ॥३॥
बज रही नौबत खुशी के बाजे, खुशी होवे सब मित्र राजे।
ऐसा बंधा स्वरूप, खुशियां घर घर में ॥४॥

दोहा

अद्भुत है सब ने सुना, जनक सुता का रूप।
देखन आते चाव से, कइ तन पुण्य अनूप॥
पुरी अयोध्या मे सुनी नारद महिमा रूप।
किन्तु मन में जचा नहीं, मुनि के सत्य स्वरूप॥

(नारद स्वगत विचार)

नारद ने सोचा रामसे बढ़कर, सीता रूप नही पास कती।
मेरा विचार तो ऐसा है, वह राम के मन नहीं भा सकती॥
ऐसा न हो कि बिना खबर, कहीं विवाह अचानक आन पड़े।
और देख कुरूप राम को फिर, करना न आर्तध्यान पड़े॥

दोहा (नारद)

मिथला नगरी जाय कर, देखूं सीता अंग।
यदि तुल्य जोड़ी हुई, तभी विवाह का ढङ्ग॥
तभी विवाह का ढङ्ग बने, नहीं विघ्न डाल कोई दूंगा।
यदि कोई ना समझा तो मै बुरा स्वयं बन लूंगा॥

लिये राम के राजकुमारी, और कोई देखूंगा।
चलूं अभी मिथिला नगरी, छिन मात्र मे पहुंचूंगा ।।

दौड़

मुझे है काम राम से, खयाल नहीं किसी काम से ।
सन्द मैं खुद कर लूंगा, तभी विवाह होने दूंगा।
नहीं उल्टा सब कर दूंगा ।।

दोहा

मुनि रंगीले चल दिये, पहुँचे मिथिला जाय ।
वही बात वही ध्वनि, धंसे महल के माय ।।

छन्द

उस पुण्य तन को देख कर नारद ने मुख अंगुली लई ।
क्या नूर है या हूर, या मेरी अक्ल मारी गई ।।
देखा भरत सब घूम कर. कहीं रूप इस सदृश नहीं ।
क्या जन्मी आकर देव कुमारी, रूप मनुष्य का नहीं ।।
इन्द्राणी भी शर्मावती, यह रूप राशि देख कर ।
शोभेगी अति विमान में, यह जायेगी जब बैठ कर ।।
दूर से ही देख आश्चर्य चकित है मन मेरा ।
दूं आशीष जाकर पास, पुत्री की अक्ल देखूं जरा ।।

दोहा (नारद-रूप)

पीली आँखे और भवें, अजब रङ्ग सब जान ।
पीले ही सिर केश है, दाढ़ी अद्भुत शान ।।

पड़ी नजर जब सीता की तो, डर के भीतर भाग गई ।
हा ! खाई मारी दौड़ो पकड़ो, ऐसा रोती राग गई ।।

बोले नये सेवक पकड़ो, यह भूत भाग न जाय कहीं।
काला मुंह इसका करके, दो चार लात दो ठोक यही॥

छन्द

कोलाहल भृत्यो का बढ़ा, सब महल गुंजार हुआ।
शीघ्र ही अन्तःपुर पति, जांच को प्रस्तुत हुआ॥
आया है घटना स्थान पर, देखे तो क्या नारद मुनि।
भय मान सब पीछे हटे, नीची करी सब ने ध्वनि॥
कहने लगे सोचे बिना, आफत यह छेड़ी है तुम्हे।
ऐसा न हो महा कष्ट कहीं, जाकर के दिखला दे हमे॥
बाल ब्रह्मचारी महा गुणी, नारद मुनि शुभ नाम है।
तोड़ा फोड़ी कर तमाशा, देखना यह काम है॥
रणवास आदि सब जगह, नहीं रोक इनको है कहीं।
भाई भले के सर्वदा, बद से बदी छोड़ें नही॥

दोहा

नारद मन मे सोचता किया, मेरा अपमान।
इसका फल दूंगा इन्हे, सोचा लाकर ध्यान॥

चित्र खींचकर सीता का, अब जल्ह वहां से धाये हैं।
वैताढ़ गिरी 'रथनुपुर' जा, नारद ने जाल बिछाये है॥
जब नजर पड़ी भामण्डल पर, नारद को आश्चर्य आया है।
सीता की मानिन्द इस पर भी, क्या रूप रंग अति छाया है॥
भामण्डल ने देख मुनि, नारद को, शीश नमाया है।
आशीर्वाद पा राजकुंवर ने, ऐसे वचन सुनाया है॥
कहो मुनि महाराज किधर से, आकर दर्श दिखाये है।
सब तरह कहो शान्ति तो है, और कहां घूम कर आये है॥

दोहा (नारद)

मिथला नगरी से अभी आया हूं राजकुमार।
काम हमारा घूमना, सर्व जगत् मंझार॥
आश्चर्य जनक इक चीज, आपकी खातिर मैं ये लाया हूँ।
है तेरा ही अनुराग मुझे, इस लिये यहां पर आया हूँ॥
चलो अभी तुम महलो मे, हम भूप से मिल कर आते है।
देर नही कुछ पास तुम्हारे, अभी आन दिखलाते हैं॥

दोहा

कुंवर गया निज महल में, मुनि खास दरबार।
देख मुनि को भूपति, मन में खुशी अपार॥

(चन्द्रगति का नारद मुनि से कहना)

गाना नं० ४

कहिये मुनि जी भूलकर, यहां कैसे आना हो गया।
या विचरना बन्द करके, स्थिर ठिकाना होगया॥१॥
शुभ दिन घड़ी है आज की, जो आपके दर्शन मिले।
कुल पवित्र आज मेरा, गरीबखाना हो गया॥२॥
इस सिंहासन पर विराजे, कीजिये अनुग्रह मुनि।
रथनुपुर में आ.को, आये जमाना होगया॥ ३ ॥
आजकल संसार मे, कहिये कहॉ क्या हो रहा।
चरणो का सेवक कौन से, नृप का घराना होगया॥ ४ ॥
दान सेवा का कभी, हमको भी दिलवाया करें।
क्या खबर यहॉ किस तरह, तशरीफ लाना होगया॥ ५ ॥
शुक्ल अब यहाँ पर जरा, आराम कुछ दिन कीजिये।
कारणवश जो आपका यहाँ, आबोदाना होगया॥ ६ ॥

हम सेवकों पर भी कृपा, दृष्टि जरा रक्खा करें।
क्या? आपके दिल मे भी कोई, अपना विगाना होगया ॥ ७ ॥
भक्ति भाव से नारद को, सिंहासन पर बैठाया है।
वृत्तान्त पूछने पर नृप को, मुनि ने कुछ भाष सुनाया है॥
कहे भूप यहाँ कुछ दिन ठहरें, अब बहुत देर से आये है।
क्या दोष हमारा बतलाइये, अब तक नही दर्श दिखाये है॥

दोहा

आया था जिस काम को, मन में वही उचाट।
उधर महल मे देखता, राजकुंवर भी बाट॥
उसी समय नारद मुनि, भामंडल पे जाय।
फोटो सीता का तुरत, दिया मुनि दिखलाय॥
असर नही कुछ कुंवर को, हुवा समझ कर फोक।
गुण वर्णन कर मुनि ने, दिये मसाले ठोक॥

नारद का भामण्डल से कहना

गाना नं० ५

तर्ज—कव्वाली

जबा से कह नहीं सकता कि यह, जैसी दुलारी है।
मिले जोड़ी तेरे संग तो, खुले किस्मत तुम्हारी है॥
रूप पुरनूर है रोशन, शर्म खाती है इन्द्राणी।
हूबहू क्या कहूं सूरत, चाँद की सी उजारी है॥
समझ भानु की मूरत है, ढली मानो है साँचे मे।
मुल्क सब छान कर देखा, नही सदृश निहारी है॥
है चालि हंस के मानिन्द, कला चौसठ सभी पूर्ण।
है मानिन्द मोर की गर्दन के नयनो की कटारी है॥

दोहा

लगा पलीता मुनि जी, हुये नींद में लीन ।
भामंडल यूँ तड़फता, जैसे जल बिन मीन ॥

राजकुमार का देख हाल, राजा रानी घबराये है ।
वैद्य ज्योतिषी और सयाने. राजा ने बुलवाये हैं ॥
देख सभी ने बतलाया, नहीं इसको कोई बीमारी है ।
किन्तु है ख्याल कहीं जमा हुआ, यह आया समझ हमारी है ॥

छन्द

तड़प भामंडल रहा, मोह लीन बीमारी हुई ।
देख कर माता-पिता को, वेदना भारी हुई ॥
पुत्र के मित्रों से भी पूछा, हाल सब महाराज ने ।
बोले दिखाया चित्र था, कलह प्रिय मुनिराज ने ॥
सुनते ही गुण उस कामिनी के, होगया बेताब है ।
समझाया बहुतेरा मगर, आई नहीं वह आब है ॥
सब ठीक समझा भूप ने, नारद मुनि का काम है ।
औषधि वही बतायेंगे, खोजूं सही किस धाम है ॥

दोहा

चन्द्रगति भूपाल झट, पहुंचे नारद पास ।
मन्द-मन्द मुस्कराय कर, ऐसे बोले भाष ॥

छन्द (चन्द्रगति)

सिर झुकाया चरण में महाराज कृपा कीजिये ।
आलस्य निद्रा के बहाने, छोड़ कर मन दीजिये ॥
किस कुंवारी का चित्र यह, जिसको लायें आप हैं ।
कृपा तुम्हारी से मिटेंगे, जो किये सन्ताप है ॥

दोहा

नेत्रों को मलते हुये, उठे मुनि अंग तोड ।
काम बना मन में खुशी, यो बोले मुख मोड़ ॥

दोहा (नारद)

मिथिला नगरी है भली, जनक तहाँ भूपाल ।
विदेहा के पैदा हुई, सीता रूप रसाल ॥
क्या करूँ भूप मैं गुण वर्णन, बस भामंडल के लायक है ।
नल कुंवरी सम रूप सिया का, जोड़ी अति सुखदायक है ॥
अब हम महलो से जाकर, कुछ खाना खाकर आते है ।
और मन्न करता है चलने को, फिर पुरी अयोध्या जाते है ॥

सीता स्वयम्वर

दोहा

बोकर बीज महा क्लेश का, उड़ गये आप आकाश ।
पुत्र को समझाय कर, दिया भूप विश्वास ॥
चपल गति विद्याधर से, नृप बोले तुम मिथिला जाओ ।
श्री जनक भूप को रात्रि समय, निद्रागत यहाँ उठा लाओ ॥
आज्ञा पाकर जनक भूप को, रात समय ले आया है ।
चन्द्रगति के पास महल मे, लाकर तुरत सुलाया है ॥

दोहा

खुली आँख जब जनक की, विस्मित हुआ अपार ।
देख देख चारों तरफ, करने लगा विचार ॥

दोहा—(जनक विचार)

आश्चर्य मे लीन हो, मन मे खिन्न महान् ।
सोया था निज महल मे, यहाँ सब और सामान ।

छन्द (जनक)

सोया था मै निज महल में, कौन ले आया मुझे ।
सोऊँ या जागूँ हे प्रभु, या स्वप्न कोई आया मुझे ॥
नारी कहाँ पुत्री कहाँ, सेवक कहाँ वह दास है ।
अपना नहीं आता नजर, बैठा पर कोई पास है ॥

छन्द (चन्द्रगति)

चन्द्रगति कहने लगा, श्री जनक से कर जोड़ कर ।
कर दो क्षमा अपराध मम, कहता हूं मद को छोड़ कर ॥
पुत्री सुनी है आपके, सीता कुमारी नाम है ।
भामंडल से परणाओ उसे, केवल यही बस काम है ॥

दोहा (जनक)

पुत्री निश्चय है मेरे, सुनो भूप कर गौर ।
दशरथ सुत को दे चुका, छुटी हाथ से डोर ॥
स्वयं करो विचार मणि अब, शेष नाग के सिर पर है ।
दे नहीं सकता और किसी को, मस्तक जब तक धड़ पर है ॥
अब हाथ सिंह की मूछों पर, सोचो तो भूप कौन डाले ।
ऐसा कहो कौन दुनिया मे, कहे काल को आ खाले ।

दोहा

सुनी बात जब जनक की, हुये क्रोध में लाल ।
चन्द्र गति कहने लगा, आंखें लाल निकाल ॥

उस गीदड़ की धमकी से, मै जरा न भय खाऊंगा।
रखता हूं व्यवहार नहीं, तब सुता उठा लाऊंगा॥
देखूंगा बल दशरथ का, जब सुत व्याहने आऊंगा।
मानिन्द गरुड़ के भूचर नृप, सर्पो पर छा जाऊंगा॥

दौड़

दिखा शक्ति दशरथ की, देख मेरे भुजबल की।
सोच करले निज दिल से, सीता का जो विवाह होगा
तो होगा भामंडल से॥

दोहा (जनक)

बुद्धिमानी आप की, देख लई भूपाल।
खाली वादल की तरह, बजा रहे हो गाल।
क्या योधापन दर्शाया है, चोरी से उठाकर लायेंगे।
कभी वतलाते है दशरथ को, अपनी शक्ति दिखलायेगे॥
वार वार क्या दुनियां सब, चोरो का धोखा खाती है।
कोई शक्ति और बुद्धिमानी की, वात नजर नहीं आती है।

दोहा

तेजी आई भूप को, किन्तु जरी तमाम।
सोचा ढंग वही करे, बने जिस तरह से काम॥

चन्द्रगतिः—

बिगड़ जायेगा बातो में, क्यों कि क्षत्रय कहलाता है।
कर चुका सगाई लड़की की, नरमाई से समझाता है॥
कार्य से है मतलब मेरा, कोई खेलूं इस से चाला है।
देवाधिष्ठित धनुष हैं दो, यही उपाय एक आला

दोहा

अनुचित है तुमने कहा, सुनो जनक भूपाल ।
क्या हाथ कंकन को आरसी दिखलावें तत्काल ॥
वज्रावर्त अरूणावर्त, धनुष अतिशयवन्त ।
यक्षो से सेवित हुये, सुनो भूप मतिवन्त ॥

चन्द्रगति—

जा रचो स्वयंवर लड़की का, सब उचित भूप बुला लेओ ।
यह धरो स्वयंवर बीच धनुष फिर ऐसे शब्द सुना देओ ॥
सम आयुष्य वाला राज कुमार जो, क्षत्रिय धनुष चढ़ायेगा ।
पड़े उसी के वरमाला मम, पुत्री वही विवाहेगा ॥
है पक्ष रहित यह बात किसी को, करना चाहिये उजर नहीं ।
नहीं तो झगड़ा बढ़ जायेगा, इस ढंग विन होगा गुजर नहीं ॥
एक विना हमारे रामचन्द्र या, कोई भूप चढ़ावेगा ।
इन्कार नहीं हमको, कोई सीता को वही ले जावेगा ॥
यदि ऐसा न हुआ किसी से, तो पुत्र मेरा ही विवाहेगा ।
और न होगी बात कोई, चाहे भूमंडल चढ़ आवेगा ॥
चलो अभी कुछ देर नहीं, तुमको पहिले पहुँचाते है ।
जा करो तैयारी जल्दी से, मिथिला नगरी हम आते हैं ॥

दोहा

जनक भूप मन सोचता, मुश्किल बनी लाचार ।
समय क्षेत्र को देखकर, किया यही स्वीकार ॥
निश्चित बात करके सभी, जनक दिया पहुँचाय ।
चन्द्रगति ने भी लिये, निज विमान सजाय ॥
चन्द्रगति ने नियत स्थान पर, डेरा आन लगाया है ।
थे बड़े-बड़े योद्धा संगमे, विद्याधर अति गर्भाया है ॥

यहां भवन मे बैठे जनक भूप, मन मे कुछ आर्ति भारी है।
यह हाल देखकर भूपति का, रानी ने गिरा उचारी है ॥

दोहा

सोये थे आनंद से, अब हो गये उदास।
किस कारण पति ले रहे, लम्बे लम्बे श्वांस ॥

छन्द (जनक)

क्या कहूं रानी तुझे, बस कुछ कहा जाता नहीं।
अशुभ कर्म प्रकट हुये, यह दुःख सहा जाता नहीं ॥
खेचर उठाकर रात, रथनुपुर था मुझको ले गया।
चन्द्रगति भूपाल ने, यूं पास आ करके कहा ॥
सीता को भामंडल से परणो, सब कहा समझाय कर।
नही तो तेरी तरह सिया को, भी मै लाऊं उठाय कर ॥
अन्तिम स्वयंम्वर फैसला, कर धनुष दो लाकर धरे।
मिथिला पुरी के बाहिर, आकर भूप ने डेरे करे ॥

दोहा

सुनी अरुचिकर कभी, जनक भूप से बात।
रानी के दिल पर हुआ, भीपण वज्राघात ॥

दोहा (रानी)

कर्म सबर तुझको नहीं, लेकर पुत्र प्रधान।
लेनी चाहे पुत्री का, बचे किस तरह प्राण ॥
स्वेच्छा से ब्याहे सुता, होता हर्ष अपार।
विन इच्छा लेवे कोई, दारुण दुःख अपार ॥

(रानी)

रामचन्द्र से धनुष यदि, नहीं कहीं चढ़ाया जावेगा।
तो विद्याधर वैताड़ गिरी पर, सिया को ब्याह ले जावेगा ॥

हा ! राजकुमारी सीता के, फिर दर्शन कैसे पाऊंगी।
फिर इसी विरह में घुल घुल कर, मैं अपने प्राण गवाऊंगी ॥

दोहा (जनक)

रानी मन निश्चय धरो, धनुष चढ़ावे राम।
पुण्य प्रबल बलवीर का, देखा मैं संग्राम ॥

दोहा

रानी को संतोष दे, लिए भूप बुलवाय।
मंडप की रचना करी, दिए धनुष रखवाय ॥

छन्द

स्वयंवर मंडप मे विराजे, आनकर सब भूपति।
वरमाला डालूं राम गल, ये ही सीता सोचती ॥
चिल्ला चढ़ाया धनुष का, यदि राम से न जायगा।
तो जीव मेरा भी कहीं, ढूंढा न तन में पायेगा ॥

दोहा

दिव्याभूषण पहन कर, साथ सखी परिवार।
धनुप पास जा पढ़ने लगी, मंत्र श्री नवकार ॥

दोहा

चढ़े धनुष श्री राम से, इस भव के वही नाथ।
संवन्ध नहीं त्रियोग से, और किसी के साथ ॥

सीता के अनिन्द्य तन पर, जब दृष्टि सब ने डाली है।
क्या नख शिख ढ़ला जिस्म, सांचे मे अद्‌भुत झलक निराली है
कैसा भोलापन चेहरे पर, अद्‌भुत ही रूप दमकता है।
पुण्य उसी का जो व्याहेगा, असली रत्न चमकता है ॥
चंद्रगति मन सोच रहा, बस भामंडल ही व्याहेगा।
दूर किनार है धनुप उठाना, पास न कोई आयेगा ॥

जनक भूप उठकर बोले, जो क्षत्रिय धनुष उठायेगा।
शूरवीर रणधीर आज, वो ही वर माला को पायेगा॥

दोहा

सुनकर वाणी जनक की, उठे भूप बलवान्।
कंपाते हुए धरण को, मन मे भर अभिमान॥

बोले ये धनुप तो चीज है क्या, हम बज्र इंद्र का तोड़ धरें।
और मार गदा हम मेरु गिरि के, शिखर सभी है गर्द करें॥
तीर मारकर भूमि मे, असुरो के भवन सब चूर करे।
मारें ऐसा अग्नि बाण हम, शशि कला को भस्म करें॥
शत खण्ड करे एक हाथ से, जैसे खांड पताशा है।
फिर उसे चढ़ाना चिल्ले पर, साधारण खेल तमाशा है॥
हम वीर बहादुर अतुल बली, किस गिनती मे इन को लाते हैं।
अभी चढ़ाकर प्रत्यंचा पर, जनक सुता को व्याहते हैं॥

दोहा

बैठे हुए सब इस तरह, बजा रहे थे गाल।
तड़क भड़क कर के उठे, अभिमानी भूपाल,॥

छन्द

तैयार थे क्षत्रिय सभी, शक्ति दिखाने के लिए।
पास आये धनुष के, चिल्ला चढ़ाने के लिए॥
ज्वलनसिंह कहने लगा, चिल्ला चढ़ाऊँ भाजते।
सीता को पटरानी करूं, बाकी रहे सब झांकते॥
पास मे आया है जब, कोदंड लख घबरा गया।
प्राण रक्षा के निमित्त सब, शक्ति को विसरा गया॥
थरथराता धरणी पर वह, धम्म से आकर पड़ा।
कायर अधम कहते कई, उपहास करते है बड़ा॥

दोहा

देख हाल यह नृप सभी, मना रहे निज इष्ट ।
शक्ति के धरता कई, योधा बड़े प्रतिष्ट ॥
चिल्ले पर धनुप चढ़ाने को, सब शक्ति निज दिखलाते हैं ।
जब बढ़े धनुष की तरफ देख, हालत मन मे घबराते है ॥
शोभन स्थल पर धनुप बनावट, जिन की असाधारण थी ।
यक्षो से थे सेवित अस्त्र सजावट, उनकी असाधारण थी ॥
प्रखर विद्युत सम ज्वाला भी, अपनी दमक दिखाती थी ।
चहूँ ओर लिपट रहे फणिधर, विषधर नजर मौत ही आती थी ।
डर गये पड़े मुंह भार कई, और गये भाग घबराय कई ॥
मान स्यान खोकर नीची, दृष्टि कर बैठे जाय कई ।
कई कहें जनक नृप ने देखो कैसा ये जाल बिछाया है ।
यह धनुप नहीं उपहास किया, जो सब का मान घटाया है ।

दोहा

चंद्रगति मन में मगन, देखे सब नृप राय ।
क्या मजाल है राम की, धनुप सामने जाय ॥
देख हाल यह धनुप का, करता जनक विचार ।
न चढ़ा धनुप यदि राम से, मुश्किल फेर अपार ॥
अब रहे रामचन्द्र बाकी, यदि नहीं चढ़ाया जायेगा ।
तो सिया व्याह कर, विद्याधर वैताड़ गिरि ले जायेगा ॥
हे शूर वीर दशरथ नंदन, ताना अब कोई लगाऊँ मैं ।
जिस तरह चढ़ावें धनुप, उसी से मनवांछित फल पाऊँ मैं ।

दोहा (जनक)

शूर वीर क्या नहीं रहा, कोई दुनिया बीच ।
धनुप चढ़ा नहीं किसी से, हुए सभी क्या नीच ॥

जनक

लगा ताव मूंछों पर बैठे, आन स्वयंवर घर मे ।
अच्छा है कही मरो डूबजा, पानी चूल्लू भर मे ॥
क्षत्रिय कुल की लाज रक्खे, कोई आता नही नजर मे ।
आन चढ़ावो धनुष यदि, रखते कुछ जोश जिगर मे ॥

दौड़

बनों सभी जनाने, भेष छोड़ो मरदाने ।
माता का दूध लजाया, रल मिल के क्षत्रिय कुल को क्यों
बट्टा आज लगाया ॥

दोहा (लक्ष्मण)

जनक भूप की बात सुन, कोपा दशरथ नंद ।
कहे लक्ष्मण श्री राम से, बांका वीर बुलंद ॥
अय भाई ? नृप जनक ने, कही यह अनुचित बात ।
सूर्य के होते हुए दिन को समझी रात ।
देवो आज्ञा धनुष चढ़ाऊं जरा देर नहीं करता ।
बोली की गोली सही समझलो सिर्फ आपसे डरता ॥
वरना एक पलक का भी अरसा न जनाव गुजरता ॥
एक धनुष क्या और कहो, सब चढा किनारे धरता ॥

(लक्ष्मण का कथन)

तर्ज—व० त

बोली की गोली से घायल किया,
क्षत्रिय कोई आया इसको नज़र ही नहीं ।
सूर्य वंशी हैं बैठे प्रबल सामने,
इसको इतनी भी देखो खबर ही नहीं ॥
कोई क्षत्रिय नहीं, अब कहा सो कहा,
आगे लाना जबां पे जिकर ही नहीं ।

बिना चिल्ला चढ़ाये जो पीछे हटूं,
तो मै दशरथ का समझो कुंवर ही नहीं ॥

दोहा (राम)

ठीक कथन लक्ष्मण तेरा, है तुझको शाबास ।
क्या आफत ये धनुष है, चलकर देखें पास ॥
क्षत्रिय है हैरान सभी, जा धनुष पास घबराते है ।
सब ग्रीवा कर नीची अपनी, शर्मा कर वापिस आते हैं ॥
विद्याधर का धनुष समझ, लक्ष्मण नहीं कोई मामूली है ।
यदि हुए यहां से वापिस हम तो, लोक हंसाई शूली है ॥

दोहा (राम)

सिद्ध सभी कार्य बने, पढ़ो मन्त्र नवकार ।
धनुष मात्र यह चीज क्या, बने वज्र भी तार ॥
धीर विक्रम गज ललित गति से, चले राम सुखदानी हैं ।
पीछे चले सुमित्रा नंदन, जोड़ी क्या लासानी है ॥
उद्धतपना नही कहीं तन में, धीर गति से चलते है ।
और देख-देखकर नृप चंद्र गति, आदि हृदय मे हंसते हैं ॥
नहीं चढ़ा सके ज्या *विद्याधर, यह लड़के क्या कर लेवेंगे ।
चाप देख भयभीत भाग, कोई अंग ही तुड़वा लेवेंगे ॥
कर रहे हंसी मन मानी सभी, न लक्ष्य राम कुछ करते है ।
परवाह न ज्यों गजराज करे, जब श्वान भोकते ही रहते है ॥
देख अनूप शरासन मन मे, राम अति हर्षाते हैं ।
और सार मन्त्र उच्चार धनुष के, सम्मुख हाथ बढ़ाते है ॥
वृद्धि गत पुण्य प्रताप से, अग्नि ज्वाला सब काफूर हुई ।
और नाग रूप धारी यक्षों की, क्रोधानल सब दूर हुई ॥

*ज्या जीवा

खिलौने को †दारक जैसे, श्री राम ने धनुप उठाया है।
टहनी सम नमा शरासन, ऊपर प्रत्यंचा को चढ़ाया है॥
आकर्ण चाप को खींच राम ने, खाली एक टंकार किया।
ज्यों नभ मे कड़के चपला, त्यो महा भयंकर शब्द किया॥
वज्रावर्तज धनुष दूसरा, लक्ष्मण जी ने उठा लिया।
और खींच राम की तह, एक दम टकारव घनघोर किया॥
हृदय स्थल कांपे नृप जनो के, मूर्छित हो धरणी जाय परे।
नेत्र स्फारित कर देख रहे, आश्चर्य चकित कई होय रहे॥

चढ़े धनुष दोनो चिल्ले, जयकार बोल रहे नर नारी।
करे त्रिदश वृष्टि कुसुमो की, हर्षोल्लासित जनता सारी॥
उसी समय श्रीराम के गल वरमाला सिया ने डाल दई।
गद्-गद् हुये जनक राजा, जब मनोकामना पूर्ण हुई॥

गाना नं० ६

तर्ज—(त्रिताल)

चढ़ा कर धनुष लोक हर्षित किये।टेक।

जब चढ़ाया धनुष घोर कड़की गगन, इन्द्रदेव सब हो गये मगन।
हाँ रचाया स्वयंवर जभी इस लिये॥१॥

रामचन्द्र के चरणों मे सीता झुकी, हार डाला गले हंसी सूर्यमुखी
दर्श करते ही मै घूंट अमृत पिये॥२॥

सारंगी बजी लोर में बंसरी, तबला बजने लगा नाची हूरोपरी।
बस धनुष पर ही थी जनक की शर्तये॥३॥

पुरी इन्द्री मे फूलों की वर्षा पड़ी, मेघ सावन की लगती है जैसे झड़ी
धनुष सिद्ध रघुवर ने दो कर लिये॥४॥

---

†बालक

गीत भाटों ने गाया जभी आनकर, कंठ में आन दुर्गा बसी जानकर
राग ध्रुपद तराने में वर्णन किये ॥५॥
ना चढ़ा धनुष जिनसे वे शर्मा गये, लग चुका जोर सारे ही घबरा गये।
सिर झुका बैठ गये, और कांपे हिये ॥६॥
गीत गाने लगी मिलकर कामन सभी, शुक्ल शायर भी उत्सव-पर आये तभी।
धिन तृटन धिन तवला गावें सिये ॥७॥

धनुष चढ़ाने की खुशी मे

गाना नं० ७

(तर्ज—घर घर मंगल)

चढ़ाना धनुष का भाईयो मुबारिक हो मुबारिक हो।
विवाहना राम का भाईयो, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥टेक॥
खुशी सब जन मनाते है, गीत मंगलीक गाते हैं।
वाजित्र खूब बजाये है, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥१॥
अनाथो और गरीबां को, दई दिल खोल के माया।
पिता दशरथ जी थे दानी, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥२॥
खुशी मे छोड़े सब कैदी, फिरे आजाद होकर सब।
देवे धन्यवाद राजा को, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥३॥
वधाईयां देते नर-नारी, मिठाई खूब वांटी है।
दिया धन संस्थाओं को, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥४॥
लहराया धर्म का झंडा, मिटाया शोक सब जन का।
सिया ने राम को परणा, मुबारिक हो मुबारिक हो ।५॥
रहे जोड़ी सदा कायम, रहे बाशाद ये दोनो।
देश और धर्म के रक्षक, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥६॥

दोहा

देख धीरता सकल जन होते है हैरान ।
क्या छोटी सी उमर मे, इतने है बलवान् ॥
अष्टादश लड़की राजो ने, लक्ष्मण को परणाई है ।
देख पुन्य शक्ति सब ही ने, अपनी प्रीत बढ़ाई है ॥
श्री "कनक" भ्राता था। जनक भूप का, पुत्री अति सुखदाई है ।
"शुभ भद्रावलि" नाम जिसका, वह भरत कुंवर को व्याही है ॥
अति धूम धाम से विवाह किया, यहां कथने मे नही आया है ।
और चन्द्रगति खो धनुष; आप होकर उदास चल धाया है ।
बाकी सब ने प्रस्थान किया; मैदान राम ने पाया है ॥
विदा समय विदेही ने. सीता को वचन सुनाया है ॥

॥ विदेही माता की सीता को शिक्षा ॥

गाना नम्बर ८

तू बेटी ! आज से हुई पराई, तुझे अवधपुर जाना होगा ।
सास सुसर और परिजन सब का; पति का हुक्म बजाना होगा ॥
नित्य नियम का साधन निशदिन, पतिव्रत धर्म निभाना होगा ।
पीछे सोना पहिले उठना, नित्य शुभ कर्तव्य कमाना होगा ।
विधि सहित भोजन शुद्ध करना, पानी नित छन वर्तना होगा ।
निरर्थक बातों को तजकर, आत्मज्ञान चरचना होगा ॥
क्रोध और माया ममता, इनको दूर भगाना होगा ।
कुल मर्यादा नही विसरना, लाज शरम मन धरना होगा ॥
ऐश्वर्य का गर्व न करना, अन्न धन दान दिलाना होगा ।
संयोग मिले तुझको सुखदाई, पुण्य अखुट कमाना होगा ॥
अपने सुख का ध्यान न रखना, दुखियो का दुःख हरना होगा ।
शील रत्न का अमूल्य गहना, तुझको अंग सजाना होगा ॥

पाँच अणु व्रत पूर्ण पालो, शिक्षा पर ध्यान जमाना होगा।
पति सेवा में तन-मन-धन, क्या सभी निछावर करना होगा॥
पति कदाचित् क्रोधित होवे, विनय सहित खुश करना होगा।
झूठे ढोंग सभी कुछ तज कर, जिनवर का शरणा होगा॥
विद्या पढ़ निज पर हित करना, देव गुरु धर्म लखना होगा।
मनुष्य जन्म का यही सार, बेटी तुझको चखना होगा॥
समय पड़े पर देश-धर्म की, खातिर बेटी मरना होगा।
सद्ग्रन्थों को पढ़ो पढ़ाओ, ध्यान शुक्ल धरना होगा॥

दोहा

काल अनादि का यही, दुनिया का व्यवहार।
समयानुसार बेटी सभी, करते हो लाचार॥

राजा जनक की शिक्षा सीता को

गाना नं० ९

तर्जः—

तू मेरी एक ही सीता बेटी है, कोई और नहीं दो चार नहीं।
फिर राज की सारी सृष्टि मे, तुझसे बढ़कर कोई प्यार नहीं॥
है पुण्यवान बेटी सीता, सुख पाया पूर्वले जप तप से।
और मंगलीक दर्शन तेरे, मम प्रजा रही नित उत्सव में॥२॥
तू जैन धर्म की वेत्ता है, सर्वज्ञ शास्त्र की ज्ञाता है।
नरनारी कहते होंगे जनक, सूर्य को दीपक दिखाता है॥३॥
सब नय प्रमाण क्या स्याद्वादा, सप्तभंगी मर्म की माहिर है।
फिर चौसठ विद्या है प्रवीण, और क्षमाशील जग जाहिर है॥४॥
तब मात-पिता के विरह का दुःख, सर्वज्ञ देव ही जानते है।
व्यावहारिक लक्षण दृष्टि से, नरनारी कुछ पहचानते हैं॥५॥

अब पुत्री कहना यही मेरा, खुश हो निज पति के गृह जावो ।
सुख सम्पत्तिवर सन्तान सदा, शोभन निज पुण्य से पावो ॥६॥

बचपन मे तूने अय बेटी ! सुख जन्म गृह मे पाये है ।
आगे पति के गृह सर्व सुख, तेरे सन्मुख आये हैं ॥७॥

पति सेवा का महत्व लाडली, सद्ग्रन्थो मे गाया है ।
इस बात को अब चरितार्थ करें, सब सार आज तू पाया है ॥८॥

सब मन्त्र-तन्त्र टूणा जादू इनको, हृदय धरना न कभी ।
क्या भूत प्रेत डाकरण शाकरण, इनसे बेटी डरना न कभी ॥६॥

ये प्राण जायं तो जायं किन्तु, बेटी न धर्म जाने पावे ।
छल छिद्र पोप लीला बेटी, तुझको न कोई छलने आवे ॥१०॥

निज सास-ससुर पति की सेवा, करना कर्त्तव्य तुम्हारा है ।
सर्वज्ञ कथित करो धर्म शुक्ल, अन्तिम उपदेश हमारा है ॥११॥

एक आत्म और शरीर ये दो, रोग मुख्य संसार मे हैं ।
कम खाना गम खाना औषधि, दोनों तेरे अधिकार में हैं ॥१२॥

बुतपरस्ती एक बला मिथ्या, वह भ्रम ना हृदय धर लेना ।
कभी देश धर्म आत्म समाज, कमजोर न इसको कर लेना ॥१३॥

कृत कर्मो का भोग कष्ट, आपत्ति सहसा आजावे ।
समता दृढ़ता से सब झेलो, रंचक ना दिल गिरने पावे ॥१४॥

अन्याय के आगे झुकना न कभी, सब सृष्टि चाहे उलट जावे ।
आत्म धर्म बचावो अन्तिम, चाहे सब कुछ लुट जावे ॥१५॥

क्या सीढ़ शीतला काली गौरी, भ्रम को दिल से ठुकराना ।
किसी देव दानव या गंधर्व का, शरण न स्वप्नमात्र चाहना ॥१६॥

ज्ञान दर्श चारित्र से, तूने निज आत्म पहचाना ।
तो करो धर्म की नित सेवा, जो इस भव परभव सुख पाना ॥१७॥

आत्म में अनन्ती शक्ति है, सच्चिदानन्द बन सकती है।
पूज्य काशीराम जी की शिक्षा, सब दुःख समूह हर सकती है ॥१८॥

दोहा

परशुराम का प्रेम था, जनक भूप से खास।
पिनाक धनुष था रख दिया, एक दिन उसके पास ॥

क्षत्रियो के बच्चे भी शस्त्रों से खेला करते है।
क्योकि होते संस्कार, इस कारण से नहीं डरते हैं ॥
खेल खेल मे था पिनाक, एक दिन सीता से भंग हुआ।
किन्तु लाडली पुत्री थी, इस कारण जनक न तंग हुआ ॥
इसी पुराणी बात को ले, ईर्ष्यालुओं ने षड्यन्त्र रचा।
वो ही महापुरुष दुनिया मे सदा इन्हो से रहे बचा ॥

दोहा

क्षत्रिय जन असफल हुये, सफल होगये राम।
ईर्ष्या भाव से रच दिया, षड्यन्त्र उस धाम ॥

परशुराम को ले आये, उल्टी सीधी बाते करके।
विदा वाद आ खड़ा सामने, परशु कांधे पर धरके ॥
परशुराम ने कहा क्रोध से, मम पिनाक क्यों तोड़ दिया।
बस अब समझो तुमने भी, जीने से नाता छोड़ दिया ॥

दोहा (लक्ष्मण)

क्यो बाबा अपनी अक्ल, दई कहीं पर बेच।
असम्बन्ध की बात सब, वृथा रहे हो खेंच ॥

सीता खेल रही थी उससे, टूटे भी कई वर्ष हुये।
एक आप क्यो रोते है, बाकी फिरते सब हर्ष हुये॥
सस्कार ये बुकसपने के, अन्तिम असर दिखाते है।
बस एक ओर हो मार्ग से, क्यो ज्यादा पोल खुलाते हैं॥

इतना सुन कर परशुराम, क्रोधानल मे भबक पड़े।
विघ्न देख हटा लक्ष्मण को, राम सामने आन खड़े॥

हाथ जोड़ श्रीरामचन्द्र जी यूं बोले शीतल वाणी।
महाराज ये लक्ष्मण बच्चा है, आप क्षमा के है दानी॥
वह पिनाक आपका जीर्ण था, बच्चो के खेल मे टूट गया।
फिर यह भी बात पुराणी है, और सहज में पीछा छूट गया॥
आपसे वीर महापुरुषो को, नया और मिल सकता है।
यह षड्यन्त्र है रचा किसी ने, बकने दो जो बकता है॥
परशु ऊपर राम तले चरणो मे लिपटा रहता है।
हम विलीन आपके आत्म मे, निज गुण तो एक सरीखा है॥
है प्रकृति का भेद सभी ज्ञानी के लिये परीक्षा है॥

दोहा

श्रीराम के वचन से परशुराम हुआ शान्त।
समझ लिया षड्यन्त्र ये, झूठ सभी एकान्त॥

पुण्यवान प्राणी के संमुख, विघ्न सभी काफूर बने।
महाक्रोधी भी शान्त हुआ, षड्यन्त्रियो ने शीश धुने॥

जनक के भाई कनक की शिक्षा

गाना नं० १०

तर्ज—ताल त्रिताल

बेटी सुन सीता ज्ञान मेरा, तुम इसे भूल मति जाना ॥ स्थायी ॥
प्रीतम अवतारी राम तेरा, तू फूल कली यह भंवर तेरा ॥
है रुतबा आला जबर तेरा, रघुवर चरणो मे ध्यान लाना ॥१॥
मन्त्र तंत्र धागा तबीज, ये झूठी है तीनो चीजे ।
इनको बरते बेतमीज, तू इन पर ध्यान मति लाना ॥२॥
श्री नमोकार पढ नित्य सीता, तू समझ इसको प्रेम गीता ।
तीन लोक उसने जीता, नमोकार ज्ञान जिसने माना ॥३॥
यह नष्ट करे दुःख दायन को, ला प्रेम पढो इस गायन को ।
इस भव पर भव सुखदाई, शुभ ध्यान शुक्ल भगवन ध्याना ॥४॥

दोहा

रथ शकट हस्ती पीनस, अश्व दिये शृंगार ।
मणि मुक्ता माणक दिये, जिनका नही शुम्मार ॥

जिनका नहीं शुम्मार, जनक ने दिया बहुत भूषण गहणा ।
बिदा बाद सब कहें सहेली, अब नही चित्त लगता बहना ॥
बिन सीता लगे मिथिला सूनी, मुश्किल हो गया अब रहना ।
आज बिछुड़ गई हम से सीता, कोकिल वैनी मृग नैना ।

दौड़

छोड़ गई जन्म भूमि को, जा रही ससुर भूमि को ।
अब सीता बिन चित्त लगेना, देख देख कर वास भवन को,
भर भर आवे नैना ॥

दोहा

अवधपुरी मे खुशी से, पहुंची जब बारात।
स्वागत करने आगये, नरनारी मिल साथ ॥
मंगल गायन सब सखियो ने, सीता महल पहुंचाई है।
धन्य कौशल्या भाग तेरे, सबने दयी आन बधाई है ॥
दिल खोल दान तकसीम करो, नृप ने दिया हुक्म वजीरो को।
फिर प्रीति भोजन दिया भूप ने, मुफलिस और अमीरो को ॥

गाना नं० ११

मिल कामन झगड़ा डाल रही, खोलो कंगना बोली मार रही।टेर।
सोचो मति तुम कंगना खोलो, समझ तुम्हे अवतार रही।
धनुष की चाप नही कंगना है, रघुवर से हंस नार रही ॥१॥
चातुर नार कई सखियो से, कहे वृथा कर तकरार रही।
कगना खोल दिया रघुवर ने, यूं ही बहस घड़ी चार रही ॥२॥

दोहा

दशरथ नृप ने एक दिन, उत्सव दिया रचाय।
मंगलीक शुभ कारणे, कलशे जल भरवाय ॥
भेज दिये रनवासो मे, कलश पहिला सेवक के हाथ दिया।
शेष कलश एक एक कर, दासी जन को बांट दिया ॥
निज निज चेटी ने, निज निज, रानी सिर कलश डुलाया है।
यह देख हाल पटरानी, कौशल्या को आमर्ष आया है ॥

दोहा (कौशल्या)

मुझे कलश भेजा नही, भेजा औरो पास।
अपमान एक मेरा हुआ, बाकी रही हुलास ॥
कहने को तो मै पटरानी हूँ क्या. इज्जत मेरी खाक रही।
भेज दिया सब ही को जल पहिला हक नृप को याद नही ॥

प्रेम नहीं अब रहा उन्हें, मैं गणना में शुम्मार नहीं।
इस बेइज्जति से मरना अच्छा जीना मुझको दरकार नहीं।

दोहा

तुच्छ हृदय हो नारी का भर लाई जल नैन।
गद्गद् स्वर रानी कहे उलट पुलट मुख बैन॥

इतने मे आ गया भूप, सब हाल देख घबराया है।
बोले कहो कारण क्या रानी, मरना पसंद क्यों आया है॥
गद्गद् स्वर से क्यों बोल रही, नैनो मे जल भर लाई हो।
क्या हुआ तेरा अपमान, या किसी दुःख ने आज सताई हो॥

(दशरथ का रानी से पूछना)

गाना नं० १२ (तर्ज—जब तेरी डोली—)

महलों में शोक छाया, तेरे क्यो आज रानी।
गुस्से का कोन कारण, अए मेरी राज रानी॥१॥
जागो या सो रही हो, व्याकुल क्यों हो रही हो।
मुख जैसे कि रो रही हो, किस गम मे हो दीवानी॥२॥
मंगल है तेरे घर मं, तू लीन है किस फिकर मे
इसका सुनु जिकर मै, कैसी है गम कहानी॥३॥
आर्त यह ध्यान छोड़ो, भ्रमता से मुख मोड़ो।
उत्सव मे मन को जोड़ो, वृथा क्या मन समानी॥४॥

दोहा (कोश०)

जान बूझकर दुःख दिया, फिर बनते अनजान।
भेज कलश सब को दिए, किया मेरा अपमान॥

यह लो जल महारानी जी, इतने मे आ बूढा बोला।
झट लिया हाथ दशरथ नृप ने, महारानी के सिर पर डोला॥

क्रोध हुआ उपशांत अति, प्रसन्न चित्त महारानी का।
बोली महाराज ने मुझ पर खुद डाला कलशा पानी का॥

दोहा (भृत्य)

हाल देर का भृत्य से, पूछा नृप ने फेर।
पहिले जल तुझ को दिया कहां लगाई देर॥

दोहा

मै चाकर महाराज का करूं हुक्म तामील।
जीर्ण मम काया बनी, लगी इस-तरह ढील॥

धरता पैर उठा आगे, पीछे को पड़ता जाता है।
जब उठे निरंतर खांसी बलगम गले बीच अड़ जाता है।
क्या करूं नारी है कलिहारी, अवनीत पुत्र दुःखदाई है॥
पुण्य उदय पिछली आयु मे, शरण आपकी पाई है॥

दोहा

स्वयं अपना हाल कह, शर्माऊ महाराज।
अपनी नारी के कहूँ कर्त्तव्य क्या सिरताज॥

बूढ़े भृत्य का निवेदन

गाना नं० १३

फूहड़ नार बहुत किलसावे ॥टेर॥
बांकी टेढ़ी रोटी करती, नीरस साग बनावे।
भाग्यहीन अब रोटी खाले, ऐसे तो वचन मुझे प्यार से बुलावे ॥१॥
पहिले कहे बालन ला मुझसे, फिर पानी मंगवावे।
क्षुधा के बस मांगूं रोटी सिर पर खोंसड़े चार टिकावे ॥२॥

दुःख दर्द मे कभी आनकर, पानी तक न प्यावे ।
बोली की भर मारे गोली, जख्मी जिगर पर तीर चलावे ॥३॥
क्षमा करो सब दोष मेरा, जो बना और बन आवे ।
मानिंद बकरी शेर नार से, शुक्ल मेरा मन घबरावे ॥४॥

दौड़

झुर्रियां पड़ गई जिस्म पर, दांत हुए सब दूर ।
यौवन सारा खो दिया, रहा बुढापा घूर ॥
लगा कांपने शीस श्वास पर, श्वास निरंतर आते हैं ।
हो गये हाथ मुर्दे समान, दो चरण मेरे थक जाते हैं ॥
पाप किया पिछले भव में, अब भी न धर्म कमाया है ।
अमोल समय भ्रम जाल मे, फंस कर मैंने वृथा गवाँया है ॥

—***—

दशरथ का वैराग्य

दोहा

व्यथा सुनकर वृद्ध की, दशरथ किया विचार ।
धिक् ऐसे संसार को, सिर पर डारो छार ॥
विरक्त हुआ मन दशरथ का, बूढ़े पर उपकार किया ।
आयु पर्यन्त भोगे सुख पूर्ण, ऐसा नृप ने दान दिया ॥
फिर सोचा यही अवस्था, एक दिन मुझ पर भी आवेगी ।
मनुष्य जन्म अनमोल समय, यह बात हाथ नहीं आवेगी ॥

दौड़

पुण्यवान् को झट मिले जैसा होवे विचार ।
समोसरे आ बाग में, सत्य भूति अनगार ।

चौपाई

पूर्व पाठी आगम विहारी, चार ज्ञान तप पूर्व धारी ॥
पांच सुमति और पर उपकारी, प्राणी मात्र के हितकारी ।

दोहा

जनता ने जब सुना, आए मुनि महान् ।
हर्षसहित पहुंचे सभी, सुना धर्म व्याख्यान ॥

परिवार सहित गए दशरथ नृप, मुनि जन को शीश नवाया है
जब सुना धर्म व्याख्यान अति, आनंद ज्ञान मे आया है ॥
चंद्रगति भ्रमण करण, परिवार सहित था सैर गया ।
श्री मुनि दर्शन अर्थ अवध मे, वापिस आते ठहर गया ॥
थी ज्ञान की वर्षा लगी हुई, मुनि भेद खोल दर्शाते हैं ।
कुकर्म संग हो मूढ़ फिरे, यह जीव बहुत दुःख पाते हैं ॥
हो काम मे अंधे फिरे भटकते, राग मोह चित लाते हैं ।
देख मनो गम झुके लाभ, ना होने पर पछताते है ॥
यह चिंतामणि मनुष्य तन पाया, फेर हाथ नहीं आयेगा ।
अचत्तु कर्ण रस घ्राण, अनंते चक्र मे रुल जायेगा ॥

दोहा

पुद्गल परिवर्तन सुना, गए भव्य घबराय ।
कुमति छोड़ सुमति ग्रही, सम्यक्त्व दिल ठहराय ॥
उपदेश बाद भूपाल ने, प्रश्न किया तत्काल ।
पूर्व जन्म का हे प्रभो ? कृपानिधि कहो हाल ॥

———

सीता भामण्डल मिलन

दोहा

कर्मों की विचित्रता, सुनों भूप धर ध्यान।
भामंडल सीता जन्म, युगल पने पहिचान॥

छन्द (मुनि)

बहन भाई आन जन्मे, यह विदेहा नार के।
भाई को सुर हर ले गया, था द्वेष दिल में धार के॥
रख इसे वैताड़ पर फिर, सुर गया निज धाम को।
तूने उठा कर सुत वही, निज हाथ से दिया वाम को॥
पूर्व जन्म का सुत तेरा, सरसा यह इसकी नार थी।
तुम बने निग्रन्थ मुनि, पुष्पा वती भी लार थी॥
अंत तुम सुरपुर गए, सुख वैंक्रिय भोगे अति।
छोड़ सुरपुर रथनुपुर, आकर बना चंद्रगति॥
संयोग वश आकर बनी, पुष्पावती पटनार है।
भामण्डल बना यह सुत तेरा, वास्तव में जनक कुमार है॥

दोहा

भामण्ल ने कथन सब, सुना लगाकर कान।
अध्यवसाय निर्मल हुआ, जाती स्मरण ज्ञान॥
पूर्व जन्म का हाल सुन, गिरा मूर्छा खाय।
हो सचेत कहने लगा, मस्तक जरा हिलाय॥
हूं महा पापी चांडाल अधर्मी दुष्ट आत्मा मेरी है।
जो वांछा मै संयोग अनुचित, दैव ने बुद्धि फेरी है॥
आ गिरा चरणो में सीता के, बोला अविनय माफ करो।
मैं हूँ अपराधी बहिन तेरा, मुझ दुष्ट पे कोई दंड धरो॥

दोहा (कवि)

भ्रात विरह का शल्य सब, सीता का हुआ दूर ।
फूली न समाती अंग में, मिला यह सुख भरभूर ॥
मिला देख भाई सीता की खुशी, का न कोई पार रहा ।
श्री रामचन्द्र जी भामंडल को, देता अतितर प्यार रहा ॥
निज हाथ शीश धर सीता ने, भामंडल को आशीष दिया ।
चिरंजीव रहो अए भाई, अब तक तैंने कहां वास किया ॥
फिर मिथिला नगरी रामचन्द्र ने, झट यह खबर पहुंचाई है ।
यह सुनते ही वृतान्त जनक, और साथ विदेहा आई है ॥
देख पुत्र का मुख राजा का, हृदय कमल प्रकाश हुआ ।
ग्रीष्म अन्त श्रावण मे, जैसे सब जगल मे घास हुआ ॥
भामंडल ने मात पिता के, चरणन मे शीश झुकाया है ।
निज सुत को देख दम्पति के, हृदय मे आनन्द छाया है ॥
उस खुशी को कैसे बतलावे, न भाव कथन मे आया है ।
न शक्ति यहाॅ लेखनी की, सर्वज्ञ देव ही ज्ञाता है ॥
नृप चन्द्रगति ने भामडल को, रथनुपुर का राज्य दिया ।
आप लिया संयम नृप ने, तप जप से आत्म काज किया ॥
अष्ट कर्म संहारण को, शुभ भाव सदा ही वर्तावे ।
अहो भाग्य उस प्राणी का, जो संयम मार्ग को चाहे ॥

दोहा

आनन्द मंगल हो गया, पहुॅचे निज निज धाम ।
जनक भूप का सिद्ध हुआ, मन वांछित सब काम ॥
सत्य भूति ज्ञानी मुनि, शुभ चारित्र विशाल ।
शासन के शृंगार है, षट् काया प्रतिपाल ॥
विधि सहित कर वन्दना, बोले दशरथ भूप ।
पूर्व जन्म का हे प्रभु, वर्णन करो स्वरूप ॥

प्रश्न सुनकर नरनाथ का, तब बोले मुनिराय ।
पूर्व भव की कथा तुम, सुनो श्रवण चित्तलाय ॥

"राजा दशरथ का पूर्व भव वर्णन"

दोहा (मुनि)

सेवापुर वर नगर मे, भावन सेठ सुजान ।
पत्नी उसकी दीपिका, सुनो लगाकर कान ॥

छन्द

उपस्ति नामक तिनके सुता, साधु की जिस निन्दा करी ।
जीव नृप वह ही तुम्हारा, अब सुनो आगे चरी ।
चन्द्रगिरी भूपाल के, धन्य श्री शुभ नार थी ।
वरुण नाम का सुत हुआ, संगति मिली सुखकार थी ॥
सेवा करे साधुजनो की, ध्यान दो शुभ नित्य रहे ।
दी छोड़ खोटी संगति, सब आत्मा को जो दहे ॥
उत्तर कुरुक्षेत्र मे, मरकर हुआ फिर युगलिया ।
फिर तीन पल्य की भोग आयु अन्त में सुरपद लिया ।

दोहा (मुनि)

पुष्कलावती नामक पुरी, पुष्कलावती मंझार ।
नन्दी घोप राजा भला, पृथ्वी नामा नार ।
नन्दीवर्धन इक हुआ पुत्र, सुरगति से चलकर आया है ।
दे राज्य पुत्र को नन्दी घोष ने, तप संयम चित्त लाया है ॥
श्री यशोधर नामक मुनि पास, संयम व्रत ले अनगार हुआ ।
नन्दीवर्धन भी पीछे से, श्रावक बारह व्रत धार हुआ ॥

दोहा

गृहस्थ धर्म लेकर गया, पंचम स्वर्ग मंझार ।
आयुष्य क्षय कर देवकी, लिया मनुष्य अवतार ॥

पूर्व महा विदेह क्षेत्र मे, वैताड्य गिरी सुविशेष ।
उत्तर श्रेणी मे भला, शशीपुर नामक देश ॥
था भूप रत्नमाली विद्याधर, विद्युतलता नारी तिसके ।
एक सूर्ययश पुत्र जन्मा, अति शूर वीर योद्धा जिसके ॥
सिंहपुरी के वज्रनयन, नृप से राजा का जग हुआ ।
वहाँ विजय रत्नमाली पाई, और वज्रनयन नृप तंग हुआ ॥

दोहा (मुनि)

सिंहपुरी को घेर कर, अग्नि लगा लगान ।
पूर्व मित्र इक देव आ, लगा देन यो ज्ञान ॥

दोहा (मुनि)

भूरिनन्दन तू हुआ, पूर्व जन्म मे भूप ।
पड़ विलासिता मे तजा, तूने धर्म अनूप ॥
मुनि से मांस का त्याग किया, किन्तु कुसंग ने घेर लिया ।
भंग किया तूने व्रत अपना फिर ढंग उसी तरह गेर लिया ॥
मैं राज पुरोहित था तेरा, अब आगे हाल सुनाता हूँ ।
स्कन्द राय के हाथ से फिर, मै मरण वहाँ पर पाता हूं ॥
हस्ति यूथ मे जन्म लिया, पर कर्म कही ना तजते है ।
भूरिनन्दन के भृत्यो द्वारा, वहाँ भी कैद मे फंसते हैं ॥
मै नायक किया हस्ति चमु मे, फिर होनी ऐसी बनती है ।
अन्य एक नृप से, भूरिनन्दन की लड़ाई ठनती है ।

दोहा

उस घोर युद्ध मे मै तजे, हस्ति योनि के प्राण ।
पुण्योदय से फिर हुआ, इसका करू बयान ॥
उसी भूरिनन्दन के थी, गांधारी नाम की पटरानी ।
मै उसी के जाके पुत्र हुआ, जो कहलाती थी महारानी ॥

अरिसूदन नाम धरा मेरा, फिर जाति स्मरण ज्ञान हुआ।
लख करके पूर्वभव अपना, संसार से मुझे वैराग्य हुआ॥

दोहा

मुनि वृत्ति धारण करी, जनक की आज्ञा लेय।
ज्ञान प्रथम धारण किया, फिर तप जप में चित्त देय॥

पॉच सुमति और तीन गुप्ति, का दिल मे ध्यान टिकाया है।
और महाघोर तप अग्नि मे, बहु कर्म समूह खपाया है।
अब अष्टम स्वर्ग मे हुआ, देव उपमन्यु नाम धराता हूं।
अब सुनो हाल राजन् अपना, तेरा भी हाल सुनाता हूं॥
तैने मर अजगर योनि लई, फिर दावानल मे भस्म हुआ।
जा नर्क दूसरी में पहुँचे, वहाँ कुम्भिपाक मे जन्म हुआ॥
तू निकल नर्क से भूप हुआ, अब सालीरत्न कहाता है।
फेर नर्क मे जाने का यह, क्यो सामान बनाता है॥
पाया देव से बोध नृप ने, पाप कर्म सब छोड़ दिया।
फिर सूर्ययश पुत्र सहित, दुनिया से दिल मोड़ लिया॥
निज 'कुलनन्दन' को दिया राज्य, दोनो ने संयम धार लिया।
और स्वर्ग सातवें महा शुक्र में, जिस्म वैक्रिय सार लिया॥

दोहा

स्वर्ग सातवें भोग कर, सुर सुख अति विस्तार।
सूर्ययश आकर हुआ, दशरथ भूप उदार॥
रत्नमाली आकर हुआ, जनक भूपति यह।
कनक जनक भाई भला, उपज्या सहज स्नेह॥

मनि नन्दी घोष ने ग्रैवेग में, भोगे सुर सुख अति भारी।
सो सत्य भूति निर्ग्रन्थ हुआ मैं, चार ज्ञान महाव्रत धारी॥

सुना हाल जन्मान्तर का, वैराग्य भूप दिल छाया है।
फिर अयोध्या मे आकर, नृप ने दरबार लगाया है॥

दोहा

सुत मित्र पूछे सभी, और बड़े मंत्रीश।
भरी सभा के बीच में, भाषण लगे महीश॥

अस्थिर तन धन संसार मे है,
फिर इससे कहो सम्बन्ध ही क्या।
जिन फूलो ने कुमलाना है,
फिर उनकी मस्त सुगन्ध ही क्या।
प्रकृति का तन बना सभी यह,
अवश्यमेव खिर जावेगा।
अनमोल समय यह मिला,
'शुक्ल' फिर शीघ्र हाथ नहीं आवेगा।

सब राज्य महल द्रव्य दुनिया का, कुछ जाना मेरे साथ नहीं।
है यही समय जो निकल गया, दुर्लभ फिर आना हाथ नहीं॥
यह तृष्णा है आकाश तुल्य, न भरी न भरने पायेगी।
अग्नि मे जितना घी डालो, उतनी ही लपट दिखायेगी॥
जो वस्तु अनित्य संसार मे है, उससे अनुराग बढ़ाना क्या।
मिल रहा संखिया जहर समझ, फिर उस भोजन का खानाक्या॥
हो गया विरक्त अब मन मेरा, संयम व्रत लेना चाहता हूँ।
सुत रामचन्द्र को राज ताज, निज कर से देना चाहता हूं॥

—❀—

राजताज

दोहा (भरत)

भरत कहे पिताजी सुनो, मै व्रत लूं तुम लार।
हित न जाने अपना, सो जन मूढ गंवार॥
पहिला दुख दारूण बड़ा, विरह आपका होय।
और संसार बढ़ावना, कौन सहे दुःख दोय॥

यह वात शीघ्र ही फैल गई, जैसे चिकनाई पानी पर।
दासी ने जो कुछ सुना हाल जा कहा कैकेयी रानी पर॥
रामचन्द्र को राजतिलक, महारानी होने वाला है।
और पुत्र तुम्हारा भरत भूपसंग, संयम लेने वाला है॥

दोहा

एक वात है सत्य तेरी, दूजी, बिल्कुल भूठ।
क्या कुभाव तेरे हृदय, डालन के है फूट॥
पतिदेव संयम लेंगे, यह बात तो सभी जानते हैं।
उत्तराधिकारी राम बनेंगे, यह भी सभी मानते है॥
पर संयम लेगे भरत कुमर, यह किसने तुझे सुनाया है।
जिस बात का कोई सबन्ध नहीं, कहकर मम हृदय जलाया है

दोहा

दासी तेरी बात का मुझे नहीं इतबार।
सिर पैर नहीं कुछ बात का, बांदी मूढ़ गंवार॥१॥

तू बांदी मूढ़ गंवार सभी, बकवाद करे अपने मन की।
यदि फेर मसखरी की मुझसे, तो खाल उड़ा दूंगी तन की॥
क्या तुझको कोई स्वप्न आया, या नशे बीच गलतान हुई।
यह भेद समझ में नहीं आता, सुन बात तेरी हैरान हुई॥

दोहा (दासी)

सत्य सभी मैने कहा, कर तेरा अनुराग ।
बार-बार तुझ से कहूं, इस गफलत को त्याग ।।
इस समय यदि प्रमाद किया तो, फिर पीछे पछतावेगी ।
भरत पुत्र के विरह मे फिर, रो रो कर समय बितावेगी ।।
तू स्वामिन है मै दासी हूँ, इस कारण कहना पडता है ।
और भरतकुंवर का मोह रानी, मुझको भी आन जकड़ता है ।।

गाना १४ (दासी का)

(रागनी—तीन ताल)

रानी तुझको नही मन, ज्ञान खबर । स्थायी---
अभी शहर मे पिटा ढिंढोरा, राज तिलक का समय दुपहरा ।।
खुशियो मे सब अवध नगर ।
रामचन्द्र को राज्य मिलेगा, तख्त नशीनी ताज मिलेगा ।।
धूम मची कर देख नजर ।
कहे दशरथ मैं संयम धारूं, भरत कहे मै संग सिधारूं ।।
फिर रानी तेरी नहीं कोई कदर ।
सोच यत्न कुछ करले रानी, आलस्य मे क्यो पड़ी दीवानी ।।
तू भरत से करले आज सबर ।

दोहा

सुन कर रानी के वचन, भूल गई रंग चाव ।
विरह पुत्र का ना बने, सोचन लगी उपाव ।।
लगी अक्ल भ्रमण करने, कोई ढग नजर नहीं आता है ।।
विरक्त हुवे नृप नहीं रह सकते, सोचा सुत भी जाता है ।
जो वर था मिला स्वयम्बर मे नृप के भण्डार रखाया है ।
अद्भुत यह ढंग निराली अब, लेने का मौका आया है ।।

दोहा

पास बुलाई रानिये, बोले नृप समझाय।
राज-काज दे राम को, मैं संयम लूं जाय॥
जो-जो मन के भाव आप, वह प्रकट सभी कर सकती हो।
यह जन्म-मरण संसार अनित्य तज संयम भी धर सकती हो॥
श्रेष्ठ मुहूर्त सभी ज्योतिषी, देख हाल बतलाते हैं।
कल रामचन्द्र को राज ताज दें, हम संयम चित्त लाते हैं॥

दोहा

सुनते ही नृप के वचन, रानी सब हैरान।
क्योंकि पति वियोग का समय दृष्टि लगा आन॥
देख विरह-नृप को सब रानी, यथा योग समझाती हैं।
निज राग प्रेम दिखलाने को, नयनों से नीर बहाती हैं॥
जब समझ लिया राजा आगे न पेश हमारी जाती है।
तब शेष मौन हो गई, कैकयी ऐसे वचन सुनाती है॥

दोहा (कैकयी)

नम्र निवेदन है पिया, संयम लेना बाद।
वर भंडारे है मेरा, स्वयं करो प्रभु याद॥
स्वयं करो प्रभु याद गये थे आप स्वयंवर घर में।
पंक्ति से थे बाहिर मैं लाई, वरमाला जब कर में॥
मचा घोर संग्राम अड़े, जब शूरे सभी समर में।
करी सहाय मैं उठा होल था, आप के आन जिगर में॥

गाना नं० १५

(कैकयी का दशरथ से कहना) बहर कव्वाली

अक्ल उस दिन मेरे स्वामी, गई थी कर किनारा है।
अरि ने सारथी के बाण जब सीने में मारा है॥१॥

शत्रुओं ने तुम्हें आकर, युद्ध में जब दबाया था ।
बनी मे सारथिन आकर, दिया तुमको सहारा है ॥२॥
पड़ी मै दल मे बिजली सी, चलाई तेग फिर तुमने ।
हुए काफूर सब शत्रु रवि जैसे सितारा है ॥३॥
हो खुशी फिर अपने मुख से, कहा मांगोगी सो दूंगा ।
न तोड़ूं वाक्य क्षत्रिय हूँ, वचन तुमने उचारा है ॥४॥
धरो भंडार मे मैंने कहा, प्रीतम वचन लेकर ।
उऋण होवे मुझे देकर, आप सिर बोझ भारा है ॥५॥

दौड़

सुनो स्वामी चित्त लाके, वचन दो मेरा चुका के ।
वचन क्षत्रिय नहीं हारे, जो हारे सो समझ पति,
नहीं पहुँचे मोक्ष द्वारे ॥

दोहा दशरथ)

हाँ मैने था वर दिया, कर तेरा अनुराग ।
बिना एक चरित्र के, जो मर्जी सो मांग ॥

(दशरथ)

सब ठीक दिलाया याद मुझे, अये रानी तूने आ करके ।
मै क्षत्रिय हूँ नहीं तोड़ूं वाक्य, सब कहूं तुम्हें समझा करके ॥
जो कुछ इच्छा तुझको सब, देने को तैयार हूं मैं ।
निष्फल दुनिया मे एक घड़ी, भी रहने को लाचार हूं मैं ॥

चौपाई

क्षत्रिय कुल रीत यही सुन रानी, वचन हेत तजते जिंदगानी ।
मेरु समुद्र चले महीमान, शूर वचन जाने सम प्राण ॥

दोहा (कैकयी)

आप तुल्य कोई है नहीं, दानी जन महाराज ।
वर मुझको भी दीजिये, जो कुछ मांगूं आज ।।

कैकयी—भरत पुत्र को राज तिलक दो, यही मांगना चाहती हूँ ।
बस और नहीं इच्छा, मुझको,सन्तोष इसी मे लाती हूँ ।।
अब कृपया आप शीघ्रता से, मुख से यह वचन सुना दीजे ।
तुम होकर उऋण सब तरह से, जिन भाषित तप संयम कीजे ।।

दोहा

सुने बचन जब नार के, गया कलेजा कांप ।
राजा को इस बात का हुआ घोर सन्ताप ।।

उड़ गये अक्ल के सब तोते, नृप दिल में अति उदास हुआ ।
बस फंसा बाम के जाल भूप बन, आर्तध्यानी निराश हुआ ।।
फिर दीर्घ श्वास लेकर बोला, अच्छा उपाय यह कर देंगे ।
अब जावो निज महलों मे, हम ताज भरत सिर धर देंगे ।।

दोहा

दशरथ मन में सोचता मुश्किल बनी अपार ।
इधर कुआ खाई उधर, पड़े किस तरह पार ।।

गाना १६ (दशरथ का विचार)

आज मुझको किस तरह धोखा दिया इस बाम ने ।
कैसे कहुं अधिकार तज दे, राम सुत के सामने ।।१।।
सर्प के मुख मे छछून्दर, खाय या छोड़े उसे ।
हाल वही कर दिखाया, आज मेरा वाम ने ।।२।।
छीन हक मैं राम का, कैसे भरत सुत को देऊं ।
कर दिया हैरान इस बे मेल, अनुचित काम ने ।।३।।

वचन को हारूं नहीं, जो आत्मा का धर्म है।
कर दिया बेहाल मुझको, इस करज के दाम ने ॥४॥
तोड़ दूं व्यवहार सारा, न्याय कैसे छोड दूं।
प्रसिद्ध हम सबको किया, दुनिया में जिस सुत राम ने ॥५॥
तीर बीन छलनी किया, मेरा कलेजा नार ने।
अब 'शुक्ल' मैं क्या करूं, युक्ति न आती सामने ॥६॥

दोहा

सोच फिकर मे इस तरह, हुआ भूप लाचार।
इतने मे आकर झुके, चरणन पद्म कुमार॥
आ नमस्कार की चरणो में, फिर मुख पर नजर टिकाई है।
बैठे कुछ आज उदास भूप, सब चमक दमक मुर्झाई है॥
यह देख पिता का हाल, राम का हृदय कमल मुर्झाया है।
दो हाथ जोड़ नम्रता से, यों शीतल वचन सुनाया है॥

दोहा (रामचन्द्र)

कारण आर्तध्यान का, बतलाओ महाराज।
विकट समस्या आ गई, कौन सामने आज॥
कौन सामने आज आपके; मन मे बड़ा फिकर है।
आज्ञा कर दई भंग किसीने, या भय और जबर है॥
शूरवीर रणधीर आपकी, जाहिर तेग समर है।
कौन फिकर है पिता आपको, जब तक राम कमर है॥

दौड़

भेद दिल का बतलाओ, जो आज्ञा हो फरमावो।
जन्म तुम घर लीना है, पिता रहे जो दुखी फेर,
धिक्कार मेरा जीना है॥

दोहा (दशरथ)

बेटा तेरे वचन सुन, मिला मुझे आराम ।
जैसा तेरा नाम है, वैसा ही शुभ काम ॥
अय बेटा ! मैं बड़े-बड़े जंगों में नहीं घबराया था ।
इन भुजा बलों से शूरवीर, योद्धों का मान घटाया था ।
अब उल्ट फेर एक आन पड़ा, कोई रास्ता मुझे न पाया है ।
और उसी दुःख ने अय पुत्र मेरा यह हाल बनाया है ॥

दोहा

खाना पीना भाता नहीं, उड़ गये मेरे होश ।
सोच रहा तजवीज मैं, बैठा यहां खामोश ॥

छंद

कैकयी राणी का जब था, स्वयम्वर मण्डप रचा ।
पहनाई वरमाला मुझे, तब घोर युद्ध वहाँ पर मचा ॥
तीर खा मम सारथी, धरणी गिरा मुर्झाय के ।
रानी बनी तब सारथिन उस घोर युद्ध में आय के ॥
शत्रु भागे मैदान से सब, रण विजय मैं कर लिया ।
देख पराक्रम हो प्रसन्न रानी को, था तब वर दिया ॥
वचन कर रखा था, मेरे पास वर मांगा अभी ।
जिह्वा नहीं आगे को चलती, कैसे बतलाऊं सभी ॥
राज देवो भरत को मांगा है, वर यह दुख मुझे ।
ऋण मेरा उतरे नहीं, पुत्र मैं बतलाऊं तुझे ॥

दोहा

मन मे बड़ी उमंग थी, लेऊं संयम धार ।
इस झगड़े ने आन-कर, किया मुझे लाचार ॥

क्षत्रिय अपना वचन सदा, सब पूरी तरह निभाता है।
महाशूर वीर नहीं हटे कभी, चाहे अपने प्राण लगाता है॥
कैसे करू वचन-पूरा अब, यही मै ध्यान लगाता हूँ।
यहां बैठा दुःख मे लीन हुआ, इस जीने से घबराता हूँ॥

दोहा (राम)

राज्य नकारी चीज पर, इतने है हैरान।
वर देने को हे पिता, मांगो हाजिर प्राण॥

गाना नं० १७ (रामचन्द्र)

पिता मात का कर्जा, सिर से उतारना जी। स्थायी
तुम गल जिस पर माला पाई, फिर दल मे आ जीत कराई।
इससे बढ़कर और कोई उपकार ना जी॥१॥
विपत समय मे करी सहाई, बड़ी मात की शूरमताई॥
जो मांगे दो जरा करो, तकरार ना जी॥२॥
खिला आज यह चमन हमारा, कृपामात की करो विचारा॥
धन्य कैकयी मात सर्व, दुःख टारना जी॥३॥
क्षत्रिय का निज कर्म यही है वचन न तोड़े धर्म यही है।
हक बेहक का करो, आप इसरार ना जी॥४॥
पिता आपने वचन दिया है, राज्य मात ने मांग लिया है।
लिये भरत के मुझे, खुशी का पार ना जी॥५॥
भरत राम दो नहीं पिताजी, क्या नाचीज है ताज पिताजी।
जैसे मस्तक चक्षु, इन्हे विचारना जी॥६॥
पहिले भरत को राज तिलक हो, फिर जिन दीक्षा मे निज दिल दो।
शुक्ल ध्यान निर्विघ्न, मोक्ष पदधारना जी॥७॥

दोहा (दशरथ)

शाबास मेरे सुत के हरी, विनयवान रणधीर।
तृषातुर को अय कुमर, प्याया शीतल नीर॥
ग्रीष्म अन्त श्रावण जैसे, या जैसे द्वीप समुद्र मे।
शशि चकोर को सुखदायी, या औपधी रोग भंगदर मे॥
जैसे श्री जिन धर्म जीव को, सुख अनन्त दिखलाता है।
ऐसे मुझ को सुखदायी, तू पुत्र राम कहलाता है॥

दोहा

उसी समय भूपाल ने, किया एक दरबार।
मंत्रीश्वर बुलवाय कर करने लगे विचार।

दशरथ—घडी पहर निष्फल मुझको, वर्षो की तरह दिखाते है।
अब राज तिलक दे भरत पुत्र के, सिर पर ताज टिकाते है॥
तुम यथायोग्य सब तैयारी, करने में अब ना देर करो।
व्यवहार सभी यह ठीक बना, स्वतन्त्र हमें भी फेर करो॥
यह नियत सभी कुछ हुआ, आज वस रानी का वर देते है।
सुत भरत अयोध्यापति बना, अब हम जिन दीक्षा लेते हैं॥
है यही सम्मति रामचन्द्र की, भरत भूप होना चाहिये।
और ऐसे पुत्र सुपुत्र के लिये, धन्यवाद देना चाहिये॥

दोहा

राज कुमर प्रस्ताव सुन, बोले भरत कुमार।
उदक विलोने से कभी, निकला है क्या सार॥

दोहा (भरत)

माता को मैं क्या कहूं, मुझे न चाहिये राज।
चरित्र आपके संग लूं सारूं आत्म काज॥

अनुचित शब्द कोई माता को, कहना महा सभ्यता है।
और आश्चर्य मे चकित हुआ, दिल मेरा बड़ा धड़कता है॥
क्या यही एक वर था दुनिया मे जो माता ने मांगा है।
जो परम धर्म का मर्म शर्म, हक तीनो को ही त्यागा है॥

दोहा (भरत)

सरल स्वभावी पिताजी, तुम भोले भण्डार।
असुरों को भी ना मिला, त्रिया चरित्र पार॥

भरत—मोह कर्म के वशीभूत हो अपना आप भुलाती है।
और पुत्र के हित के कारण, अपना सर्वस्व लगाती है।
रोना जो इन्हे नहीं आवे तो, नेत्रो को लब लगाती है॥
और फाड़ गलारो बुरा ढंग, कर सम वेदना दिखाती है।
बन मे न सिंह से भय खाती, घर मूषक से डर जाती है॥
जा चढ़े विकट पर्वत ऊपर, घर देहली से दहलाती है।
निज पति पुत्र को आप मार, औरो को दोष लगाती है॥
फिर करे अग्नि प्रवेश और, आंखो से नीर बहाती है।

दोहा (भरत)

करना चाहिये आपको दीर्घ दृष्टि विचार।
व्यवहार न जिसका शुद्ध रहे, बिगड़ जाये संसार॥

कुछ तो सोच विचार करो, यह सूर्यवंश कहाता है।
बस अनुचित कोई काम यहाँ, पर रचक नहीं समाता है॥
क्यो मर्यादा सब तोड़ कीर्ति, पानी बीच बहाते हो।
श्री रामचन्द्र का ताज मुझे दे, जग में हंसी कराते हो॥
यदि करे नार से नरमाई उतना ही सिर पर चढ़ती है।
नागिन को जितना दूध मिले, बिष उतना अधिक उगलती है।

हाथ कंकन को आरसी क्या, प्रत्यक्ष सभी दिखलाता हूँ।
इस राज के बदले मुझे क्षमा दो, चरणन शीश नमाता हूँ ॥

दोहा

दशरथ मन में सोचता, मुश्किल हुई अपार।
राज्य लेने से भरत ने, साफ किया इन्कार ॥

गाना नं० १८ (दशरथ का भरत से कहना)

सब तरह से समझ रक्खा, भरत तुझको मैं स्याना था।
इस तरह साफ इन्कारी, बनेगा यह न जाना था ॥१॥
वचन पहिला ही जब हमने, सभा अन्दर उचारा था।
सोच कर सार उसका, अय कुमार हृदय जमाना था ॥२॥
ठीक तैंने कहा सो भी, किन्तु नहीं समय को सोचा।
गया जो छूट कर से तीर, उसको क्या जिताना था ॥३॥

दोहा (दशरथ)

बेटा अब तुम मत करो; मुझ प्रतिज्ञा भंग।
रानी को था वर दिया; जब जीता था जंग ॥

सिर आंखों से मात पिता का; हुक्म बजा लाना चाहिये।
और अपनी बुद्धि का परिचय, मौके पर दिखलाना चाहिये ॥
कर्तव्य है पुत्र शिष्य का, जो गुरुजन का हुक्म बजाता है।
अब कहो पुत्र मुख से उचार क्या, समझ तुम्हारी आता है ॥

दोहा (भरत)

बेशक मैं अविनत हूं, दुर्बुद्धि दुःखकार।
रामचन्द्र को राज्य दो, मुझे नहीं स्वीकार ॥

छन्द---(भरत)

शोभता मुझको नहीं, यह ताज अपने सिर धरूं ।
धिक्कार चुल्लू भर कहीं पानी मैं न जाकर मरूं ॥
चाकर का चाकर मै बनूं राजो का राजा राम है।
आज्ञा उन्हो की सर धरे, ये ही हमारा काम है ॥
और जो मर्जी पिता आज्ञा, मुझे दे दीजिये।
ताज शोभे राम सिर, बेशक अभी धर दीजिये ॥
इस अयोध्या राज की, मुझको पिता इच्छा नहीं।
दीक्षा लेने के सिवा मानूं कोई शिक्षा नहीं ॥

दोह (राम)

राम कहे भाई सुनो, बनों न तुम नादान।
कुल के गौरव पर जरा, करना चाहिये ध्यान ॥

तेरा सहज हिलाना सिर, यह मुझको नहीं गंवारा।
प्रतिज्ञा हो भंग पिता की, कुछ तो करो विचारा ॥
आदिनाथ से चला आ रहा, शुद्ध कुल वंश हमारा।
आप से बुद्धिमानो को है काफी ज़रा इशारा ॥

गाना नं० १६ (राम का भरत को कहना)

बचन पिता का भाई, तुम मानों जरूर ॥टेर॥
सेवा कर-कर हारे, सारी उमर गुंजारे।
पिता का फर्ज उतारे, तब भी होता न पूर ॥

पिता का धर्म बचाओ, सिर पे ताज टिकाओ।
जल्दी करके दिखावो, होवें दुःख सब दूर ॥ २ ॥
तुमने हुक्म यह टाला, फिर कहॉ संयम पाला।
यह क्या मुख से निकाला, होके गुस्से मे चूर ॥ ३ ॥

तू रणधीर शूरा, मेरा हमदर्दी पूरा ।
बेशक राज यह कुडा, धारो हो मजबूर ॥ ४ ॥

दौड़

चलो अब देर न लावो तख्त पर चरण टिकावो ।
खुशी सबका मन होवे, राज तिलक मेरे कर से. तेरे मस्तक पर सोहे ॥

दोहा (भरत)

क्यों करते हो हर घड़ी, भ्रात मुझे मजबूर ।
राज ताज शोभे तुम्हें, मै चरणो की धूर ॥

आपके होते हुवे करूं मैं, राज्य बड़ा नालायक हूं ।
निश्चय हूं गुणहीन पिता-माता, सबको दुखदायक हूँ ॥
लाख कहो चाहे कोड हर समय, मैं तो यही पुकारूंगा ।
श्रीराम के होते हुवे कदापि, राज ताज नहीं धारूंगा ॥

वनवास कारण

दोहा

दशरथ का सिर डोलता, युक्ति सोची राम ।
चक्र में आया भरत, बना समझ अब काम ॥

इसके मुख से निकल चुका, नहीं राम सामने राज्य करूं ।
तो पुरी अयोध्या छोड़ चलूं वन सैर अभी सामान करूं ॥
पीछे सब राज्य कार्य भरत, स्वयं कर लेवेगा ।
ये ही एक ढंग निराला है, बस पिता वचन वर देवेगा ॥

दोहा

मन में खूब विचार कर, बोले रामकुंवार।
पिता आपका भरत सुत, विनयी आज्ञाकार ॥

मेरे होते राज्य भरत ने, करना नहीं पसन्द किया।
फिर सोच समझ कर और, एक हमने ऐसा प्रबन्ध किया ॥
अपने वचनो का पास भरत को निकले कभी न तोड़ेगा।
मेरे जाने के बाद करेगा राज, हुकम नही मोड़ेगा ॥
हे पिता आपका ऋण उतरा, यह खुशी मेरे मन भारी है।
अब जाता हूं वन सैर आज, लेवो प्रणाम हमारी है ॥
इस चरण रज निगुणी राम के, हाथ शीश पर धर दीजे।
मै सेवा न कर सका, आपकी क्षमा दोष सब कर दीजे ॥

दोहा

रामचन्द्र के जब सुने, दशरथ नृप ने बैन।
मूर्च्छित हो धरणी गिरा, नीर बहाता नैन ॥

झट गिरा भरत आ चरणो मे, नैनो से नीर बहाता है।
हा खेद निकल गया क्या मुख से, गद्-गद् स्वर अति पछताता है ॥
अब हो सचेत दशरथ राजा, दुःख सागर बीच समाया है ॥
श्री राम ने जाकर माता के, चरणो में शीश झुकाया है।

दोहा (राम)

माता मेरी लीजिये, चलत समय प्रणाम।
साधन चौदह वर्ष मे, होगा वन का धाम ॥

छन्द

जब मात के चरणो झुका, पॉचों ही अंग निमाय कर।
मानिन्द चम्पक बेल सम, रानी गिरी मुर्झाय कर ॥

कुछ चेत जब मन को हुआ, सुत राम से कहने लगी।
और अश्रु धार उस दम, नेत्रों से बहने लगी ॥

दोहा (कौशल्या)

दुखदायी तूने कहा, शब्द विरह का आन।
बिना मौत मारा मुझे, लगे कलेजे बान ॥

लगा कलेजे बाण रही, ना शक्ति मेरे बदन में।
अन्धकार हो जाय बिना तेरे, सब राज भवन में ॥
देख तुझे सुखकन्द चन्द, खुश रहूं हमेशा मन में।
हरगिज न जाने दूंगी, पुत्र मै तुझको बन में ॥

दौड़

मेरा तू एक कुमर है, छोड़ कर चला किधर है।
मेरे रो रो कर मइया, बिना विचारे किया काम तैंने
क्या कुमर कन्हैया ॥

दोहा (राम)

जान बूझ कर मात तू, क्यों बनती अनजान।
यहाँ रहने से न रहे, कुल का गौरव महान् ॥

छंद (राम)

राज्य मेरे सामने भाई भरत करता नहीं।
ऋण उतारे बिन पिता का, भी हमें सरता नहीं ॥
तात प्रतिज्ञा होवे पूरी, सभी मम जाने से।
जैसे कलह उपशम बने, माता जरा गम खाने से।
तन की खातिर धन तजो, दोनों को तज रख प्राण ने ॥
धर्म की खातिर तजो, तीनों कहा, जिनराज ने ॥

आबरू तन राज दौलत, सब हमारे पास है।
बस यह अलौकिक धर्म कारण ही बनो का वास है ॥
प्रसन्न होकर मातजी, आज्ञा मुझे दे दीजिये।
सैर करने सुत गया यह ध्यान मन धर लीजिये ॥

दोहा (कौशल्या)

अनजान पुत्र मैं हूं नहीं, रहा जो यो बहकाय।
छइया मइया से तेरा, विरह सहा नही जाय ॥

छंद (कौशल्या)

परभव मुझे पहिले पहुंचा, कर फेर बन मे जाइये।
उपकार कर मुझ पर कुंवर, भारी यह दुख मिटाइये ॥
खेद अतिमाता का तूने, ख्याल कुछ भी न किया।
दुख सहा जिसने अतुल, और दूध है जिसका पिया ॥
बेशक पिता का फिकर भी, तुमको मिटाना चाहिये।
किन्तु मात का भी कुमर दिल न दुखाना चाहिये ॥
या तो कर मेरा भी कहना, या किसी का भी न कर।
क्या कहूँ मै कैकयी को, आज यह मांगा है वर ॥

दोहा (राम)

शूर वीर की तू सुता, मत कायर बन मात।
तू ही बतलादे मुझे, बने किस तरह बात ॥
तू ही बतला हमे आज ऋण कैसे पिता उतारेंगे।
इस झूठी दुनिया को तज कर, कैसे शुभ संयम धारेंगे ॥
एक यही उपाय है बस माता, जिससे सब कार्य सिद्ध बनें।
वर हो कैकयी माता का, और पिता भी जिससे उऋण बनें ॥

दोहा (कौसल्या)

कहना तेरा ठीक है, क्या बतलाऊं लाल।
हाल वही बतलायेगी, जिस फैलाया जाल ॥
यह वर नहीं मांगा पिछले भव की, कैकयी मेरी दुश्मन है।
क्योकि मुझको दुख देने में, ही मानो उसका खुश मन है ॥
यह अच्छा था उसको वर मे, मेरी ही जान मांग लेती।
पर राज खोस कर विरह, पुत्र का यह मुझको न दुख देती ॥
हा ! कैसा जाल बिछाया जिसका, सुलझाना ही मुश्किल है।
अफसोस जात औरत की होकर ऐसा जिसका संगदिल है ॥
देना किसने लेना किसने, फिर क्यो दखल हमारा है।
तू दुख भोगे बन मे जाकर, सुत मुझको नहीं गंवारा है।

दोहा (राम)

मात बड़ों को चाहिये, होना अति गम्भीर।
जैसे गहन समुद्र मे, नही उछलता नीर ॥
निज पर का यह ख्याल मात, उदारचित्त नहीं लाते हैं।
यदि धर्म हेतु कोई पड़े काम तो, खेल जान पर जाते हैं ॥
तू राम को, भरत और भरत राम को, समझ अपने दिल में माता।
यह राज पाट सब रहे यहां, एक धर्म आत्मा संग जाता ॥
जब मात कैकयी ने रण मे, पराक्रम अपना दिखलाया था।
मांगो जो मरजी खुश होकर, राजा ने वचन सुनाया था ॥
फिर मात कौन सा दोष कहो तो, पिता कैकयी माई का।
जो राज ताज न धरा शीस, पर खाम ख्याल एक भाई का ॥

दोहा (राम)

दूर पिता का गम करे कर्तव्य अपना मात।
अन्तिम शुभ फल सोच कर, धरो शीश पर हाथ ॥

रामचन्द्र और कौशल्या का प्रश्नोत्तर रूप गाना २०

(तर्ज—लावणी)

राम—माता मुझको जाना है अमर जरूरी ।
क्या कहूँ हाल यह बनी आन मजबूरी ॥
मेरी मात सोच कुछ बहुत विचारा है ।
कर्तव्य पालन के लिये, मात बनवास हमारा है ॥टेर॥
अयि माता धरो मन, धीर नहीं घबराना ।
बिन धर्म श्री जिन, नाशवान जग माना ॥
दुख भोग रहा मोह के, वश सभी जमाना ।
धर ध्यान मुनि सुव्रत, स्वामी चित्त लाना ।
मेरी मात जन्म तेरे उर धारा है ।
कर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥ १ ॥

कौशल्या—अय पुत्र ! फेर तैने वही शब्द सुनाया ।
गया निकल कलेजा जी जामा थर्राया ॥
आंखो के तारे बेटा गुण सुख धाम ।
लगे कलेजे बाण पुत्र मत ले जाने का नाम ।टेर।
हे पुत्र ! बता कैसे दिल मेरा डटेगा ।
कर याद बाद तेरे मम, हृदय फटेगा ॥
वर्षो के समान एक क्षण, पल मेरा कटेगा ।
कैसे चौदह वर्षों का, काल घटेगा ॥
अय पुत्र बता कैसे, बचेंगे प्राण ।
लगे कलेजे बाण पुत्र मत ले जाने का नाम ॥ २ ॥

राम—अय माता ! वास नहीं चाहता मन वस्ती का ।
गया निकल बाहर नहीं, छिपे दांत हस्ती का ।

यही वक्त है माता अब धैर्य धारण का ।
आराम नहीं चाहता हूँ, अब मै तन का ॥
हे मात ख्याल एक सिर्फ पिता के ऋण का ।
मुझको नही बिल्कुल, साधन मे भय बन का ॥
है लिये धर्म के तुच्छ, मेरी जिन्द तिनका ।
फिर ध्यान कहां है, राज पाट और धन का ॥
मेरी मात ख्याल कहां गया तुम्हारा है ।
कर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥ ३ ॥

कौशल्या—हर बार कुमर दिल मेरा, मति दुखावे ।
पति धारे संयम और तू बन को जावे ॥
मेरे पुत्र मै दिल कैसे, थामूं कर ध्यान ।
तेरा, कहना सहज, कलेजे मेरे लगता बाण ॥
क्यों सहे अतुल दुःख बेटा, बालेपन में ।
तेरे बिन घोर अन्धेरा, हो महलन में ॥
गया उछल कलेजा, रही न सत्या तन मे ।
न रुके बह रहा जल, झरना नयनन में ॥
तोते चश्म मानिन्द मोह तजा तमाम ।
लगे कलेजे बाण, पुत्र मत ले जाने का नाम ॥४॥

दोहा (राम)

माता छोटा देख कर, मन अपने मत भूल ।
छोटा बच्चा सिंह का, मारे गज स्थूल ॥

राम—छोटा सा वज्र बड़े बड़े, पर्वत भी तोड़ गिराता है ।
अंकुश क्या देखो छोटासा, हस्ती को वश कर लाता है ॥
अन्धकार का नाश करे दीपक, या रवि जरा सा है ।
मैं क्षत्राणी का शेर बबर, माता दिल धरो दिलासा है ॥

दोहा

छुटे बाण ज्यों धनुष से, त्यो शूरवीर की बात ।
वापिस फिर लेते नही, जैसे दिन गत रात ॥

दोहा (राम)

रवि शशि सागर टरे, व्योम न दे अवकाश ।
प्रण से माता मै ना टरूं, जाय करूं बनवास ॥
शूरवीर का पुत्र नहीं, दुनियां से दहलाता हूं ।
जन्म लिया तेरे माता, मैं क्षत्रिय कहलाता हूं ॥
मरने का नही भय मुझको, प्रण का जितना खाता हूं ।
रघुवंशिन को आज नहीं बटा लाना चाहता हूं ॥

गाना नं० २१ (राम का कौशल्या से कहना)

मुझे माता वनवास जाना पड़ेगा ।
वचन यह पिता का, निभाना पड़ेगा ॥१॥
नहीं आती युक्ति, नजर कोई दूजी ।
अय माता तुझे मन टिकाना पड़ेगा ॥२॥
वनो का यह क्या दुख चाहे जान जावे ।
जो प्रण है पिता का, निभाना पड़ेगा ॥३॥
पिता ऋण न उतरे, धर्म कैसे हारूं ।
यह भव भव मे दुख फिर उठाना पड़ेगा ॥४॥
क्षमा दोष करके, धरो हाथ सिर पर ।
कहो 'पुत्र जा वन' सुनाना पड़ेगा ॥५॥

गाना नं० २२ (रामचन्द्र और कौशल्या का प्रश्नोत्तर रूप)

तर्ज—(लावणी)

वह जबां नही बेटा, मेरे इस मुख मे ।
किस तरह कहूं छोना, जाओ वन दुख मे ॥

मेरे लाल अक्ल के तोते उड़े तमाम।
लगे कलेजे बाण कुंवर मत ले जाने का नाम ॥टेर॥
आंखो का तारा, जान जिगर से प्यारा।
कभी आज तलक मै किया न तुझको न्यारा ॥
गुल बदन चॉद का टुकड़ा राज दुलारा।
पुत्र ! माता को दुख सागर में डारा ॥
मेरे लाल शुक्ल क्यो छोड़ चले बन धाम।
लगे कलेजे बाण, पुत्र मत ले जाने का नाम ॥१॥

राम—लीजो माता प्रणाम झुकाऊँ सिर को।
तजता हूँ चौदह वर्ष तलक इस घर को ॥
मेरी मात करूं बनवास गुजारा है।
कर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥
है विनयवान् मम भ्राता भरत सुत तेरा।
उठ गया समझ यहां से अन्न पानी मेरा ॥
मानिन्द पंछी दुनिया का रैन वसेरा।
वही शुक्ल मनुष जिसने नहीं गौरव गेरा ॥
मेरी मात धर्म ही एक सहारा है।
कर्तव्य पालन के लिये मात बनवास हमारा है ॥

दोहा (राम)

माता पुत्र की लीजिये, हृदय से प्रणाम।
नीरस मोह को त्यागकर, कीजे आत्म काम ॥

छंद

पीठ फेरी राम ने, इतने में सीता आगई।
पकड़ लगा हृदय सासु ने, गोद में बैठा लई ॥

नेत्र जल वर्षा से अति सीता को मानो तर किया।
चहुं ओर से आपत्तियो ने, जैसे आकर घर किया॥
रोक मन को थाम दिल की, बात तब कहने लगी।
अव्यक्त और गद्‌गद्‌ शब्द, स्वर धार जल बहने लगी॥

दोहा (कौशल्या)

क्यो वधु शृंगार सब तन से दिये उतार।
नमस्कार आकर करी, हुई किधर तैयार॥

हार गल से लालो का, किस कारण तैने उतार दिया।
क्यों सच्चे मोती हेम जड़ित, साड़ी को आज विसार दिया॥
नजर नहीं आता दामन जो, जवाहरात से जड़ा हुआ।
वह कहाँ दोतर्फी मस्तक खीचे, था चन्द्रमा चढ़ा हुआ॥
कहाँ पायजेब नूपुर झुमके, हीरे जिनमे थे अड़े हुवे।
मनमोहन माला पंचरंगी, दाने जिनमे थे जडे हुवे॥
निर्मल व्योम शशि जैसे तारागण मे दिखलाता था।
ऐसे ही गुल बदन तेरा मुख, गहनो से मुस्काता था॥

दोहा (सीता)

क्या बतलाऊँ मै तुझे, माता मुख से भाष।
जला हुआ जो दूध का, फूक लगाता छास॥

छंद (सीता)

बालपन मे भ्रात की, मैंने जुदाई है सही।
फेर विद्याधर पिता को, ले गया गिरि पर कही॥
दुख नहीं पहिला मिटा और ही गम आ मचा।
लाचार मेरा पिता ने था स्वयंवर व्याह रचा॥
दुख स्वयंवर का कहूँ, शक्ति यह जिह्वा मे नहीं।
चरण स्पर्श आपके, कुछ पुण्य बाकी था कहीं॥

अब विरह यह सामने, पतिदेव का आता नजर।
साथ न छोड़ूँ पिया का, फिर मिले कब क्या खबर॥

दोहा (कौशल्या)

लगे घाव पर अय सिया, नमक दिया बुरकाय।
मरती को मारा मुझे, जो तू भी बन जाय॥
जो तू भी बन जाय, फेर मै कैसे करूं गुजारा।
दुख सागर में लीन, गमों का चले जिगर पर आरा॥
सुख दुख की मै कहुं बात, किससे कर वधू विचारा॥
मरने भी न कोई देता, मर जाऊं मार कटारा॥

गाना नं० २३ (राम कौशल्या विलाप)

कर्म है खोटे मेरे, आँसू बहाना हो गया।
सुत वधू दोनो चले, सूना जमाना हो गया॥१॥
क्या कहूँ तकदीर आगे, पेश कुछ चलती नही।
रात दिन पुत्र जुदाई, जी जलाना हो गया॥२॥
तू वधू मत जा बनों मे, मान ले मेरा कथन।
राजधानी महल सब, गम का खजाना हो गया।३।
घोर दुख बन्न का, सिया तुझसे सहा नही जायगा।
मानती नहीं क्या अशुभ, कर्मो का आना हो गया।४।

दोहा (सीता)

पति देव बन बन फिरें, मैं रहूँ बैठ आवास।
आज्ञा मुझको दीजिए नम्र निवेदन सास॥

गाना नं० २४ (सीता का कौशल्या से कहना)

पति का साथ छोड़ूं यह मेरे से हो नहीं सकता।
कोई कर्त्तव्य से चुके तो सुकृत बो नहीं सकता॥१॥

पति के तन की छाया हूं, कहे अर्धाङ्गिनी दुनिया ।
कोई छोड़े धर्म अपना, वह सुख से सो नही सकना ॥२॥
है जब तक दम मे दम मेरा, करू सेवा पति की मैं ।
लिए परमार्थ जो मरता, कभी वह रो नहीं सकता ॥३॥
न इच्छा राज महलो की, तमन्ना है न कुछ धन की ।
योग्य सेवा बिना परमार्थ कोई टोह नहीं सकता ॥४॥
झुकाती हूं मैं सिर अपना, आपके सास चरणो मे ।
अपूर्व लाभ अपना ऐसा, कोई खो नहीं सकता ॥५॥

दोहा (कौशल्या)

बेशक पतिव्रता सती, पति से प्रेम अपार ।
नादान पता तुझको नहीं, बन में दुःख अपार ॥

यही कोमल बदन वधू तेरा, मक्खन समान ढल जायेगा ।
ज्येष्ठ भाद्रपद को धूपो से, दिल तेरा घबरायेगा ॥
घोर बड़े तूफान नदी नालो के दुख का पार नहीं ।
हिसक जन्तु शेर बघेरे चीते हस्ती पार नहीं ॥
तू फेर वहाँ पछतावेगी, जंगल मे सोना धरती का ।
जहाँ नित्य प्रति आर्तध्यान सहेगी कैसे दुख बन सर्दी का ॥
मक्खी मच्छर बिच्छु आदि, दारुण भय वहाँ सर्पो का ।
विकट पहाड़ बताऊँ दुख मै, कैसे खूनी बर्फो का ॥
मैं बार बार समझाती हूं, अंजाम सोच इन हर्फो का ।
जहाँ थोडे दिन का काम नहीं, दुख भारी चौदह वर्षो का ॥
फेर पति का पग बंधन, परदेशो मे यह नारी है ।
कोमल गुल बदन वधू तेरा, वह कष्ट झेलना भारी है ॥
शोभनीय फल देख तुरत खग वृक्षो पर छा जाते है ।
कोई कष्ट न तुम पर आ जावे, यो हम नहीं भेजना चाहते हैं ॥

तेरा जो है पति वधू तो, मेरा राजदुलारा है।
एक बिन तेरे सूना लगता, रणवास क्या महल चौबारा है॥
अतुल विरह का दुख मुझको, सुत इन हाथो से पाला है।
फिर और मुझे दुख देने को, तूने भी झगड़ा डाला है॥
बिना यान न चरण कभी, तैंने भूमि पर रखे हैं।
फिर अभी दूध के दांत तेरे, बन दुख स्वाद नहीं चक्खे हैं॥
सारी उमर पति की सेवा, जो कोई नार बजाती है।
बस उतना फल एक बार, ससु की सेवा से भरपाती है॥

दोहा (सीता)

जैसे बिजली मेघ में, मस्तक मणि भुजंग।
तन छाया ऐसे ससु, सिया राम के संग॥

गृहस्थ धर्म का कर्त्तव्य जो पतिव्रत धर्म निभाऊंगी।
जो कोई आपत्ति पड़ी आन तो, अपनी जान लगाऊंगी॥
किंचितमात्र भय नहीं मुझको बनचर या और तूफानोंका।
अमर आत्मा मरे नहीं मरना तो जिस्म मकानों का॥
जल मे डूब नही सकती, अग्नि न इसको जला सके।
जो निज गुण ज्ञान आत्मा का, शस्त्र न इसको हरा सके॥
है मिट्टी का यह तन पुतला, मिट्टी मे ही मिल जायेगा।
जो कर्म शुभाशुभ किये आत्मा उसे संग ले जायेगा॥

गाना नम्बर २५ (सीता का कौशल्या से कहना)

मुझे घर बार तज बनवास जाना ही मुनासिब है।
पति सेवा में तन मन को, लगाना ही मुनासिब है॥१॥
लाज रखनी स्वयम्वर की मुझे जाने से मत रोको।
सती का धर्म जो कुछ है, निभाना ही मुनासिब है॥२॥

सभी यह महल सुख शय्या, मुझे शूलो के मानिन्द है।
फिरूं वन वन पिया सग तन, सुखाना ही मुनासिब है ॥३॥
पति वन जाय दुख भोगे मै, कैसे महल सुख भोगूं।
पति के संग जी सुख, दुख उठाना ही मुनासिब है ॥४॥

दोहा

उसको भय कैसे लगे, शीलव्रत जिस पास।
जिस शक्ति से आ बने, देवन पति भी दास॥
नमस्कार करके हुई, सीता झट तैयार
महारानी पर मानो गिरा, आपत्ति का भार॥

छन्द

आशा निराशा होय रानी शोक सागर मे पड़ी।
नेत्रों मे आँसू बरसते जैसे कि श्रावण की झड़ी॥
देख कर यह दृश्य सखियाँ भी सभी रोने लगीं।
परिचारिका आंसुओं से, अपना मुंह धोने लगीं॥
बोली सभी कि प्रेम भी ऐसा ही होना चाहिए।
सब को आगे ऐसा ही पुण्य बीज बोना चाहिए॥
जैसा हर्ष था विवाह मे, वैसा हर्ष बनवास है।
है सती पूरी नही छोड़ा, पति का साथ है॥
सुख अवध के सब तज दिए एकदम से ठोकर मार के।
सेवा करन को साथ ही वन मे चली भर्तार के॥

दोहा

सीता का है पति से निश्चय प्रेम अपार।
दुनियाँ मे ऐसी सती विरली है दो चार॥
धन्य जन्म इसका हुआ, धन्य मात और तात।
धन्य जिसे व्याही उसे, धन्य विदेही मात॥

कष्ट बड़ा बनवास का भय नहीं जिसे लगार ।
दोनों कुल उज्ज्वल किए सीता उत्तम नार ।
सीता को समझावने आया सब रणवास ।
संग अवध की नारियां आकर बोली पास ॥

गाना नं० २६

(सब रणवास और नगर की प्रधान स्त्रियो का सीता को समझाना)

तर्ज—(छोड़ो न धर्म अपना जब प्राण तन से निकले)

सीता न बन मे जावो रहना यहीं भवन में ।
क्यो दुख सहे तू बन के बैठी रहो अमन में ॥१॥
मत जा जनक दुलारी सीता ए प्राण प्यारी ।
क्यों व्यर्थ कष्ट सहती दुखदायी जाके बन मे ॥२॥
कंकर उपल बड़े है कहीं कांटे ही पड़े है ।
दरियायें जल चढ़े है गरजे है शेर बन मे ॥३॥
पैदल का मार्ग भारी ना कोई भी सवारी ।
भूलेगी सुध तुम्हारी उस धूप की अग्न में ॥४॥
अन्न तक नहीं मिलेगा, भूखी का दिल हिलेगा ।
फल-फूल ही मिलेगा, किसी खास ही चमन में ॥५॥

दोहा

सुन कर सब ही के वचन, प्रफुल्ल चित्त सिया नार ।
मृदु मधुर प्रेमालाप से, बोली गिरा उचार ॥

गाना नं० २७ (सीता का उत्तर)

(तर्ज---छोड़ो न धर्म अपना जब प्राण तन से निकले)

टोकें न आप मुझको, जाऊँ मैं संग बन में ।
जहां चरण हों पति के, वहां ही रहूँ अमन में ॥१॥

वहां दुख नहीं है कुछ भी, जहाँ होवे प्राण प्यारे।
उनकी करूंगी सेवा, जाकर के साथ बन मे ॥२॥
कांटे भी फूल बनते, सत्य पथ को धारणे से।
कोमल कली बनेंगे, कण-कण सु तीक्ष्ण वन में ॥३॥
कर्तव्य धारणे पर दुखो की क्या है परवाह।
दुख का ही सुख बनेगा, पति प्रेम हो जो मन मे ॥४॥
करि केहरी द्वीपी भालु, बिच्छु व नाग अजगर।
पति सेवा से भगेंगे ज्यों अंधकार दिन मे ॥५॥
चिन्ता नहीं जिस्म की पतिव्रत पे हो अर्पण।
उपसर्ग सारे सहकर, प्रसन्न हूंगी मन मे ॥६॥

दोहा (लक्ष्मण)

लक्ष्मण यह वृतान्त सुन, रहन सके चुपचाप।
कुछ तेजी मे आनकर, ऐसे बोले आप॥

अच्छा वर मांगा माता ने, यहां भंग रंग मे डाला है।
जो राज ताज दे भरत वीर को, बाहर राम निकाला है॥
पहिले वर भंडारे मे रक्खा, अब यह मिसल निकाली है।
वर नहीं मांगा माता को, यह भी कोई चाल निराली है॥

दोहा

सरल स्वभावी है पिता, कपट कारिणी मात।
भरत वीर भी था भला, फंसा वचन बस तात॥

फंसा वचन बस तात, किन्तु मै देखूं तेज सभी का।
क्या होता है देख रहा था, बैठा हाल कभी का॥
अफसोस हुआ वर्ताव, देखकर ऐसा आज सभी का।
राज्य राम को देऊं भरत, बालक है, कौन अभी का॥

दौड़

जहां तक मेरा दम है, राम को फिर क्या गम है।
नहीं जाने दूं बन मे राम करेंगे राज रहूंगा,
मैं सेवक चरणन मे ॥

दोहा

दहकती ज्वाला की तरह, देख अनुज का रोष।
शीतल वचनो से लगे, देन राम सन्तोष ॥

राम—अय लक्ष्मण कुछ सोच समझ, मन मे क्यो रोष बढ़ाया है।
अत्यन्त खुशी का समय आज, यह अपने कर मे आया है ॥
मातपिता की आज्ञा पालें, मुख्य कर्तव्य हमारा है।
करे सेवा तन मन से जिनकी, अनुचित क्रोध तुम्हारा है ॥
जैसा राम भरत वैसा, लक्ष्मण या वीर शत्रुघ्न है।
वचन पिता का करे न पूरा, तो हम भी कृतघ्न है ॥
यह राज खुशी से भरत वीर, को मैं लक्ष्मण ! देजाता हूँ।
कर्तव्य अपना पले पिता ऋण टले, यही दिल चाहता हूँ ॥

गाना नं० २८

(रामचन्द्र का लक्ष्मण को समझाना)
तर्ज—(लगी लौ जान जाना से तो जाना ही मुनासिब है)

राज्य के वास्ते अपना वचन, हरगिज न हारेंगे।
करेंगे सैर वन वन की, पिता का ऋण उतारेंगे ॥१॥
रोष को दूर कर मन से, सुनो लक्ष्मण मेरे भाई।
मात कैकेयी के चरणों में, यह अपना शीश डारेंगे ॥२॥
प्रतिज्ञा पालने वाले, हुए सब सूर्य वंशी है।
इसी में जन्म धारा तो बचन हम भी न हारेंगे ॥३॥

भरत के शीस शोभे ताज, मै शोभूंगा बन जाकर।
पिता शोभें मुनि दीक्षा, जन्म अपना सुधारेंगे ॥४॥
राज्य धन मित्र सुत दारा, मिले कई बार प्राणी को।
है दुर्लभ धर्म का मिलना, इसी से तन शृङ्गारेंगे ॥५॥

दोहा

सुना कथन जब राम का, ठण्डा हो गया जोश।
गूढ़ रहस्य को सोच कर, रहे लखन खामोश ॥
मन ही मन मे सोचकर, निजको किया उपशांत।
समय भाव को जानकर, बोले अनुज इस भांत ॥

लक्ष्मण—मुझे फेर क्या राम खुशी से, राज्य छोड़ बन जाता है।
तो फिर खाना अवधपुरी का, हमको भी नहीं भाता है ॥
झगड़ा और बढ़ा कर सब का, दिल ही सिर्फ दुःखाना है।
यदि दूल्हा ही निज सिर फेरे, फिर किस का व्याह रचाना है ॥

दोहा

यही सोच के लखन फिर, गये पिता के पास।
नमस्कार कर चरण मे, कहा इस तरह भाष ॥

दोहा (लक्ष्मण)

पानी मे मछली सुखी चकवा चकवी साथ।
राम चरण लक्ष्मण वहां ज्यो रवि साथ प्रभात ॥
पिता मुझे आज्ञा दीजे, मै राम संग वन जाऊंगा।
सेवा होगी भाई की, दुःख मै निज शीस उठाऊंगा ॥
ताज मुबारिक भरत वीर को, आपका ऋण उतारा सिर से।
तात मात खुश हम भी खुश, जैसे किसान खुश जलधर से ॥
छिन पल विरह राम का मुझ से, पिता सहा नहीं जाता है।

अपूर्व प्रेम स्वाभाविक है, जिस कारण लक्ष्मण जाता है ॥
क्षमा करो अपराध सभी, अविनीत पुत्र दुख दानी का ।
केवल एक साथ राम के है, आधार मेरी जिन्दगानी का ॥

दोहा (दशरथ)

विनयवान् मेरे कुंवर, नहीं हमारी बात ।
किन्तु रो रो मर जायेगी, बड़ी तुम्हारी मात ॥

छन्द

रहनेको समझाया बहुत भूपाल ने हर बार है ।
लेकिन न माना एक भी, सुमित्रा का सुकुमार है ॥
मस्तक झुका कर पिता को, फिर वीर लक्ष्मण चल दिया ।
मात सुमित्रा पास आ, प्रणाम चरणों मे किया ॥

दोहा (लक्ष्मण)

माता खुश हो पुत्र के धरो शीश पर हाथ ।
जाता हूँ वनवास में मात भ्रात के साथ ॥
हे मात ! ज्ञात है ही तुम को, दुष्कर बिन राम मेरा जीना
बस कल नहीं पड़ती दर्श बिना, फिर कहां रहां खाना पीना ॥
मैं तन मन से वन में भाई का, निशदिन हुक्म बजाऊंगा ।
जहां गिरे पसीना भाई का, वहां अपना रक्त बहाऊंगा ॥

दौड़

मिलो जल्दी से जाकर, करो सेवा मन लाकर ।
खुसी तन मन है मेरा, बड़े भाई की करे सेव
निर्मल हृदय है तेरा ॥

दोहा (सुमित्रा)

धन्य धन्य मेरे सुत के हरि, शूर वीर रणधीर ।
निर्मल है बुद्धि तेरी, पान किया मम क्षीर ॥

पान किया जो वीर मेरा, कर्तव्य पालन कर देना ।
तन बेशक लग जाय, किन्तु नहीं दगा भ्रात को देना ॥
पड़े कष्ट जो आन कोई, आगे हो कर सह लेना ।
मानिन्द पिता के रामचन्द्र, माता सीता को कहना ॥

गाना नं० २६

(सुमित्रा का लक्ष्मण को उपदेश)

प्रेम हृदय नही जिसके, वह शत्रु न भाई है ॥
प्राण चाहे चले जाये न छोड़े संग भाई है ॥१॥
नाश दुनिया सभी जानो, शेष इसमे न कोई है ।
चले नेकी वदी सग में, जिस्म की भी सफाई है ॥२॥
सहारा कष्ट मे देना, यह है कर्तव्य भाई का ।
यदि आंखे चुराये तो, लगेगी मुँह पे काई है ॥३॥
करो तन मन से बन जाकर, मेरे सुत राम की सेवा ।
मेरी शिक्षा कुंवर तूने, यदि हृदय जमाई है ॥४॥
रहा अब तक तो तू भाई मगर चाकर हो अब रहना ।
हुकम सियाराम का लेना, कुंवर मस्तक उठाई है ॥५॥

दोहा (लक्ष्मण)

माता तन मन खुश हुआ, सुने तुम्हारे वैन ।
करूं मैं सेवा राम की, जैसे मस्तक नैन ॥
जैसे माली पौधे को, जल देकर खुश रखता है ।
या किसान के लिए समय पर, बादल आन बरसता है ॥
ऐसे खुश रक्खूं भाई को, जैसे माता फूल खिला ।
वह चीज नहीं दुनिया मे जैसा कि मुझ को वीर मिला ॥
जब तक जीता हूँ भाई को, मैं कष्ट नहीं पहुंचन दूंगा ।
पहिले होगी आज्ञा पालन, कुछ मन मे नही सोचन दूंगा ॥

सब देव खुशी होते हैं, जैसे देख सुमेरु नन्दन वन ।
बस ऐसे हम सब को होगा, बन में माता आनन्द अमन ॥

दोहा (लक्ष्मण)

सूर्य वंशी मात मैं, क्षत्राणी का शेर ।
अब इस मुख से क्या कहूं बतलाऊंगा फेर ॥
बतलाऊंगा फेर अयोध्या, जब वापिस आऊंगा ।
कष्ट जो होगा सिया राम का, अपने सिर उठाऊंगा ॥
तेल बिन्दु सम नाम राम का, जग मे फैलाऊंगा ।
तब ही मात सुमित्रा का मैं नन्दन कहलाऊंगा ॥

दौड़

शीस जब तक धड़ पर है, राम को कौन फिकर है ।
चरण जहाँ-जहाँ धरेंगे, बड़े बड़े भूपति मात चरणों में
आन गिरेंगे ।

छंद

पीठ ठोकी मात ने, सिर पर धरा शुभ हाथ है ।
फिर जा के चरणन मे गिरा, जहाँ थी कौशल्या मात है ॥
सिर झुका कर अनुज ने जो बात थी सारी कही ।
सुन दुखी रानी हुई, कुछ होश न तन की रही ॥
चेत जब मन को हुआ, लक्ष्मण से यो कहने लगी ।
आंसुओ की धार भी, आंखो से तब बहने लगी ॥

दोह (कौशल्या)

गोला टूटा गजब का, मेरे ऊपर आन ।
राम संग तू भी चला, जाते नहीं प्राण ॥

बहरे तवील **गाना नं० ३०**

कौशल्या कालक्ष्मण से प्रश्नोत्तर।
बेटा तू भी चला सीयाराम गये।
हो उदय कौन से आये मेरे कर्म॥
मुझे छोड़ अकेली इधर तुम चले।
पीछे पति देव धारेंगे संयम धर्म॥
पीछे किसका सहारा मुझे है बता।
कैसे थामूं जिगर है मुझे यह भर्म।
रामचन्द्र के संग क्यो तू वन मे चला।
नहीं होता है कहने से तू भी नर्म॥
लक्ष्मण—माता क्षत्राणी होकर तू कायर बने।
यह समझ तेरी भी मुझको भाई नहीं।
भरत शत्रुघ्न दोनों तेरी सेवा मे,
राजधानी व प्रजा पराई नही।
यह मालूम तुझे बस विना राम के,
मेरे जीने की कोई दवाई नही।
कैसे तात प्रतिज्ञा हो पूरी बता,
तैंने गौरव मे दृष्टि जमाई नहीं॥

दोहा (लक्ष्मण)

क्षमा दोष सब कीजिये, चरण नमाऊं माथ।
जाऊँगा मानूं नहीं, मात भ्रात के साथ॥
छोड़ कहो चाहे लाख मेरा दिल ही वनवास के अन्दर है।
श्रीराम कलंदर समझ मात, लक्ष्मण तो पालतू बन्दर है॥
दिल डोरी है पास राम के, मरजी जिधर घुमावेंगे।
एक विना राम के प्राण मात मेरे तन मे नहीं पावेंगे॥

दोहा

सुन बातें सब अनुज की, रानी मन हैरान।
रहना इसने है नहीं, समझा दिल दरम्यान ॥

मौन आकृति देख मात की, लक्ष्मण ने प्रणाम किया।
श्रीरामचन्द्र के पास गए, फिर चरण कमल में ध्यान दिया ॥
प्रेम भाव से रामचन्द्र जी, सीता को समझाते हैं।
बनवास के दुख भयानक हैं, सब भेद खोल दर्शाते हैं ॥

दोहा (राम)

ऐ सीते मेरी तरफ जरा कीजिये गौर।
महलों मे बैठी रहो वनखंड में दुख भोर ॥

वन खंड में दुख घोर देख भय जान निकल जावेगी।
जनकपुरी मे मात तुम्हारी, सुन के घबरावेगी ॥
कहा मान अय जनक सुता, जाकर के पछतावेगी।
चौदह वर्ष का लम्बा, काल वहाँ दारुण दुख पावेगी ॥

गाना नं० ३१ (रामचन्द्र का सीता को समझाना)

बैठी राज महल सुख भोगो, वन खंड मे दुख पावोगी।
जहाँ गर्जत हैं सिंह बघेरे, दारुण दुख तूफान घनेरे ॥
शयन जमीं का रात अंधेरे, कैसे प्राण बचाओगी ॥१॥
ज्येष्ठ भाद्रपद धूप करारी, वर्षा नदी गहन अति भारी।
गिरी गुफा दुर्गम दुखकारी, देख-देख दहलावोगी ॥२॥
इतर फुलेल न अटवी घन में भोजन मन वांछित कहां वन में।
चमक-दमक यह रहे न तन में, फिर क्या यत्न बनाओगी ।३।
आदम की न मिले शक्ल है, कहीं खारा कही कड़वा जल है।
यह सुख वहाँ नहीं बिल्कुल है, कैसे दिल बहलाओगी ॥४॥

दासी सेवक संग सहेली, उस बन में फिर-फिर अकेली ।
कहा मान सुन्दर अलबेली नाहक दुख उठाओगी ॥५॥
मात पास तुम रहो पियारी, श्री जिनधर्म करो सुखकारी ।
सोचो मन मे जनक दुलारी, 'शुक्ल' परम सुख पाओगी ॥६॥

दोहा

शिक्षा सुन श्रीराम की, सिया ने किया विचार ।
विनय पूर्वक फिर इस तरह, बोली वचन उचार ॥

गाना नं० ३२ सीता का श्रीराम को कहना

यह क्या बनो का दुख पिया, अन्तक मुझे हन जायेगा ।
जो भी मुख से कह चुकी, मेरा न वह प्रण जायेगा ।१।
राज मन्दिर और दास दासी, सब यहां रह जायेगे ।
राख मट्टी जिस्म चमकीला, मेरा बन जायगा ।२।
संग की सखी सहेली, मात पितु सासु श्वसुर ।
काल फाँसी दे लगा संग, कौन साजन जायेगा ।३।
धर्म मेरा है पति के संग, सुख दुःख में रहूं ।
इससे हुआ विपरीत तो, दुःख से यह तन भुन जायगा ॥४॥
तन है सेवक हर मनुष्य का, प्रेम इससे जो करे ।
एक दिन देगा दगा बस, बन यह कृतघ्न जायगा ॥५॥
दुःख पति ! या सुख का मिलना, पूर्व कर्म अनुसार है ।
भागे कर्म पुरुषार्थ आ जब सामने तन जायगा ॥६॥

दोहा

राम जहाँ वहाँ पर सिया, इसमे भेद न जान ।
जावोगे यदि छोड़ कर, तो नहीं बचे प्राण ॥
सीता का प्रस्ताव सुन, हुए राम लाचार ।
खड़े-खड़े चुपचाप हो. ऐसा किया विचार ॥

राम—सीता से चौदह वर्षों का विरह सहा नही जायगा।
अब यदि और कुछ अधिक कहा तो इसका तन मुर्झायगा॥

पृथक् नही घन से बिजली, या जैसे तन की छाया है।
भरे स्वयंवर मे मुझ को, इसने निज पति बनाया है॥

है पतिव्रता सती प्रेम, मेरे संग है इसका भारी।
जाव जीवन पर्यन्त पति के, शरणागत होती नारी॥

क्षत्रिय का यह धर्म नहीं, शरणागत को दुःख मे डारे।
जिस का लिया साथ उसको, देना सुख-दुःख निज सिर धारे॥

फिर बोले अच्छा वैदेही, मन मे न सोच-विचार करो।
यदि चलो वनों में खुशी आपकी, या घर में आराम करो॥

सन्तोषजनक सुन वचन सिया ने, अपना शीश नमाया है।
फिर रामचन्द्र ने अनुज भ्रात को, ऐसा वचन सुनाया है॥

दोहा (राम)

कारण वश मैं तो चला, भाई वन मंझार।
किस कारण तुम भी खड़े, पहले ही तैयार॥

सन्तोष दिलाना माता को, और सावधान होकर रहना।
तुम अवधपुरी में करो सैर, किस कारण वनका दुःख सहना
चौदह वर्ष समय लम्बा, वन का दुःख लक्ष्मण भारी है।
यहाँ पुरी अयोध्या मे झुरझुर, दुख पायेगी महतारी है॥

जिनके संग पाणि ग्रहण किया, वह सब उदास हो जायेंगी।
अय भाई लक्ष्मण बिन तेरे, वह कैसे समय बितायेंगी॥

सब राजकार्य साथ भरत के, भाई तूने करना है।
और तेरे बिन माताओं ने भी सबर न दिल मे धरना है।

(राम का लक्ष्मण से कहना)

गाना नं० २२

मत जावो मेरे संग भाई लखन ॥ टेर ॥

चौदह वर्ष हमे वन में रहना, मान हमारा वीरन कहना ।
वह है जगल बियाबान कठिन ॥१॥

भेष सादगी तन पर धारूं, प्रण किया सो कभी न हारूं ।
जर बख्तर मै सब उतारे वसन ॥२॥

दोहा

लक्ष्मण ने ऐसे सुने, रामचन्द्र के बैन ।
शीस झुका कर जोड़ कर, लगा इस तरह कहन ॥

लक्ष्मण—आज्ञा आपकी न मानूं, मेरा यह दुष्ट विचार नहीं ।
पर विरह आपका सहने को, भाई मै भी तैयार नहीं ॥
जिस जगह राम वहाँ लक्ष्मण है, विन राम मेरा नहीं जीना है ।
इस पुरी अयोध्या का मुझको, नहीं माता खाना पीना है ॥
किसी शून्य चित्त को समझाने मे, निष्फल समय बिताना है ।
कृपण से कोई करे याचना, तो वहां से क्या पाना है ॥
कर्ण वधिर को सुरताल सहित, निष्फल गायन सुनाना है ।
वृथा क्यों अन्धे के आगे, नयनो से नीर बहाना है ॥
बस ऐसे ही लक्ष्मण को समझाने में, समय बिताना है ।
अब लाख कहो या करोड़, आप विन मेरा नहीं ठिकाना है ॥
चलो देर मत करो संग, चलने को मैं हूं खड़ा हुआ ।
यह धनुषबाण कर सह शस्त्रों के, बख्तर तन पर पडा हुआ ॥

दोहा (लक्ष्मण)

आप वनों में भ्राता जी, यदि अकेले जाय।
सेवा मैं कुछ न करूं तो मम मात लजाय॥

बोले राम अय भाई, जैसी तेरी भी इच्छा है।
क्या समझावे और तुझे, खुद बन बैठा जब बच्चा है॥

सीता लक्ष्मण की हुई, अर्ज सभी स्वीकार।
अनुज भ्रात तब राम से, बोले वचन उचार॥

दोहा (लक्षण)

क्यो भाई अब मौन हो, करते कौन विचार।
सब कुछ निश्चय हो गया, खड़े सभी तैयार।

मातृ भक्त श्री राम जी, भर लाये जल नैन।
आहिस्ता से लखन को ऐसे बोले बैन॥

अय भाई लक्ष्मण सुनो, खास मर्म की बात।
बिन माता के जगत में, ठोर नहीं दिखलात॥

छन्द

पिता से ज्यादा मात की, औलाद होती है ऋणी।
सिद्धान्त क्या प्रत्यक्ष अनुभव, पुरुषों से बातें सुनीं॥
माता का हृदय शांत बिन है, आत्मा मेरी दु:खी।
दु:ख दे माता को कभी मैं, हो नहीं सकता सुखी॥
माता के उपकारों का बदला, त्रिकाल दे सकता नहीं।
निराश कर माता के दु:ख का, भार ले सकता नहीं॥
हो सकेगा जिस तरह, माता की आज्ञा पाऊंगा।
शान्त हृदय कर मात का, फिर आगे पाँव उठाऊंगा॥

दोहा

इतना कह श्रीराम जी, गये जहां श्री मात।
हाथ जोड़कर चरण में रख दिया अपना माथ॥

मातृ भक्त का देख हृदय, माता का हृदय पिंघल गया।
कौशल्या के हृदय से मानो, मोह एक दम निकल गया॥
श्रीराम के सिर पर हाथ फेर, बोली बेटा क्या चाहता है।
तु पुण्ययान् सब हृदयो की, मुरझाई कली खिलाता है॥

दोहा

हाथ जोड़ श्रीराम जी, बोले वचन उचार।
बड़े मात करते सदा, छोटो पर उपकार॥
क्या नहीं जानती मात, राम एक नारहनी का बच्चा है।
चाहे यह पृथ्वी उलट जाय, किन्तु हृदय नहीं कच्चा है॥
माता चाहे वज्र के सम, अपना हृदय बना लेवे।
पर बच्चे के रोने से वहीं, वज्र का हृदय पिंघल जावे॥
माता बिन बच्चों को इस, दुनिया मे कोई शरण नहीं।
आपकी कृपा बिन माता, पूरा होगा ये प्रण नहीं॥
बच्चा हूं तेरा अभी फरस पर, रूस के लेट लगाऊंगा।
अभी देखना फिर माता मैं, आपसे आज्ञा पाऊंगा॥
तुम मेरे हित की कहते हो, इस बात को खूब जानता हूं।
उपकार तेरा नहीं दे सकता, इस बात को माता मानता हूं॥

दोहा

ऊँच नीच सब सोचकर, बोली वचन उचार।
माता विदुषी के वचन, थे शुभ समय अनुसार॥

दोहा

तुम तीनों की कर लई, परीक्षा मैं बहुविध।
सर्वज्ञ देव की कृपा से, होगा कार्य सिद्ध ॥

आपस मे मिल जुलकर रहना, एक दूजे का हित चाह करके।
सीता को कभी अकेली ना, तजना, गफलत में आकरके ॥
विश्वास नहीं किसी का करना, चाहे सौ-सौ बात बनावे कोई
ना गुस्सा लक्ष्मण पर करना, चाहे नुकसान हो जाय कोई ॥
सीता को हरदम खुश रखना, इसको न उदासी आवे कभी।
विश्राम वहां पर कर देना, सीता की इच्छा होवे जभी ॥
निद्रा समय एक का पहरा, नियमबद्ध होना चाहिये।
दोनो को क्रम से आपस मे, जागना और सोना चाहिये ॥
आवश्यक प्रतिक्रमण का कभी समय चुकाना ना चाहिये।
सामायिक संध्या नित्य कर्म, का समय भूलाना ना चाहिये ॥
कम खाना और गम खाना, इनको हृदय धरना चाहिये।
और सभी कार्यो से पहिले, परमेष्टी का शरना चाहिये ॥
तीनो यहां से जाते हो, तीनों खुश हो वापिस आना।
यदि इस में त्रुटि होगी तो, मुझको न कोई मुख दिखलाना ॥
कोई कष्ट आन कर पड़े तो, बन गभीर वीरता से सहना।
गौरव हीनता की वाते, मुख से कभी भूल नहीं कहना ॥
मैदान क्षत्रियों का घर है, जंग विग्रह से नही डरना है।
चाहे संसार उलट जावे, पर पीछे कदम न धरना है ॥
बेटा मेरी कुक्षी और, धारों को नहीं लजा देना।
न्याय नीति दया धर्म देश, कुल सब का भाग जगा देना ॥
सब गुण सागर जगत उजागर, बहितर कला के माहिर हो।
क्या शिक्षा देऊं बेटा, खुद शूर वीर जग जाहिर हो ॥

नर्क कुण्ड पर नारी और पर पुरुष दुःखो का सागर है ।
शुक्ल अन्य शिक्षा मेरी, शुभ सदाचार सुख आगर है ॥
मूल विने शुद्ध प्रेम ऐक्यता, सब सुख इसमे समा रहे ।
स्वाधीन सभी सृष्टि उसके, यह त्रिक जिस हृदय जमा रहे ॥
मैं पुत्रवती हूँ समझ लिया, मैने सब आज परीक्षा से ।
पुण्य प्रवल तुम्हारा होगा, बेटा मेरी शिक्षा से ॥
मेरी सेवा मे भरत पुत्र है, आपना फिक्र कोई करना ।
इस भव परभव सुखदाता है, बेटा परमेष्टी का शरना ॥

दोहा

सार भरी शिक्षा सुनी, माता की जिस वार
राम लखन सीता हुवे, तीनो खुशी अपार ॥

—***—

वन प्रस्थान

दोहा

रंग ढंग सब सोच के, हुए राम तैयार ।
शोकाकुल चहुं ओर से, आ पहुँचे नरनार ॥

वस्त्र शस्त्र पहिन राम ने, धनुष बाण निज हाथ लिया ।
इस कष्ट समय मे संग राम के, लक्ष्मणजी ने प्रस्थान किया ॥
फिर माता कैकेयी के चरणो मे, तीनो ने सिर नाया है ।
और अन्त दिलासा दे सबको, श्रीराम ने कदम बढ़ाया ॥

दोहा

छोड़ राज और ताज को, चले राम बनवास ।
नरनारी सब ले रहे, लम्बे-लम्बे श्वास ॥

जब चरण राम ने बाहर किया, सहसा सन्नाटा छाया है।
तब पत्थर दिल नरनारी के भी, जल नेत्रो में आया है॥
व्यापार शीघ्र सब बन्द हुआ, क्या दफ्तर और कचहरी है।
नयनो की माला खड़ी हुई, चले राम करी न देरी है॥
मन्त्री और राज कर्मचारी सब, पीछे है हज्जूम बड़ा।
और आगे का कुछ पार नहीं, सब जन समूह अति अड़ा खड़ा॥
सब नत मस्तक हो खड़े हुवे, तन मन से सेवा चाहते है।
दक्षिण कर से स्वीकार राम, आगे को बढ़ते जाते हैं॥
बाजार दोतर्फी छज्जो पर, अगणित माताएं बहनें खड़ी।
नयनों से आँसू बरसा रहे, जैसे श्रावण की लगी झड़ी॥
यह दृश्य देख कैकेयी रानी का, हृदय कमल उछलता है।
बस मौन चित्र की तरह खड़ी, मुख से नहीं बोल निकलता है॥

छन्द

आश्चर्य सीता की खुशी को, देख कर नरनार हैं।
मन ही मन में कैकेयी, को दे रहे धिक्कार हैं॥
महा जन समूह नरनार का, सिया राम संग चलने लगा।
तब देख कौशल्या कुंवर, यह हाल यूं कहने लगा॥

——

राम शिक्षा

दोहा (राम)

नेत्रों से जल बहा रहे, बनते क्यों नादान।
निष्कारण तुम खुशी में, लाये आर्त्तध्यान॥
क्यो यह आर्त्तध्यान, सैर मैं तो बन की जाता हूं।
तुम जाओ वापिस अवधपुरी, मैं सबको समझाता हूं॥

कर्तव्य पालन करो सदा, हृदय से यह चाहता हूं ।
है प्रजा पुत्र दशरथ की, मैं भी सुत कहलाता हूं ॥

दौड़

रक्खो सभी एकता, ध्यान शुभ सत्य विवेकता ।
एक दिन वह आवेगा, इस भव परभव लाभ गौरव,
दुनिया में छा जावेगा ॥

दोहा

ग्राम धर्म की व्यवस्था, शुद्ध करो सब कोय ।
नगर धर्म कहा दूसरा, प्रेम सभी संग होय ॥

धर्म तीसरा राष्ट्र लिये, अर्पण सब कुछ करना चाहिये ।
यदि कोई विपत्ति आ जावे तो देश के हित मरना चाहिये ॥
चौथे पाखण्ड को काट छांट, व्रत रक्षा करना अच्छा है ।
जो भी इनसे विपरीत चले, वह निर्बुद्धि या बच्चा है ॥
निज कुल के गौरव को देखो, यह धर्म पांचवा सुखदाई ।
सब त्यागी और गृहस्थ का, इसी में समावेश दोनों का ही ॥
समूह धर्म छठा बतलाया, क्योंकि इसमें शक्ति है ।
जिसने इसको कर दिया भंग, समझो उसकी कमबख्ती है ॥
फिर संघ धर्म का पालन करना, सप्तम बुद्धिमानी है ।
और किसी अंश मे श्री संघ की, आज्ञा भी आप्तवाणी है ॥
अष्टम है श्री श्रुत धर्म, क्योंकि यह ज्ञान खजाना है ।
बस इसके पालन रक्षण से ही, सर्व सुखों का पाना है ॥
सम्यक्त्व चरित्र धर्म नवमा, सब कर्ममैल को धोना है ।
विष क्रोध मानमद काट फैंककर, अमृत फल को बोना है ॥
जो विपरीत चले इन धर्मों से, न उन्हे कभी सुख होना है ।
अज्ञान तिमिर मे फंसे हुओ को, रहे शेष बस रोना है ॥

दशवां आस्तिक धर्म कहा, निश्चय विन कुछ नहीं बनता है।
सम्यक् ज्ञान दर्श चरित्र, उत्तम फल को जनता है॥

दोहा

विघ्न सभी पन्द्रह कहे, पड़े अगाड़ी आय।
निराकरण इनका करे, सो शूरा जग मांय॥

प्रथम स्वास्थ्य ही ठीक नहीं, वह कहो तो क्या कर सकता है।
फिर खानपान मे असंयम, वह कब दुःख से बच सकता है॥
सन्देह तीसरा विघ्न कहा, भ्रम जाल की यह बीमारी है।
चौथे सच्चे गुरु का अभाव, जिनसे उनकी मति भारी है॥
और पंचम नियम कायदे पर, जिनको न चलना आता है।
वह लीन दुःखो में रहे सदा, चाहे उनकी तरफ विधाता है॥
और छठे प्रसिद्धि करने में, सारांश नहीं कुछ रहता है।
महाविघ्न कुतर्क सातवां है, अमृत को तज विष गहता है॥
कोई लक्ष्य बिना जो काम करे, उसका पुरुषार्थ निष्फल है।
बिना मूल के ब्याज असम्भव, और सम्भव होना मुश्किल है॥
मन शिथिल बने जिस प्राणी का, यह नवमा विघ्न कहाता है।
शुभ स्वर्ग मोक्ष के सुख यह, आत्म-मन शक्ति से पाता है॥
सन्तोष स्वल्प शुभ कार्य में, दशमा यह विघ्न महाभारी।
धर्म ज्ञान और मोक्ष सभी का, सन्तोषी नहीं अधिकारी॥
एकादश मे अशुभ कामना, विघ्न का कारण बनती है।
द्वादश में कुशील परायण आत्म, कुम्भीपाक मे गलती है॥
जो पड़े कुसंगति में प्राणी तो, विघ्न तेरहवाँ आता है।
सब शुभ धर्मों से वंचित होकर, अन्त समय पछताता है॥
और पर छिद्रान्वेषण में जिनकी, दृष्टि नित्य रहती है।
यह विघ्न चौदहवा लाभ कीर्ति, सब पानी में बहती है॥

और विघ्न पन्द्रहवां महा बुरा, होना पक्षान्ध कहाता है।
फिर वंचित सब लाभों से, होकर नीच गति जा पाता है॥

दोहा (राम)

उन्नत होने मे सदा, शक्ति ही प्रधान।
शक्ति हीन नर को गिना, बिल्कुल पशु समान॥

ग्यारह हैं शक्ति सभी, पुण्यवान् में होय।
जिसमें न हो एक भी, वृथा जन्म रहा खोय॥

शक्तिहीन का दुनिया में, गौरव एक तुच्छ तमाशा है।
घुल जाय जरा से पानी मे, जैसे कि बड़ा पताशा है॥
शक्तिहीन मनुष्य इस जग मे, सब की ठोकर खाते है।
और न्याय न्याय कहते कहते, बेइज्जत हो मर जाते है॥

दोहा

ध्यान लगा करके सुनो, ग्यारह शक्ति महान्।
जो इनको धारण करे, अन्त लहे निर्वाण॥

आदर्श गुणों को ग्रहण करे, वह गुण माहात्म्या शक्ति है।
गुणी जन की सेवा करना, शक्ति योग्य दूसरी जंचती है॥
स्मरण शक्ति तृतीया है, उपकार कभी न भुलाना है।
कृतघ्न बन कर सर्वस्व हार. आत्म को नहीं रुलाना है॥
छोटे से छोटा चल होकर, यह दास्या शक्ति चौथी है।
नही तजा मान जिस प्राणी ने, तो उसकी किस्मत सोती है।
शुभ सख्या शक्ति पंचम है, सबसे कुछ मैत्री भाव करो।
है कान्ति तेज प्रभाव छठे, निज निर्बलता का पाप हरो॥
शुभ वात्सल्यता प्रेम भाव, सप्तम सबका सनमान करो।
है आत्म समर्पण अष्टम शक्ति, धर्म पे सब कुर्बान करो॥

तल्लीन कही नवमी शक्ति, सब कार्य सिद्ध कर देती है।
बस और तो क्या उस प्राणी को, शिव रमणी तक वर लेती है॥
धर्म समाज ज्ञानहानी का, जिसके दिल मे खेद नही।
ऐसे छद्मस्थ प्राणी में, और पशु में कोई भेद नही॥
सर्वज्ञ अवधिमनःपर्यय ज्ञानी, दृष्टिवाद पूर्व धारी।
इनके विच्छेद होने पर समदृष्टि, को होता दुःख भारी॥
उक्त साधनो के वियोग का, जिस प्राणी में संचार नही।
इन शक्ति हीन मूढात्म का होता कहीं बेड़ा पार नहीं॥
एक रूपा शक्ति कही ग्यारहवी, बरते सब व्यवहारो में।
तन जन क्या कारोबार रूप बिन, आब नहीं घर बारो में॥

दोहा (राम)

आप्तवाणी हृदय धर, लगो सभी निज काम।
अवध पुरी मे तुम सुखी, हमको सुख वन धाम॥

निर्भयता से अवध पुरी मे, भरत भूप की शरण रहो।
और जैसा राम भरत वैसा, इसमें न रंचक फरक लहो॥
बस न्याय पथ पर डटे रहो, साचो उपाय नित्य वृद्धि का।
शुभ उद्यम शील बनो सारे, अमोघ शस्त्र यह सिद्धि का॥

दोहा

शिक्षा दे श्रीराम ने, किया गमन में ध्यान।
जन समूह ने भी किया, संग ही संग प्रस्थान॥

मकना तीस खेच लोहे को, अपने संग मिलाता है।
ऐसे ही अवध वासियो का दिल, राम संग ले जाता है॥
हम कैसे हाल कहें सारा, न शक्ति कलम जबां में है।
शुद्ध क्षीर नीर सम प्रेम राम, प्रजा में सहज स्वभावें है॥

मुश्किल से वापिस करके फिर, आगे चरण बढ़ाये हैं।
इस प्रेम विरह रूपी सागर में, सब नर नार समाये हैं॥

दोहा

ग्राम-ग्राम के अधिपति, विनती करे अपार।
प्रभु यहां कृपा करो, आपका सब घर बार॥
श्रीराम सबको समझा कर, आगे को बढ़ते जाते हैं।
सब ग्राम नगर पुर पाटन तज, रजनी जहां आसन लाते हैं।
अब इधर अवध में दशरथ नृप ने, भरत पुत्र बुलवाया है।
और राज भार देने को नृप, मंत्रीश्वर ने समझाया है॥

भरत का राज्य

दोहा

राज्य न लेवे भरत जी, आक्रोशे निज मात।
सियाराम और लखन का, विरह सहा नहीं बात॥

छन्द

चारित्र लेने के लिये, भूपाल शीघ्रता करे।
हरबार समझाया भरत नहीं, ताज अपने सिर धरे॥
यत्न सब निष्फल हुआ, कुछ काम बन आया नहीं।
सुत भी गया दशरथ कहे, मुनि व्रत मुझे आया नहीं॥
परिवार सब दुख में पड़ा, रानी का हाल खराब है।
राम लक्ष्मण के बिना, सुत भरत भी बेताब है॥
अब भूप ने सोचा कि वापिस, राम को बुलवाय लूं।
सोच कर युक्ति कोई, चारित्र में चित्त लाय लूं॥

दोहा

आज्ञा पा महाराज की, हो झटपट तैयार।
मंत्रीश्वर वहाँ से चला, जरा न लाई वार॥
जरा न लाई वार तुरन्त, पश्चिम दिशि को ही धाया।
मिले दूर कानन में जा, मंत्री ने शीश नमाया॥
जो था मतलब खास, अवध का सारा हाल सुनाया।
बोले अवध पुरी में नृप ने, आपको जल्द बुलाया॥

दौड़

चलो अब देर न लावो, क्लेश उपशान्त बनाओ।
ख्याल कुछ करो इधर का होवें सब दुख दूर चरण जहाँ
हो गरीब परवर का॥

दोहा (राम)

वापिस जा सकता नहीं, हूँ मंत्री लाचार।
अब कुछ वर्षों के लिये, है बन का आधार॥
तुम जाओ अवध में भरत वीर को,
वचन मेरा यह कह देना।
अब तू अपने को राम समझ,
और मुझको भरत समझ लेना॥
श्री दशरथ नृप घर हम चारो, सुत एक सरीखे जाये हैं।
हम सबको यह स्वीकार भूपति, भरत वीर शोभाये हैं॥
मात पिता को आज तलक का क्षेम कुशल बतला देना।
सब यथायोग्य प्रमाण तात, माताओं को जतला देना॥
तुम भरत वीर को गद्दी पर, समझा करके बैठा देना।
और धूम धाम से छत्र लगाकर, ऊपर चमर झुला देना॥

छन्द

मानना भाई भरत को, तात के मानिन्द सभी ।
मेरा भी हृदय सर्द सुन सुन, करके होवेगा तभी ॥
वचन यह कह कर चरण, श्री राम ने आगे धरा ।
सामन्त मन्त्री जन सभी के नेत्रो में अति जल भरा ॥
प्रेम हृदय मे भरा सब संग ही संग में चल रहे ।
विनती न मानी राम ने, सौ सौ खुशामद कर रहे ॥

दोहा

चलते चलते आ गई, नदी बह रहा नीर ।
फेर राम कहने लगे, बैठ नदि के तीर ॥

गाना नं० ३४

(राम का मंत्रीगण एवं सामन्तगण को समझाना)

बहुत आगये दूर मन्त्री, लौट अवध जाओ ॥टेर॥
वापिस रथ ले जाओ मन्त्री, मत ना घबराओ ।
तुम समस्त राज परिवार को, जाकर धीरज बधाओ ॥१॥
सामन्त होश कर मत रोवो, न नीर नैन लावो ।
वापिस तुम सब जाओ, अयोध्या हुक्म मेरा पाओ ॥२॥

दोहा

समझा कर यो राम जी, बढ़े नाव की ओर ।
निषाद राज अति खुश हुआ, जैसे चन्द्र चकोर ॥

गाना नं० ३५

आन प्रभु ने दर्श दिखाये सफल कर्म मेरे, हां सफल कर्म मेरे ।
भिरन भिरन आ रही बेडी, गाय रही है महिमां तेरी ।

संग सिया लेरे, हां संग सिया लेरे ॥१॥
दादुर मोर पपईया बोला, श्री राम कुंवर का सादा चोला।
देव पवन देरे हाँ देव पवन देरे ॥२॥
केवट को अति खुशियाँ हो रही राम कृपा सब कष्ट खो रही।
उदय भाग्य तेरे हाँ उदय भग्य तेरे ॥३॥

दोहा

तीनों प्राणी हो गये बेड़ी में अस्वार।
इधर खड़ी जनता सभी रोवें जारो जार ॥
खुशियो में निषाद सब, गाते जावे गीत।
पुल का रास्ता छोड़ कर, हम से पाली प्रीत ॥

गाना नं० ३६ (सब मल्लाहो का)

दीना नाथ दयाल आज दर्श हमने पाये।
देख देख नैन सब के, प्रफुल्लित थाये ॥टेर॥
सहज सहज चालत नाव आपके ही गीत गाव।
मन मे नाविकों के चाव, प्रभु घर आये ॥१॥
राम नाम से आराम, लखन करे सिद्ध काम।
जपत रहे आठो याम, सीता सुख दाये ॥२॥
तजा सत्य खातिर राज, बन को आप चले महाराज।
हमरे भी संवारन काज, प्रभु इधर आये ॥३॥
नित्य धर्म शुल्क ध्यान, उदय होये भाग्य आन।
रंक घर आये महान, दर्शन दिखलाये ॥४॥

दोहा

नदी पार जब हो गये, रामचन्द्र भगवान्।
जनक सुता श्री राम से, बोली मधुर जबान ॥

मुद्रा मेरी निषाद को दे दीजे महाराज।
केवट को करदो खुशी प्राणपति सिरताज ॥

श्री राम का था यही विचार उनका दरिद्र हर लेने का।
सरकारी जो कुछ था महसूल वो सभी माफ कर देने का ॥
उस जनक सुता का भी कहना श्री राम को था मंजूर सभी।
दो नैन उठाकर केवटो को औदार चित्त ने कहा तभी ॥

दोहा (राम)

निषाद राज आवो इधर यह लो आप इनाम।
सुन के वह कहने लगा अर्ज सुनो श्रीराम ॥

(निषाद)

रघुकुल दिनेश काटो क्लेश, तुम केवट जग अवतारी हो।
मैं क्या इनाम तुम से मागूं, भव तारण आप खरारी हो ॥
मैं पार किया जल से तुमको, तुम पार करो दुखों से हम को।
जब केवट से केवट मिल गये, अब मेट दिया मेरे गम को ॥

दोहा

केवट को करके खुशी, चले अगाड़ी राम।
पार खड़े जन कह रहे, वह जाते सुख धाम ॥
जब राम दूर हुवे दृष्टि से तो, जनता सभी निराश हुई।
मुख मंडल सब के मुर्झाये, जैसे ग्रीष्म की घास नई ॥
जब विरह की अग्नि भभक उठी, तब नेत्र वर्षा करने लगे।
और लम्बे लम्बे श्वास छोड़, सन्तोष हृदय मे भरने लगे ॥

दोहा

परम विरहा शुभ शक्तिवान, थे सुयोग्य नरनार।
प्रजा और श्रीराम मे, प्रेम था गूढ़ अपार ॥

सब हुए उदास अवध में, वापिस आते हैं और रोते हैं।
हृदय में प्रेम उबाल उठे तो, अश्रुओं से मुंह धोते हैं ॥७॥
मुश्किल से चरण धरें आगे, है प्रेम राम में अड़ा हुआ
वह आ तो रहे हैं अवध पुरी, पर मन भ्रमता में पड़ा हुआ।

छन्द

प्रणाम करके बाद नृप को, वार्ता सारी कही।
हाल सुन राजा की जो थी अक्ल सब मारी गई ॥
भरत को अति प्रेम से नृप फेर समझाने लगे।
विघ्न मत डालो कुमर, सब भाव बतलाने लगे ॥
मान लो मेरा कथन, हित शिक्षा समझाऊँ तुझे।
कर उऋण मुझको धरो, सिर ताज बतलाऊँ तुझे ॥

गाना नम्बर ३७

(राजा दशरथ का भरत को समझाना)

लाल मेरे बेटा धारो सिर पे यह ताज ॥टेर॥
मानो वचन हमारा कर्त्तव्य पहिला तुम्हारा।
देवो मुझको सहारा धारू संयम आज ॥
राम वन को सिधारा संग लक्ष्मण प्यारा।
सबने यही उचारा देवो भरत को राज ॥२॥
यह सूर्य वंश कहाया, सबने वचन निभाया।
तुझे ख्याल न आया, सारा बिगड़े यह काज ॥३॥
मस्तक तिलक सजावो, आर्ति दूर न लाओ।
शुक्ल ध्यान ध्यावो, भाषा श्री जिनराज ॥४॥

दोहा (भरत)

लाख कहो चाहे पिता, नहीं धारू सिर ताज।
मै चाकर बन के रहूँ, राम करेगें राज ॥

राम करेंगे राज्य अभी, वापिस बन से लाऊँगा।
चलना जिसने चलो, नहीं मैं अभी चला जाऊँगा॥
रामचन्द्र के दर्श किये बिन अन्न जल नहीं पाऊँगा।
रामचन्द्र को लाकर, सिंहासन पर बैठाऊँगा॥

दौड़

मुझे हर बार सताते, जले को और जलाते।
भ्रात बन बन दुख पावे, मुझे फेर बतलावो कैसे राज्य सुख भावे।

छन्द

यह देख हालत कैकयी यों दिल ही दिल कहने लगी।
और आँसुओं की धार, नेत्रों से अधिक बहने लगी॥
राज्य यह बिन राम के, चलता नजर आता नही।
सोचा था जिसके वास्ते, सो भरत कुछ चाहता नहीं॥
अवध क्या संसार में; निन्दा हमारी हो गई।
जो कीर्ति अनमोल थी, वह आज सारी खो गई॥
अपयश हुआ सब जगत् में, फिर कार्य न कोई सरा।
भंग डाला रंग में उसका, यह फल भरना पड़ा॥

दोहा

कर विचार यह कैकेयी, आई दशरथ पास।
हाथ जोड़ कहने लगी, जो मतलब था खास॥

दोहा (कैकयी)

आज्ञा मुझको दीजिये, प्राण पति जग नाथ।
लाऊं राम बुलाय के, चलूं भरत के साथ॥
अब जैसे भी हो सका राम को, पुरी अयोध्या लाती हूँ।
और बने काम जिसतरह नाथ, वैसा ही करना चाहती हूँ॥

यह राज ताज दे रामचन्द्र को, आप मुनिव्रत ले लीजे।
श्री राम लखन सीता को लाऊं, आज्ञा मुझको दे दीजे॥

दोहा

कैकेयी के सुन कर वचन, बोले दशरथ भूप।
अक्ल ठिकाने आ गई, सोची युक्ति अनूप॥

दोहा (दशरथ)

बिना विचारे जो करे, सो पीछे पछताय।
व्यवहार यहाँ बिगड़े सभी, अशुभ कर्म बन्ध जाय॥

गाना नं० ३८

(राजा दशरथ का कैकेयी को उपालम्भ देना)

गजब तूने किया किसका, यह किसको हक दिलाया है।
मै जिसके दर्श से जीऊं, उसी का दिल दुखाया है॥ १॥
समझ कर मांगती वरदान, तू क्यों हो गई नादान।
अन्त पछतायेगी क्यों आज, गौरव को गिराया है॥ २॥
नियत यह हो चुका सब कुछ. तिलक श्री राम को होगा।
अवध की शुद्ध भूमि में, यह क्यो उल्लू बुलाया है॥ ३॥
भरत को राज्य देने से, नियम सब भंग होते है।
तू मंगल में अमंगल करके, क्यो हृदय जलाया है॥ ४॥
तेरा अपयश मरण मेरा, नहीं इसमें कोई संशय।
आज व्यवहार को तज कर, 'शुक्ल' को क्यों लजाया है॥५॥

दोहा

आज्ञा ले निज नाथ की, चली राम के पास।
भरत मंडली और कैकेयी, हो रहे अति उदास॥

चपलगति रथ बैठ सभी, अति तेजगति से धाये हैं।
थे तीनो तरु की छाया मे, और नजर दूर से आये है ॥
उधर राम सीता लक्ष्मण ने, दिल मे यही विचार किया।
वह मात कैकेयी आती है, झठ आगे आ सत्कार किया ॥
फिर उतर यान से मिले परस्पर, खुशी का न कोई पार रहा।
लघु भरत राम के चरणो मे, रो रो के आंसू डाल रहा।
और बोले अय भाई मनसे, तुमने क्यों मुझे विसारा है।
अब चलो अवध मे राज करो, चरणों का हमें सहारा है ॥
श्री रामचन्द्र ने माता के, चरणों में, शीश झुकाया है।
फिर बोले माता किस कारण, इतना यह कष्ट उठाया है ॥
सीता आन झुकी चरणो मे, विनय भाव दर्शाती है।
फिर लक्ष्मण ने प्रणाम किया, कैकेयी जल नैन बहाती है ॥

छंद

हाथ सबके सिरपे धर धर, प्रेम माता कर रही।
आंसुओ की धार भी, नेत्रों से नीचे झर रही ॥
बोली नहीं है दोष अन्य का, मेरा ही खोटा भाग्य है।
जिन्दगी पर्यन्त मुझको, लग चुका यह दाग है ॥
अवध मे चलकर कुमर, आर्ति सभी हर लीजिये।
तप्त हृदय मात का शीतल, कुमर कर दीजिये ॥
मुझ सी पापिन और, न दुनियां मे कोई नार है।
रात दिन झुरती कौशल्या, अवध दुख मंझार है ॥

दोहा (कैकेयी)

मेरी गलती पर नहीं, करना चाहिये ध्यान।
सागरवत गम्भीर तुम, मेरे सुत पुण्यवान् ॥

उल्टी मति हो नार की, तुम सागर गम्भीर ।
मात पिता की अय कुमर, चलो बंधावो धीर ॥

अब कहना मानो भरत वीर का, चलो अवध का राज्य करो ।
मैं हूँ निपट नादान मेरा अपराध, क्षमा सब आज करो ॥
सुत भरत न लेवे राज्य अवध का, सभी तरह समझाया है ।
इस कारण फिर आकर के तुम को वृत्तान्त सुनाया है ॥

दोहा (राम)

माता सब कर फैसला, फिर आया बनवास ।
किस कारण फिर हो गया, भाई भरत उदास ॥
भरत राम में फरक समझ, मेरी में कुछ नहीं आता है ।
दे दिया पिता ने राज भरत को, क्यों नहीं हुक्म बजाता है ।
पितु प्रतिज्ञा पूर्ण करने को, यह ढङ्ग बनाया था ।
सब राज्य भरत को दे करके, मैं सैर वनों की आया था ।
अवधपुरी में अब जाने को, माता मैं तैयार नहीं ।
शुद्ध क्षत्रिय कुल को दाग लगे, तुमने कुछ किया विचार नहीं ॥
कर्तव्य हमारा वचन पिता का, जो भी कुछ हो सिर धरना है ।
भरत अयोध्यापति और हमने कुछ वन में विचरना है ॥

दोहा (भरत)

भरत-भरत क्या कह रहे कहा न मानूं एक ।
अय भाई मुझ को कहां हुआ राज्य अभिषेक ॥
मुझे कहां अभिषेक राज का, हुआ जरा बतलाओ ।
फंसू न हरगिज झगड़े में चाहे, लाखो चाल चलाओ ॥
मंत्री लक्ष्मण ताज आप सिर, चाकर मुझे बनाओ ।
अब चलो अवध में अय भाई ! सब आर्त ध्यान हटाओ ॥

दौड़

ध्यान मेरा चरणन मे, नहीं जाने दूं बन में ।
चलो अब देर न लावो, सिंहासन पर बैठ मुझे भी
डचोढ़ीवान बनाओ ।।

राज्याभिषेक

दोहा

उसी समय श्रीराम ने, करी इशारन बात ।
सीता ने कलशा नीर का, दिया राम के हाथ ॥

भरत वीर के शीश राम ने, कलशा तुरत ढुलाया है ।
कहा अवधपुरी का नाथ, भरत राजा यह शब्द सुनाया है ॥
यह मंत्रीश्वर भी साक्षी है, जो राज्याभिषेक किया हमने ।
जो भ्रम भूत सब दूर हुआ, अब तो स्वीकार किया तुमने ॥
अब अवधपुरी मे जाकर मन्त्री, उत्सव अधिक रचा देना ।
और खुशखबरी यह मात-पिता को, जाकर प्रथम सुना देना ॥
सब अवधपुरी का मिलजुल कर, नीति से अपना राज करो ।
कोई कष्ट आन कर पड़े हमे, दो खबर ना चित्त उदास करो ॥
अविनय जो कुछ हुआ माता सो क्षमा सभी अब कर देना ।
हम चलने को तैयार अगाड़ी, हाथ शीस पर धर देना ॥
प्रणाम हमारी माताओं को, क्षेम कुशल सब कह देना ।
तज कर आर्तध्यान शुक्ल, शुभ ध्यान हृदय में धर लेना ॥

दोहा

प्रेम भाव से देर तक, हुई परस्पर बात ।
माता ने लाचार हो धरा शीश पर हाथ ॥

अब यथायोग्य प्रणाम किया, फिर आगे को चल धाये हैं।
यह विरह देख श्रीराम का, सब नयनों में जल भर लाये हैं॥
हो गये लुप्त जब दृष्टि से, फिर पीछे चरण हटाये हैं।
सब बैठ यान में तेज गति से, पुरी अयोध्या आये हैं॥
यहाँ आदि अन्त पर्यन्त भूप को, सभी वार्ता बतलाई।
होगया वचन पूरा ऋण उतरा, खुशी बदन में भर आई॥
फिर उसी समय अति धूमधाम से भरत पुत्र को राज दिया।
और अपना फिर इस दुनिया से, राजा ने चित्त उदास किया॥

छन्द

प्रजा को पुत्रों की तरह, अति प्रेम से नृप पालता।
देव हैं अरिहन्त और, निर्ग्रन्थ गुरु निज मानता॥
धर्म श्रद्धा है दयामय, ध्यान लेश्या शुभ सभी।
वीतरागी कथित शास्त्रों में, न है शंका कभी॥
सूर्य वंशी सुयश पाया, नाम उज्ज्वल कर दिया।
वचन पूरा कर पिता का, कष्ट सारा हर लिया॥
देख शोभा कुमर की, राजा का हृदय सर्द है।
पूरा ही कर दिखला दिया, पुत्रों का जो कुछ फर्ज है॥

—❀✻❀—

दशरथ दीक्षा

दोहा

संयम लेने के लिये, दशरथ हुआ तैयार।
हाथ जोड़ कहने लगी, आन कौशल्या नार॥

कौश०--सुत राम गये वनवास नाथ, तुम भी संयम ले जाते हो।
क्यों बनें एकदम निर्मोही, कुछ ख्याल नहीं दिल लाते है॥

महारानी और वजीर सभी, पुत्र आदि समझाते है।
प्रभु उमर आखिरी में लेना, यदि सयम लेना चाहते हैं ॥

दोहा (दशरथ)

रानी उम्र संसार की, इसका आदि न अन्त।
उम्र शुरू करू धर्म की, लहुं मोक्ष आनन्द ॥
लहुं मोक्ष आनन्द तजूं, अब ख्याल सभी इस घर का।
इस संसार का सम्बन्ध समझ, जैसे है मणि विषधर का ॥
कारीगर ले काढ़ इस तरह, जैसे कि फूल कमल का।
तजूं कषाय भजूं समता, जैसे स्वभाव चन्दन का ॥

दौड़

सभी संयोग अनित्य है, ज्ञान गुण इसका नित्य है।
करू आत्म निर्मल है, पाकर केवल ज्ञान मोक्ष सुख
भोगूं सदा अटल है ॥

चौपाई

सत्यभूति मुनि पास सिधाये। चरण कमल मे शीश झुकाये ॥
बोले भव दुख से प्रभु तारो। जन्म मरण का कष्ट निवारो ॥

दोहा

नृप का जब अणगार ने, देखा दृढ़ विश्वास।
तब ऐसे मुनिराज ने, किये वचन प्रकाश ॥

चौपाई---(सत्यभूति)

आश्रव रोक संवर को धारो।
बंध जान निर्जरा विचारो ॥
खम दम सम, त्रिक हृदय लाओ।
तप जपकर अरि कर्म उड़ाओ ॥

दोहा

पांच महाव्रत धार लो, पांच ही सुसतिमान ।
राजन् ? गुप्ति तीन कर पहुंचो पद निर्वाण ॥

सुना भूल गुण संयम का, वैराग्य मजीठी रंग चढ़ा ।
चरणों में करी प्रणाम फेर, ईशाण कोण की तरफ बढ़ा ॥
आभूषण सभी उतार भूप ने, केश लूंच कर डारे हैं ।
मुखपति मुंह पर बांध मुनि हो, चार महाव्रत धारे है ॥
दीक्षा उत्सव के बाद सभी जन, निज-निज कारोबार लगे ।
तज कर झूठा संसार मुनि तप संयम के व्यवहार लगे ॥
इस तरफ़ अवध का राज भरत नीति से खूब चलाते हैं ।
बनवास में फिरते उधर, राम सिया लक्ष्मण हाल बताते हैं ॥

दोहा

फिरते हैं नित्य चाव से, मन में अति हुलास ।
चित्रकूट में पहुंच कर, किया राम ने वास ॥

शुभ समय बिताते है अपना, सन्ध्या और आत्म शोधन में,
श्रीराम माहात्म्य प्रगट हुआ, इस कारण सारे लोकन में ॥
फिर वहाँ से भी चल दिया राम, जब सीया का चित्त उदास हुआ ।
अब ऋतु बसन्त भी आ पहुंची, सारे जंगल में घास हुआ ॥

२६—वज्रकरण सिंहोदर

दोहा

आगे फिर इक आगया, अवन्ती वरदेश ।
शुद्ध एक स्थान मे ठहरे रामनरेश ॥

वटवृक्ष तले आसन लाये, जहाॅ अति गहन शुभ छाया है ।
कुछ देख हाल उस जंगल का, मन ही मन ध्यान लगाया है ॥
क्या बाग और उद्यान यह दोनो अद्भुत रंग दिखाते है ।
फूलो पर यौवन बरस रहा, पर मनुष्य नजर नहीं आते है ॥

दोहा (राम)

उज्जड़ अब ही का हुआ; अय लक्ष्मण यह देश ।
कोई मिले तो पूछिये, कारण कौन विशेष ॥

थोड़ी देर के बाद, पथिक एक नजर सामने आया है ।
कुछ हाल पूछने लिये अनुज ने, अपने पास बुलाया है ॥
बोले अहो पथिक बतलाओ, किस कारण उज्जड़ देश हुआ ।
सब आदि अन्त पर्यन्त कहो, तेरा भी क्यो दुर्भेस हुआ ॥

दोहा (पथिक)

दारुण दुःख सुन लीजिये, पथिक कहे तत्काल ।
जिस कारण उज्जड़ हुआ, बतलाऊं सब हाल ॥

उज्जयनी एक नगर मे, सिंहोदर राजान् ।
भूपति आचरण न गिरे, आज बड़ा बलवान् ॥
बज्रकर्ण एक और है दशांगपुर का भूप ।
सिंहोदर ने आनकर, घेरा नगर अनूप ॥

घेरा नगर अनूप हाल, अब कहूँ बैठकर सारा।
मुझे मिले आराम और, संशय मिट जाय तुम्हारा॥
खेलने लिये शिकार एक दिन, नृप उद्यान सिधारा।
खड़ा देख 'मुनि जैन' सामने, मुख से वचन उचारा॥

दौड़

खड़े किस कारण वन मे, तजा क्यो घर यौवन में।
नाम क्या कहो तुम्हारा, महाकष्ट क्यो भोग रहे क्या
दिल में ख्याल विचारा॥

दोहा

मुनिराज कहने लगे, राजन सुनकर गौर।
कर्म काटने के लिये, करे तपस्या घोर॥

प्रीतिवर्धन नाम मेरा, व्यावहारिक शब्द कहाता है।
सब छोड़ गंठ निग्रन्थ बने, आनन्द ज्ञान मे आता है॥
जो द्विविध धर्म कहा सर्वज्ञ ने, उसकी तुमको खबर नही।
निरपराधी को हनना यह, क्षत्रिय कुल का धर्म नही॥
अब सुनो जरा कर ध्यान धर्म,द्विविध का तुम्हे बताते हैं॥
सम्पूर्ण धर्म कहा मुनियो का, पहिले सो दर्शाते है॥
पांच सुमति और तीन गुप्ति को, हरदम हृदय रखना है।
कुछ सरस नीरस जो मिले आहार, समप्रणामे भंखना है॥
शुद्ध चार महाव्रत धार मूल गुण, चार कषाय निवारत हैं।
सब कष्ट सहे सहर्ष सदा, पर कार्य मुनि संवारत है॥
उत्तर गुण के धारक त्यागी, आत्म ध्यान लगाते हैं।
शुभ तप जप कर अरि कर्म काटकर, अक्षय मोक्षपद पाते हैं॥
अब आगे सुनो ध्यान लाकर, जो सर्वज्ञ का फरमाना है।
कुछ गृहस्थ धर्म का भी वृत्तान्त, राजन तुमको बतलाना है॥

पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत, धारण करते है।
और सातो कुव्यसन तजे तन मन, धन से पर कार्य करते है ॥
देव गुरु शुभ धर्मशास्त्र, चारो की पहिचान करे।
रत्नत्रय को धार, श्री मुनि सुव्रत को प्रणाम करे ॥
नवरत्न पदार्थ धार हृदय, अरि दुष्ट कर्म सब दूर करें।
अब हिंसा दोष बताते है, इस पर भी जरा विचार करें ॥
मदिरा मांस खाने वाले, अधो नरक मे जाते है।
जो करें शिकार अनाथो का, वह जन्म मरण दुख पाते हैं।
दुख होता है दुख देने से, यह सर्वज्ञा का कहना है।
कोई जैसा बोवे बीज, उसी का वैसा ही फल लेना है ॥

गाना नम्बर ३६

(मुनिराज का राजा वज्रकरण को उपदेश देना)

तर्ज नाटक की

तुम सत्य धर्म को पालो, हरदम जान जान जान।टेर।
जो सत्य धर्म को पाले, वह नरकादिक दुःख टाले।
जहाँ खड़े हैं तिरछे भाले, सत्य तू मान मान मान ॥१॥
यह राज पाऽ सुत भ्राता, नही संग किसी के जाता।
फिर परभव मे दुःख पाता, सुन धर कान कान कान ॥२॥
जो विमुख धर्म से होता, वह सिर धुन धुन कर रोता।
कुछ मतलब सिद्ध नहीं होता, सुन धर ध्यान ध्यान ध्यान ।।३॥
जिन क्रोध मान मद मारा, और अष्ट कर्म को टारा।
हुआ शुक्ल ध्यान सुखकारा, मिले निर्वाण बाण बाण ।।४॥

दोहा

राजा ने ऐसा सुना, आत्म धर्म अनूप।
सम्यक्त्य शुद्ध धारण करी. बैठा हृदय स्वरूप ॥

सिवाय देव अरिहन्तदेव, दूजा नहीं चित्त लगाऊंगा।
निग्रन्थ गुरु के बिना नहीं, किसी अन्य को शीश झुकाऊगा॥
यावज्जीव पर्यन्त काम कोई, दुष्ट नहीं दिल मे धारू ं।
शुभ धर्म हेत तन मन धन, इज्जत राज्य न्योछावर करडारू ं॥
यह लिया नियम शुभ धार भूप ने मुनि को शीस झुकाया है।
झट चरणो मे प्रणाम किया, फिर राज़ सभा मे आया है।
फेर विचार किया ऐसा, यदि सिहोदर सुण पावेगा॥
इस मेरी कठिन प्रतिज्ञा पर, वह भूप अति झुंझलावेगा।
यदि शीस झुकाऊं राजा को, तो नियम टूट मम जावेगा॥
अब कौन उपाय करू ं इसका, जब मेरे सन्मुख आवेगा॥

छंद

आगार के उपयोग बिन, हुई सोच यह भूपाल को।
बनवा लई इक मुद्रिका, उस दम बुलवाय सुनार को॥
नाम श्री अरिहन्त अंकित, पहिन अंगुली में लई।
यही बना कर ढङ्ग नृप ने, धीर निज मन को दई॥
जब समागम हो कहीं, अरिहन्त गुण हृदय धरे।
हस्त मस्तक को लगा, प्रणाम नृप ऐसे करे॥
एक व्यक्ति ने सभी यह, रहस्य एक दिन पा लिया।
और पास सिंहोदर के जाके, हाल सब बतला दिया॥

दोहा

वज्र कर्ण के विरुद्ध सब, दिया चुगल ने भाष।
बोला अब तज दीजिये वज्रकर्ण की आश॥

(पिशुनक)

तुम्हे नहीं वह नमस्कार, अरिहन्त देव को करता है।
पागल तुम्हे बना रखा, जिज वक्र भाव दिल धरता है॥

निश्चय मैंने किया तुम्हे, वह कब खातिर में लायेगा।
अंगूठी कर से हटा कभी नहीं, आपको शीस निवाएगा ॥

दोहा

पिशुन पुरुष के वचन सुन, जल बल हो गया ढेर।
क्रोधित सिंहोदर हुआ, जैसे भूखा शेर ॥
सिंहोदर कहने लगा, अब आ पहुँची रात।
प्रातः काल जाकर करूं, वज्र कर्ण की घात ॥
सिंहोदर जाकर लगा, करने भोजन पान।
किसी पुरुष ने कह दिया, वज्रकर्ण को आन ॥

(रामचन्द्र पथिक से)

बोले राम वह कौन मनुष्य, जिस गुप्त भेद सब पाया है।
वज्रकर्ण के पास पहुंच जिन, सभी हाल बतलाया है ॥
ज्ञात तुम्हे है तो यह भी, कहदो, हम सुनना चाहते है।
बोला पथिक सुनो यह भी, हम सभी खोल दर्शाते है ॥

दोहा (पथिक)

कुन्दन पुर मे सेठ के, सुन्दर यमुना नार।
विद्युत अंग पुत्र हुआ, शशीवदन सुखकार ॥
शशिवदन सुखकार सेठ, सुत नगर उज्जयनी आया।
रूप कला नहीं पार द्रव्य, उज्जयनी खूब कमाया ॥
कामलता वेश्या देखी, रग-रग मे इश्क समाया।
खोटी संगत मे पड़ करके, सारा माल गंवाया ॥

दोहा

पास जिसके न पैसा, मेल फिर उससे कैसा।
लगी दिखलाने पौला, बर्ताव देख विद्युतअंग,
वेश्या से ऐसा बोला ॥

दोहा (विद्युतअङ्ग)

अय प्यारी ! तेरे लिये, तजे मात और तात ।
लाखों की दौलत करी, तुझ कारण बरबाद ॥

छन्द

लाल हीरे रत्न प्यारी, सार सब तुझको दिया ।
विश्वासघातिन बनके धक्का, आज क्यों मुझको दिया ॥

अब बिना तेरे ठिकाना, और न मुझको कहीं ।
क्षुधा निवारण के लिये, पैसा कोई पल्ले नहीं ॥

वेश्या कहे तू कौन है, बक-बक खडा क्यो कर रहा ।
रोनी बना सूरत अभागी, नेत्रों में जल भर रहा ॥
बोला अय प्यारी देख मैं, वह ही तो विद्युत अंग हूँ ।
करती थी जिससे प्यार अब, कुछ ख्याल कर मै तंग हूं ॥
वेश्या ने सोचा कि कहूं, रानी के कुंडल चोर ला ।
खुद ही मारा जायगा, सब दूर टल जाये बला ॥

दोहा (वेश्या)

कुडल कानो के ले आ, यदि चाहे संयोग ।
नहीं तो दिल मे सोच ले, सारी उमर वियोग ॥

विद्युत अंग

फिर बोले विद्युत बिना, द्रव्य के कैसे कुंडल आयेगे ।
यह बातें अद्भुत सुनकर तेरी, प्राण हमारे जायेगे ॥
ना पास हमारे कौड़ी है, तुमने यह और सवाल किया ।
तन धन यौवन सब छीन आज, किस तरह मुझे पामाल किया ॥

गाना न० ४०

(विद्युत अंग)

जिनको जुत्तो के तले, पलकें बिछाते देखा ।
आज मुंह देखते ही, नाक चढ़ाते देखा ॥१॥

झूठे टुकड़ो से मेरे, पलता था कुनबा जिनका ।
सरे बाजार उन्हे, धमकी सुनाते देखा ॥२॥

फखर जिनको था मेरे, चरण दबाने में कल ।
क्रोध से आज उन्हें आखे दिखाते देखा ॥३॥

मेरे दर पर जो कुत्तो की, तरह फिरते थे कल ।
आज विपरीत उन्हे, दांत चबाते देखा ॥४॥

न प्रेम न धीरज न वो, बुद्धि आकार रहे ।
शुक्ल पैसे को सभी, नाच नचाते देखा ॥५॥

दोहा (वेश्या)

आभूषण बिन द्रव्य ही, तस्कर लावें लूट ।
ऐसे भी न जिसे मिलें, तो किस्मत गई फूट ॥

आज ही रात अन्धेरी में, राजा के महल घुसो जाकर ।
रानी के कान पड़े कुण्डल, जल्दी लाचो झटका लाकर ॥
ऐसा सुनकर आ घुसा महल, मे राजा रानी जाग रहे ।
सोचा छुप बैठूं महलो मे, क्योंकि जल सभी चिराग रहे ॥
जो एक पलक भी सो जावें, तो मुझे फिकर न एक रहे ।
विद्युत अंतर से छिपे हुवे, रानी के कुण्डल देख रहे ॥
नींद न आती राजा को, मन मे रानी यो विचार रही ।
निश्चय करने को महारानी, चंपा यूं वचन उचार रही ॥

दोहा (चम्पा रानी)

इधर उधर तन पलटते, सुनो पति महाराज।
किस उच्चाट मे लग रहे, नींद न आती आज॥

दोहा (सिंहोदर)

क्या रानी तुझको कहूं, बैरन हो रही रात।
दिन चढ़ते कल जा करूं, बज्रकरण की घात॥
प्रणाम नहीं करता मुझको, फल इसका उसे चखाऊंगा।
मै दशांग पुर को कल जाकर, चहुं ओर से घेरा लाऊंगा।
इसी विचार मे अभी तलक, अय रानी मै हूं लगा हुआ।
यह मन चिंता ने घेर लिया, इस कारण से हूं जगा हुआ॥

दोहा

होनी आगे ही खड़ी, कारण रही मिलाय।
बलिहारी कुव्यसन की, बने चोर कहाँ जाय॥
विद्युत अंग ने सोच लिया, हरगिज नही कुण्डल पाऊं मैं।
इससे अच्छा वज्रकरण को, जाकर के समझाऊं मै॥
सोच समझ के ऐसा मन मे, विद्युत अंग सिधाया है।
रात समय आ वज्रकर्ण को, सारा हाल सुनाया है॥

दोहा (पथिक)

सिहोदर का हाल सुन घबरा गया नरेश।
सावधान हो किले में, बैठा सजा विशेष॥
सामान सभी ले दुर्ग बीच, पहरा चहुं ओर लगाया है।
अब सिहोदर ने उधर आन, दल बल से घेरा लाया है॥
जैसे तरुवर चन्दन पे, भमरे भुंजग छा जाते है।
ऐसे जंगी दल पड़ा देख, सब नर नारी घबराते हैं॥

सिंहोदर ने भेज दूत नृप को, यह वचन सुनाया है।
अवकाश नहीं तुमको बचने का, हमने घेरा लाया है ॥
मुद्रि हटा गिरो चरणन मे, जान बचाना चाहते हो।
किस कारण फ़स कर धर्म, भ्रम मे जान माल से जाते हो ॥

दोहा (वज्रक)

वज्रकरण उत्तर दिया, सुन लीजे दरख्वास्त।
राज पाट धन माल की, मुझे नही है ख्वास ॥
देव गुरु को छोड़, नहीं नमने का सिर मेरा है।
रस्ता दीजे तजूं देश, यदि कोई हर्ज तेरा है ॥
क्यो दुःख देते प्रजा को, ला चहुँ ओर घेरा है।
तजूं न हरगिज धर्म, जब तलक दम मे दम मेरा है ॥

दौड़

नियम अपना नहीं तोड़ूं, और सब कुछ ही छोड़ूं।
क्षत्रिय कहलाता हूं, नहीं हारूंगा धर्म नर्म, वचनों
से समझाता हूँ ॥

दोहा (पथिक)

उत्तर सुन सिंहोदर को, चढ़ा रोष विकराल।
मारे बिन छोड़ूं नहीं, कहे वचन भूपाल ॥

छन्द (पथिक)

लूट प्रजा को लिया, लाई कहीं पर आग है।
छोड़ कर घर बार नर, नारी समूह गया भाग है ॥
लूट निर्धन कर दिये, धनी क्या सभी नर नार है।
मेरा भी सब कुछ खुस गया, बस माल और घरबार है ॥
उजाड़ हुआ तत्काल का, यह समृद्धि शाली देश है।
वस्त्र भी मेरे खुस गये, बस रह गया यह खेस है ॥

नार ने मुझसे कहा, जो कुछ मिले घर से ले आ।
भय पिछाड़ी नार का, आगे भी डरता है जिया ॥
आपके दर्शन किये, आराम कुछ मुझको मिला।
क्या करूं जाऊं किधर, दोनों तरफ डरता दिला।

दोहा

पथिक के सुन कर वचन, यों बोले श्रीराम।
रत्नमयी यह तागड़ी, ले जा कर निज काम ॥
लाखो का ले द्रव्य पथिक, चरणों में शीस झुकाता है।
और हुआ बहुत प्रसन्न, धूल चरणों की मस्तक लाता है ॥
रामचन्द्र कहे लक्ष्मण से, अय भ्रात जल्द पुर में जाओ।
यह कष्ट पड़ा एक धर्मी पे, जल्दी से उसे हटा आओ ॥
हाथ जोड़ कर नमस्कार, ले धनुष लखन उठ धाये हैं।
कौन सिंह को रोक सके, चल वज्रकरण पे आये है ॥
सेवा की अति लक्ष्मण की, सब भेद भूप ने पाया है।
वन में बैठे सिया राम हाल, सब लक्ष्मण ने समझाया है ॥

दोहा

उसी समय श्री राम को, ले गये महल बुलाय।
भोजन पानी सब तरह, सेवा करी चित्तलाय ॥
भेजा लक्ष्मण राम ने, सिंहोदर के पास।
लक्ष्मण जा कहने लगा, जो मतलब था खास ॥

दोहा (लक्ष्मण)

निष्कारण के क्रोध से, होते है अन्याय।
हर व्यक्ति को हर जगह, न्याय पंथ सुखदाय ॥
समझ लिया हमने सब कुछ, इसलिये तुम्हें समझाते हैं।
मिल चुका दण्ड कर लो संधि, क्यो आगे राड़ बढ़ाते हो ॥

इस झगड़े का भेद कहीं, यदि भरत भूप सुन पावेगा ।
मिल जाय धूल मे सब शक्ति, और जान माल से जावेगा ॥

दोहा

लक्ष्मण का प्रस्ताव सुन, तड़प उठा भूपाल ।
कौन है तू मुझको बता, बोला आंख निकाल ॥

हृदय नेत्र दोनो के अन्धे, किसको धौंस दिखाई है ।
करी मिसाल वही लाडो की, भूआ बन कर आई है ॥
भरत भरत कर रहा बता, क्या नाता लेकर आया है ।
जिसका कोई सम्बन्ध नहीं, उसका प्रसङ्ग चलाया है ॥
धुर से है मातहत हमारे, भरत क्या इसका मामा है ।
यह धौंस वृथा क्यों दिखलाई, यहाँ क्षत्रिय कुल का जामा है ॥
सब मान भंग करके इसका, चरणो मे आज गिराऊंगा ।
क्यों तेरी भी होनी आई, परभव इसको पहुँचाऊंगा ॥

दोहा

सुनी काट करती हुई, बात सुमित्रानन्द ।
गर्ज तर्ज कहने लगा, बांका वीर बुलन्द ॥

(लक्ष्मण)

नीच भाव राजन्! तेरे, मै भी तो दूत भरत का हूं ।
नाग पवलिया दिया छेड़ मै, नहीं वीर गफलत का हूं ॥
मान सभी मर्दन करके, अन्याय का मजा चखाऊंगा ।
जो वचन कहे मुख से पूरे, बिन किये न यहाँ से जाऊंगा ॥

छन्द (लक्ष्मण)

है खेद इस अन्याय पर, क्षत्रिय का तू जाया नहीं ।
धर्मी को तैने दुःख दिया, कुछ भय भी मन लाया नहीं ॥

हर वार उसने है कहा, सब ही यह कुछ ले लीजिये।
धर्म को छोड़ूं नही, रस्ता मुझे दे दीजिये ॥
कौन कारण से बता फिर, जान का दुश्मन बना।
समझ ले अब भी नहीं, मैदान में होगा फना ॥

दोहा

बातों बातों मे बढ़ी, दोनों में तकरार।
सुभटों को कहने लगा, सिंहोदर ललकार ॥

दोहा (सिंहोदर)

पकड़ो इस अज्ञानी को, बोले शब्द कठोर।
धंसो एकदम दुर्ग मे देखें सबका जोर ॥

कड़ा

प्यारे जी सुनते ही सब, सूर एकदम रूरे।
उस तरफ सुमित्रानन्द, नाहर मस्त घूरे ॥

दोहा

लक्ष्मण को जब पकड़ने, गये एकदम शूर।
उधर सुमित्रानन्द को, चढ़ा जोश भरपूर ॥

दल मे कूद पड़ा ऐसे, जैसे कोई शेर बकरियों में।
बसन्त अन्त जैसे ग्रीष्म, ऐसे ही अनुज क्षत्रियों में ॥
होगया साफ मैदान कई, मर गये और दल भाग पड़ा।
फिर बोल दिया नृप ने हल्ला, और हस्ती ऊपर आप चढ़ा ॥
जैसे नट नाचे बाँसों पर, करता कमाल अपने फन में।
ऐसे ही लक्ष्मण वीर बली, करता कमाल गर्जा रण में ॥
देख जौहर नृप दहलाया, लक्ष्मण होदे पर कूद पड़ा।
मुश्के बांध लई राजा की, दल बाकी सब बेकार खड़ा ॥

श्रीरामचन्द्र के पास अनुज, नृप की मुश्कें कस लाया है ।
और आदि अन्त पर्यन्त सभी, रण का वृत्तान्त सुनाया है ॥
श्रीराम सिया और लक्ष्मण हैं, यह भेद सिंहोदर पाया है ।
फिर बारम्बार क्षमा मॉगी, चरणो मे शीश झुकाया है ॥

दोहा (सिंहोदर)

क्षमा मुझे अब कीजिये, यही मेरी अरदास ।
राजपाट सब आपका, मैं चरणो का दास ॥

(राम)-बोले राम सुनो अच्छा, अब मेटें सभी बखेड़ा यह ।
दोनो के राज्य मिला करके, बस अधर्म अर्ध निबेड़ा यह ॥
सेवक मालिक नहीं कोई, अब दोनो भ्रात बराबर के ।
है यदि तुम्हे मंजूर फैसला, करूं कहूं समझा करके ॥

दोहा

सिंहोदर और वज्रकरण, गिरे चरण मे आन ।
हमे सभी स्वीकार है, जो भाषा भगवान ॥

श्रीराम ने कुण्डल मंगवाकर, विद्युत अंग के हाथ दिये ।
और बना दिया अधिकारी नृप ने, सब नगरो के नाथ किये ॥
फिर बोले राम से सिंहोदर, एक बात आपसे चाहता हूँ ।
हे नाथ करे मंजूर मै निज पुत्री, लक्ष्मण को विवाहता हूं ॥

दोहा (राम)

लक्ष्मण से लो सम्मति, यों बोले श्रीराम ।
यदि लखन जी मान ले, बने तुम्हारा काम ॥

लक्ष्मण जी से फिर कहा, सिंहोदर ने आन ।
सुनते ही फिर अनुज यो, बोले मधुर जबान ॥

छन्द (लक्ष्मण)

अब नहीं समय विवाह का, बोले अनुज सुन लीजिये ।
परणेंगे वापिस आन कर, जाने हमें अब दीजिये ॥
हो विदा उज्जैन को, सेना ले सिंहोदर गया ।
धर्म के प्रताप से, नृप का उपद्रव टल गया ॥
राम लक्ष्मण भी विदा हो, ध्यान चलने में किया ।
विश्राम करते उस जगह, जहाँ पर कि थक जाती सिया ॥

कल्याण भूप

दोहा

मलयाचल आगे बढ़े, जब श्रीराम नरेश ।
चलते हुवे आया वहाँ निर्जल नामा देश ॥
तृषा सीता को लगी, लिया जरा विश्राम ।
पानी लाने के लिये, लक्ष्मण धाया ताम ॥
एक सरोवर जल भरा, देखा अधिक अनूप ।
जल क्रीडा करने वहाँ आया है एक भूप ॥
कुबेरपुर का अधिपति, कल्याण नाम सुकुमाल ।
देख सुमित्रानन्द को खुशी हुआ तत्काल ।

उसी समय कर प्रेमभाव, लक्ष्मण से हाथ मिलाया है ॥
फिर करता अनुज विचार, लगे औरत दिल में मुस्काया है ।
कल्याण भूप ने लक्ष्मण जी का, स्वागत किया अति भारा है ॥
और दिया आमन्त्रण चलो महल, मुख से यूं वचन उचारा है ॥

दोहा

इश्क मुश्क गुफिया खुरक, द्वेष खून मद पान ।
भेद न मूर्ख को लगे, लेते चतुर पहिचान ॥
लेते चतुर पहिचान, भेद लक्ष्मण ने सब जाना है ।
तेजी से नहीं पड़े कदम, यह औरत का जामा है ॥
नक्श पड़े सब महिला के, एक बाना मर्दाना है ।
स्वयं रहस्य खुल जायेगा, जो भी इनको चाहना है ॥

दौड़

उमर छोटी बिल्कुल है, हुस्न चेहरा खुश दिल है ।
रहस्य कुछ पाना चाहिये सियाराम बैठे बन में, यह भी दर्शाना चाहिये ॥

दोहा (लक्ष्मण)

सिया राम बैठे वहां, बोले लक्ष्मण लाल ।
बिन आज्ञा कैसे चलूं, महल सुनो भूपाल ॥
उसी समय सेवक जन को, राजा ने हुक्म चढ़ाया है ।
सियाराम को बुला संग ले, अपने महल सिधाया है ॥
भोजन पान से की सेवा, और समझा पर उपकारी है ।
अवसर देख कुबेर पति ने, मुख से बात उचारी है ॥

दोहा (कल्याण राजा)

चरणदास की विनती, सुन लीजे महाराज ।
परोपकारी तुम प्रभु, सभी जगत के ताज ॥
बालिखिल्य है पिता मेरा, पृथ्वी नामा महतारी है ।
थी गर्भवती पृथ्वी रानी, सुन लीजे व्यथा हमारी है ॥
आया एक गिरोह डाकुओं का, सहसा बालिखिल्य बांध लिया ।
नहीं लगा पता कई मासों तक, दुर्गम नग बीच तलाश किया ॥

सुता हुई पीछे रानी के और नहीं कोई लड़का है ।
वृद्धावस्था बालिखिल्य की, यह भी दिल में धड़का है ॥
बालिखिल्य है किस हालत मे, यह हमको कुछ खबर नहीं ।
यदि करें लड़ाई जाकर के, दस्यु दल से हम जबर नहीं ॥
फिर सोचा कि पुत्री जन्मी, कहीं सिंहोदर सुन पायेगा ।
राजपाट सबके ऊपर, अपना अधिकार जमायेगा ॥
इस आपत्ति से बचने के लिये, रलमिल एक बात बनाई है ।
'पुत्र जन्मा महारानी के' यह बात प्रसिद्ध कराई है ॥

दोहा

सिंहोदर को यह खबर, पहुंचाई तत्काल ।
सहित बधाई उत्तर यों, भेज दिया भूपाल ॥

राजतिलक दो राज कुमार को सिंहोदर फरमाया है ।
मन्त्री ने अपनी बुद्धि से, यह सारा ढङ्ग रचाया है ॥
पल्ली पति को लालच भी, हम द्रव्य बहुत सा देते हैं ।
फिर भी न तजते अपना हठ, इसलिए महा दुःख सहते है ॥

दोहा

वज्रकरण का जिस तरह, दीना कष्ट निवार ।
नाथ हमारा भी जरा, कीजे तनिक विचार ॥

यों बोले राम यह भेष पुरुष का, अभी न तन से दूर करो ।
बालिखिल्य को छुड़वा देंगे, तुम अपने मन में धीर धरो ॥
देकर के सन्तोष राम फ़िर, नदी नर्मदा आये है ।
निर्भयता से विंध्या अटवी की, ओर आप चल धाये हैं ।

भीलनी

दोहा

अटवी मे एक भीलनी कर रही मार्ग साफ।
कभी कहती है हे प्रभो! कटे किस तरह पाप॥

चौपाई

शब्द भीलनी के सुन राम। निज मन मांही विचारा ताम॥
भीलनी जपे जिनेश्वर नाम। क्या सत्संग हुआ इस धाम॥
या जाति स्मरण हुआ ज्ञान। कारण कोई मिला शुभ आन।
क्या सुन्दर करती गुण गान। सुन जिन नाम टले सब मान॥

दोहा

देख राम को भीलनी, हर्षित हुई अपार।
चरणो में आकर गिरी, सब को किया जुहार॥

एक वृक्ष तले बैठा करके, फिर पानी उन्हें पिलाया है।
जो चुनकर रक्खे थे पहले बेरो पर हाथ जमाया है॥
मीठो की परीक्षा कारण कुछ, निज दांतो से काटती थी॥
फिर छांट छाट अच्छे अच्छे, सियाराम लखन को बांटती थी॥

दोहा

सादर प्रेम के वह बेर खा, मिला अपूर्व स्वाद।
जनता को वह प्रेम सब, आज तलक है याद॥

वह बेर नहीं एक अमृत था, सब तीन लोक मे बढ़ करके।
शुभ है पांचो रस दुनिया मे, पर इन मे था बढ़ चढ़ करके॥
अब बाप बेटे मे नफरत है, तो औरो से फिर प्रेम कहां।
एक दूजे मे जहां प्रेम नहीं, वहां वर्तेगा सुख क्षेम कहा॥
जो दशा आज भारत की है, किसी बुद्धिमान् से छिपी नहीं।
चोटों पर चोटे सहते है, फिर भी है आंखे मिची हुई॥

दोहा

पाकर के मनुष्य तन करो जरा कुछ ख्याल।
अन्त सभी तजना पड़े, परिजन तन धन माल॥

गाना नं० ४१

तर्ज—(खिदमते खल्क मे जो कि मर जायेंगे)

कर के नेकी जो दुनिया मे मर जायेंगे।
यहां अमर नाम अपना वह कर जायेंगे॥
उठो भारत वीरो, कमर कस के अपनी।
तजो नकली माला, तजो नकली जपनी॥
करो धर्म दुःख सारे, टर जायेगा॥१॥
रहो प्रेम से आप, हिल मिल के सारे।
करो संयम धारण तो, हो वारे न्यारे।
नहीं द्वेषानल मे, ही जर जायेंगे॥२॥
यह चारो वर्ण का, मनुष्य तन समूह है।
करो प्रेम सब से वढ़े, पुण्य समूह है॥
नहीं सच्चे मोती. विखर जायेगे॥३॥
पतित हो के अपने, ही घातक वनेगे।
धर्म अपवर्ग के भी, वाधक वनेगे।
शत्रु व ,वर म्लेच्छो के घर जायेगे॥४॥
इस समय क्या सदा से कहा धर्म ये ही।
करो मैत्री सब से है सद्धर्म ये ही।
शुक्ल काम सारे ही सर जायेंगे॥५॥

दोहा

भारतवासी तुम इसे, सोचो हृदय मांय।
श्रीराम भीलनी को, उधर यों बोले हर्षाय॥

दोहा (राम)

कहां तेरा पतिदेव है, और सभी परिवार ।
क्या नाम आप का भीलनी, मिला धर्म कहां सार ॥

दोहा (भीलनी)

सम्बद्ध नहीं कुछ पति से, सम्बन्धी दिये छोड़ ।
नाम उद्यासिका है मेरा, मन सब से लिया मोड़ ॥
परोपकारी मिले मुनि, जिन को मै मारन धाई थी ।
हानि न उसको पहुँचा सकी, निज शक्ति सभी लगाई थी ॥
फिर महा पुरुष निर्ग्रन्थ मुनि ने, मुझे अपूर्व ज्ञान दिया ।
जो आत्मका कल्याण करे, सम्यक्त्व रत्न यह दान दिया ॥

दोहा (भीलनी)

अरिहन्त सिद्ध आचार्य, उपाध्याय मुनिराज ।
गुण इनका हृदय धरो, महामुनि सिरताज ॥
शरणा भी उत्तम बतलाया, अरिहन्त सिद्ध साधु जन का ।
मन वचन काय को शुद्ध करो, और पाप हरो अपने मन का ॥
मत मारो निरपराधी को, प्राणीमात्र पर दया करो ।
चोरी जारी जुआ मदिरा, अभक्ष्य मांस को परिहारो ॥
नित्य ध्यान करो अपने हक पर, यह धर्म मुख्य है आत्म का ।
बाकी स्वप्ने की माया है, नित्य ध्यान धरो परमात्म का ॥
मैत्री भाव रखो सब पर, गुणियों का आदर भाव करो ।
दुर्बल पर कृपा करो सदा, विपरीत ये माध्यस्थ भाव धरो ॥

दोहा

आत्म शुद्धि के लिये, जपा करो यह जाप ।
सोऽहं सोऽहं जपन से कटें दुष्ट सब पाप ॥

पृथ्वी पानी वायु अग्नि क्या, वनस्पति सोहं सोहं।
तिर्यंच नारकी देवगति, सोहं सोहं सोहं सोहं॥
जलचर थलचर खेचर उरपर, भुजपर जाति सोहं सोह।
नरजन्म अनन्ति वार मिला, नहीं मिली सुमति सोहं सोहं॥
सच्चिदानन्द जो परमात्म, सोहं सोहं सोहं सोहं।
कर्मान्तर फक्त पड़ा हुआ, सोह मोह सोहं सोहं॥
पुण्य सहायक आत्म का, निर्जरा फेर हो कर्मों की।
सम्यक्त्व शुद्ध जब आ जावे, निवृत्ति होय सब कर्मों की॥
जब सम्यग्ज्ञान दर्शन चारित्र, शुद्ध जीव के होते है।
बारूद क्या दण्ड रत्नवन् बन, कर्मों के वंश को खोते है॥
बस लीन जाप मे हो जावो, यह मन्त्र है आनन्द पाने का।
कर्तव्य न छोड़ कभी अपना, यह समय फेर नहीं आने का॥
अब चलते है अय भीलनी हम, किसी और को समझायेगे।
या 'शुक्ल' ध्यान मे लीन बने, निज आत्म ध्यान लगायेगे॥
देकर शुभ ज्ञानामृत मुझको, वह महा तपस्वी चले गये।
तब शस्त्र फैक दिये मैंने, जब दुष्ट भाव सब चले गये।

दोहा

सदुपदेश देकर मुनि, कर गये उग्र विहार।
उस दिन से मुझको, प्रभु मिला ज्ञान का सार॥

जब मैंने निज सम्बन्धी जन को, यह शोभन उपदेश दिया।
किन्तु कर्मोदय से सबने, उल्टा ही उपदेश लिया॥
मुझ को पगली कह कह कर, सम्बन्ध सभी ने छोड़ दिया॥
और भारी कर्मी समझ उन्हें, मैंने निजमन को मोड़ लिया।
किसी आये गये मुसाफिर को, मै सावधान कर देती हूँ॥
पुरुषार्थ करके अपना यह मै, उदर नित्य भर लेती हूं।

और नहीं कुछ धर्म पर, यह जन्म वृथा ही जाता है ॥
क्या खबर कर्म कब छूटेगे, ये ही दुख मुझे सताता है ।

दोहा

अपना जो वृत्तान्त था, संक्षेप मे दिया बताय ।
औदार चित्त प्रसन्त हो, यों बोले रघुराय ॥

दोहा (राम)

अब से नाम सुधर्मिका, तेरा गुण सम्पन्न ।
सार धर्म धारण किया, तेरा जन्म सुधन्य ॥
भक्ति ही संसार मे, करे भवोदधि पार ।
वह नवधा भक्ति तुम्हे, बतलाते है सार ॥

नवधा भक्ति (श्री रामचन्द्र का भीलनी को उपदेश देना)

चौपाई

प्रथम साधु भक्ति सुखदानी । विनय सहित भक्ति मुख्य मानी ॥
सुविनय मूल धर्म का माना । यही मोक्ष का पन्थ बखाना ।
द्वितीय पढ़ो सर्वज्ञा की बानी । अथवा शास्त्र कथा सुनो कानी ॥

सम्यग् ज्ञान दर्श चारित्र, इससे करो निज धर्म पवित्र ।
देवगुरु धर्मशास्त्र में प्रेम, निष्कपट भक्ति तृतीये शुभ नेम ॥
आश्रव रोक संवर को धारो, पुण्य ग्रहण कर पाप निवारो ।
उत्तम चौथी भक्ति पहिचानो, आत्म तुल्य सभी को जानो ॥
शरणे उत्तम चार बताये, इसमें पंच परमेष्ठी समाये ।
दृढ़ विश्वास रक्खो मन मांही, पचम भक्ति कही सुखदाई ॥
गृहस्थ धर्म बारह बतलाये, नित्य कर्म जिनके मन भाये ।
अतिथि संविभाग मुनि जन सेवा, अष्टम भक्ति आत्म सुख देवा ॥

आत्म में जग नाटक देखो, सोहं-सोहं कर निज लेखो।
परमात्म सम जिसको मानो, कर्म मैल का अन्तर जानो॥
सच्चिदानन्द रूप अविनाशी, आप्त कथित शास्त्र में भाषी।
सप्तम भक्ति यह कही अनूप, जानो इस विध आत्म स्वरूप॥
जो आत्म संतोष उसी में, राग न द्वेष न मोह किसी में।
मन अरु माया लोभ से डरना, परहित जीना पर हित मरना॥
देश-धर्म हित अर्पण करना, लो अष्टम भक्ति का शरणा।
मन वच काय सरल बरताओ, विषम भोगी कभी भूल न लावो।
सत्य धर्म लिये शीश चढ़ाओ, निर्मल श्रेणी पर चढ़ जाओ।
करुणा भाव हृदय में लाओ, पर हित कारण प्राण लगाओ॥
नवमी भक्ति इस विध मानो, शोभन पन्थ मुक्ति का जानो॥

दोहा

नवधा भक्ति सुन हुई, सुधर्मिका खुशी अपार।
पुण्य उदय से कर लिये, सभी वचन स्वीकार॥
श्रीरामचन्द्र जी जब, हुवे चलने को तैयार।
कहन लगे यों भीलनी, से मृदु वचन उचार॥

दोहा (राम)

वालिखिल्य नृप का पता, यदि तुम्हे कुछ होय।
तो हमको बतलाइये, पुण्य तुम्हे स्वच्छ होय॥

दोहा (भीलनी)

पन्द्रह सोलह साल की, पूछी आपने बात।
वालिखिल्य नृप कैद में, रहता है दिन रात॥
किन्तु मुश्किल है महाराज, वालिखिल्य को छुड़वाना।
नृप वालिखिल्य को वहां पीसना, पड़ता है कुछ दाना भी॥

चोरो ने वालिखिल्य नृप से, यह अपनी रड़क निकाली है।
एक इसका ही क्या जिकर करे, वैश्यो पर विपदा डाली है॥

दोहा

परोपकारी चल दिये, विपमस्थल की ओर।
चलने को तैयार थे, उधर महा भट चोर॥
राम जिधर को जा रहे, कंटक तरु अति भूर।
रास्ता न कोई मिले, जाते मार्ग चूर॥
शकुन अपशकुन गिनते नहीं, गिने न वाट कुवाट।
दुर्वल को यह सोच है, वलिजन उज्जड़ वाट॥
सेना चोरो की प्रवल, शूर वीर वलवान।
देश लूटने को चले, मिले सामने आन॥

देख सिया का रूप तरुण, सेनापति हुक्म सुनाता है।
देखो हीरे का टुकड़ा, यह आज सामने आता है॥
अतुल अनुपम रूप हमे, यह जगदम्बा ने भेजा है।
राज खजाने तुच्छ सभी, वस ये ही जान कलेजा है॥

दोहा

आज्ञा पाते ही कई, वढ़े अगाड़ी शूर।
हसते-हंसते जा रहे, दिल मे अति गरूर॥

जा पहुंचे जब पास राम के भट शस्त्र चमकाये हैं।
उधर रामलक्ष्मण ने भी, निज धनुप वाण उठाये है।
तब कहे अनुज हे भ्रात रहो, तुम सिया पास हुशियारी से।
करता हूं नाश अभी इनका, ज्वाला को जैसे वारि से॥

दोहा

आज्ञा पा श्रीराम की, लक्ष्मण वढ़े अगार।
धनुष प्रत्यचा खैच कर, किया एक टंकार॥

करवाया जलपान प्रेम से, आसन बिछा रही है।
करो यहां विश्राम क्योंकि, तबियत घबराय रही है॥
बियाबान चहुं ओर सहज, नहीं पानी मिले कहीं है।
जो कुछ इच्छा करूं सभी, हाजिर यह बता रही है॥

दौड़

उधर से घर मालिक आया, देख गुस्सा तन छाया।
पड़ा मस्तक पर बल है, स्त्री से यूं लगा कहन
पति बनकर भूत शक्ल है॥

दोहा

मति हीन तेरी हुई, तज दई आन और शर्म।
धर्म भ्रष्ट सब कर दिया, अग्निहोत्र सुकर्म॥

अग्निहोत्र सुकर्म सभी फल पानी बीच बहाया।
जात पात की खबर नहीं, घर मे यह कौन बैठाया॥
अपवित्र हो गये बर्तन, क्यो पानी इन्हें पिलाया।
फूटे मेरे भाग्य तेरे संग, जिस दिन ब्याह कराया॥

दौड़

निकल जा मेरे घर से, उडा दूं सिर को धड़ से।
तेरा सिर चकराया है, बलती ले लकड़ी चूल्हे से
मारन को धाया है॥

छन्द

स्त्री भयभीत हो, सीता की शरण में आ गई।
आगे सिया हो गई खड़ी, पीछे उसे बैठा लई॥
दुष्ट फिर भी न टला, सीता लगी दिल कांपने।
देख हाल अनुज यह, आकर खड़ा हुआ सामने॥

लक्ष्मण ने समझाया बहुत, माना नहीं चांडाल है ।
लखन का भी हो गया, गुस्से से चेहरा लाल है ।।
पकड़ कर ऊपर उठा, करके किया उपहास है ।
भयभीत होके महा कायर ने पाई त्रास है ।।

दोहा

रोने के सुनकर शब्द, आ पहुँचे नर नार ।
भेद समझ देने लगे, उसको सब धिक्कार ।।

फिर बोले दोष क्षमा करदो इस पामर की नादानी का ।
कही नही दूसरा मनुष्य कोई, क्रोधी है इसकी शानी का ।।
देकर विश्राम पिलाया पानी, कौन दोष शुभ ध्यानी का ।
है आदत से लाचार करो मत गिला जरा अज्ञानी का ।।

दोहा

छुड़ा दिया श्री राम ने, करुणा दिल मे धार ।
फिर आगे को चल दिये, पहुंचे वन मंझार ।।

यक्ष सेवक

अब दूसरी अटवी मे आये, घनघोर भयानक भारी है ।
आषाढ़ महीना लगते ही, जहाँ लगा वरसने वारी है ।।
एक वट का वृक्ष विशाल देख, श्री राम ने आसन लाया है ।
श्रीराम लखन का तेज देख, वटवासी सुर घबराया है ।।

दोहा

वटवासी वहाँ देवता, पाया मन मे त्रास ।
यक्षो के सरदार पे, गया छोड़ निज वास ।।

कुम्भकर्ण यक्ष के पास पहुंच कर, सारी व्यथा सुनाता है।
बोला तीन मनुष्य हैं जिनका, तेज सहा नहीं जाता है॥
तब कुम्भकर्ण ने अवधि ज्ञान से, सभी हाल पहिचाना है।
फिर कहे देव को भाग्य हीन, तैंने नहीं कुछ भी जाना है॥

दोहा (कुम्भकर्ण)

सूर्य वंश कुल मणि मुकुट, दशरथ के सुकुमार।
पूर्व पुण्य अनुसार यह जन्मे कर्मावतार॥
वासुदेव बलदेव अष्टम यह, रामचन्द्र और लक्ष्मण हैं।
पुण्यवान यह महा पुरुष और नहीं किसी के दुश्मन हैं॥
सेवा ना कुछ करी पाहुने, घर में आये चाह करके।
अब चलो चलें हम भी सेवा, तुम करो वहाँ पर जा करके॥

दोहा

सामायिक करके राम यहाँ. करने लगे विश्राम।
देवों ने आ रात को, रचना करी तमाम॥
पुरी अयोध्या के मानिन्द, एक नगरी वहाँ बसाई है।
लम्बी चौड़ी विस्तार सहित, अति शोभनीया सुखदाई है॥
कोट महल क्या बाग बड़ा, बाजार है माल दुकानो में।
नाच रंग स्वर मधुर गायन के. शब्द पड़े आ कानों में॥
बाग बगीचे चहुँ ओर, फल फूलों में यौवन टपक रहा।
क्या करे कथन इस पत्तन, का सुरपुर की मानिंद चमक रहा॥

दोहा

रजनी में रचना करी, देवा मनसा काम।
दरवाजे जहाँ चार हैं, राम पुरी अभिराम॥
मंगल शब्द सुहावने, जिस दम सुने नरेश।
बस्ती अद्भुत देख कर, आश्चर्य सुविशेष॥

छन्द

विचार तब मन मे उठा, क्या ? माजरा नायाब है।
सो रहे या जागते, या आ रहा कोई ख्वाब है ॥
सोये थे हम तो अरण्य मे, ? आती नजर क्यो अवध है।
रूप रंग सब नगर के, पड़ता सुनाई शब्द है ॥
इतने मे सम्मुख आ खड़ा, वर यक्ष वीणा धारके।
देख विस्मित राम को, यो बोला सुर उचार के ॥

दोहा—(इम्भकर्ण)

नाथ यह सब मैने रचा, महल नगर आवास।
इम्भकर्ण वर यक्ष है, तुम चरणों का दास ॥

पुण्यवान का पुण्य साथ, जंगल में मंगल होता है।
पुण्यहीन को मिले न कुछ, नगरो मे फिरता रोता है ॥
यक्ष करें जिनकी सेवा, सब पूर्व पुण्य फल पाया है।
इस जंगल मे कपिल याज्ञिक समिधा लेने आया है ॥

दोहा

सहसा एक तूफान ने, कपिल लिया उड़ाय।
देव कृत जो नगर था, डाला वहाँ पर जाय ॥

यहाँ नूतन नगरी देख कपिल को, आश्चर्य अति आया है।
यदि मिले कोई पूछे उससे, मन मे यह भाव समाया है ॥
एक यक्षिणी नारी रूप मे, नजर सामने आई है।
फिर पास गया विप्र उसके, मन की सब कथा सुनाई है ॥

दोहा (कपिल)

क्या तुमको भी कहीं से, उठा लाया तूफान।
या इस नूतन नगर मे, है तेरा स्थान ॥

दोहा

कहे यक्षणी कपिल से, यह वन खंड उद्यान ।
इभ्भकर्ण वर यक्ष ने, नगर वसाया आन ॥

दोहा (यक्षणी)

देव करी रचना सभी, वास वसे श्री राम ।
करे याचना जो कोई, देते वांछित दाम ॥

याचक को वादल समान, कंचन श्रीराम वरसते हैं ।
तव कहे कपिल हम हैं गरीव, पैसे के लिये तरसते हैं ॥
तू वता किस तरह नगरी में, जाऊं और दान मिले मुझको ।
यदि इच्छा हो पूर्ण मेरी, खुश हो आशीस देऊं तुझको ॥

दोहा

यक्षों का पहरा यहां, नगरी क्या उद्यान ।
विना सहायक के कोई, वस नहीं सकता आन ॥

यक्ष देव रक्षा करते, फिर कौन वहां जा सकता है ।
हाँ परमेष्टी मन्त्र जो जाने, वही फल पा सकता है ॥
यदि हो वारह व्रत का धारी, फिर तो कहने की वात ही क्या ।
इन्द्र भी नहीं रोक सकता, फिर और की पार वसाती क्या ॥

दोहा

कपिल गया जहां मुनि थे, प्रथम नमाया माथ ।
नमोंकार मन्त्र धारण किया, गृहस्थ धर्म के साथ ॥

संग विप्राणी को दिला देशव्रत रामपुरी में आया है ।
सिया राम लखन को देख विप्र, मन ही मन अति शर्माया है ॥
फिर वोले लक्ष्मण कहो विप्र ! कैसे आदर्श दिखाये हैं ।
देकर आशीर्वाद वोला, वस शरण आपकी आये हैं ॥

दोहा

मन वाञ्छित श्रीराम ने, दिया कपिल को दान ।
खुश हो कपिल ने किया, निज मुख से गुणगान ॥

खुशी खुशी निज ग्राम गया, कपिल समृद्धि पा करके ।
जहां भोगे सुख अनेक धर्म, संध्या मे ध्यान जमा करके ॥
फिर सोचा किंचित् किया, धर्म जिसने यह कष्ट निवारा है ।
सम्पूर्ण धर्म यदि ग्रहण करें, तो खुल्ला मोक्ष द्वारा है ॥

दोहा

समझ लिया संसार मे, है सब वस्तु निस्सार ।
संयम बिन होगा नहीं, आत्म का उद्धार ॥

तजा सभी ससार धार, सयम निज आत्म काज किया ।
उस तरफ राम सिया लक्ष्मण ने, वहां ही पूरा चौमास किया ॥
जब चलने को तैयार हुवे, फिर यक्ष वहॉ पर आया है ।
स्वय प्रभा नामक हार देव ने, राम को भेट चढ़ाया है ॥
रत्न जडित कुण्डल जोड़ा, श्री लक्ष्मण को शोभाता है ।
और चूड़ामणि सिया के मस्तक, ऊपर चमक दिखाता है ॥
वर वीणा चौथी दई देव ने, इच्छित राग मिले जिसमे ।
सब साज सहित अद्भुत, गुणदायक अरति दूर हटे जिससे ॥

दोहा

पुण्यवान जहां पर बसे, मिले समागम आय ।
श्रीराम आगे बढ़े, नगर गया विलाय ॥

नगर गया विरलाय, सफर दर सफर रोज जारी है ।
करे वहॉ विश्राम जहां, थकती सीता प्यारी है ॥

—**—

वनमाला

विजयपुरी के जंगल में, वट वृक्ष एक भारी है।
करें यहीं विश्राम यही, इच्छा दिल में धारी है ॥

दौड़

देख छाया खुश मन है, खिला जैसे गुलशन है।
नगर में अनुज पठाया, जो कुछ थी इच्छा सब ही खाना
पीना ले आया ॥

दोहा

भोजन कर श्रीराम जी, बैठे आसन लाय।
शोभा अद्भुत वट वृक्ष की, सोच रहे मन मांय ॥

यह वृक्ष विशाल अनुपम है, वल्ली भूमि पर लटक रही।
है चहुं ओर दाढ़ी जिसके, कुछ गड़ी धरन कुछ चिपट रही ॥
है गृह के मानिन्द बना हुआ, और बड़ी दूर तक छाया है।
एक पास सरोवर भरा हुआ, निर्मल जल अति सोभाया है ॥
जब सूर्य अस्ताचल पहुंचा, श्रीराम ने संध्या ध्यान किया।
आगया समय जब निद्रा का, निज-निज आसन विश्राम किया ॥
लक्ष्मण जाग रहा पहरे पर, अतुल वीर बलधारी है।
अब विजयनगर का हाल सुनो, जिसका सम्बन्ध अगारी है ॥

(वनमाला कुमारी का वर्णन)

गाना नं० ४२

तर्ज—कव्वाली

महीधर नाम राजा का, विजयपुर राजधानी थी।
सुता का नाम वनमाला, रूप में जो इन्द्राणी थी ॥ १ ॥

सुनी शोभा थी लक्ष्मण की, बालपन से ही लड़की ने ।
पति इस जन्म का लक्ष्मण, यही दिल बीच ठानी थी ॥ २ ॥
भेद रानी के द्वारा सब, मिला पुत्री का राजा को ।
ठीक है लखन संग शादी, यही सब दिल समानी थी ॥ ३ ॥
राम लक्ष्मण गये बन में, सुना जब हाल राजा ने ।
लगा ब्याहने पुरेन्द्र नृप को, चढ़ती जवानी थी ॥ ४ ॥
लगी सोचन वह वनमाला, करूं न और संग शादी ।
पति बस एक होता है, तृण सम जिन्दगानी थी ॥ ५ ॥

छन्द

इन्द्रपुर पुरेन्द्र भूप से, ब्याहने की नृप मंशा करी ।
लक्ष्मण बिना ब्याहूँ नही, पुत्री ने यह मन मे धरी ॥
जिसको दिया न्यौता पिता ने, एक दिन वह आयगा ।
क्या बनाऊंगी मै फिर. यह धर्म मेरा जायगा ॥
इससे अच्छा प्राण अपने, खत्म पहिले ही करूं ।
जंगल में जा वट वृक्ष ऊपर, ला गले फाँसी मरूं ॥
रात को ले हाथ मे, सामान महलो से चली ।
पास पहुँची वृक्ष के तो, कौमुदि रजनी खिली ॥
तल्लीन थी निज ध्यान मे, कुछ भी नजर आता नहीं ।
थे अतुल सुख सब तुच्छ, लक्ष्मण के बिना भाता नहीं ॥

चौपाई

राम सिया निद्रा गत सोवें । लक्ष्मण जागे दसो दिस जावें ॥
देख लक्ष्मण राजदुलारी । चन्द्र बदन मुख रूप अपारी ॥

दोहा

लक्ष्मण मन में सोचता, रूप नारी का खास ।
या वन की देवी कोई , वट पर जिसका वास ॥

है सच्चे मोती हेम जवाहिर, से पोशाक जड़ी भारी।
थी रवि किरणों के मानिन्द, मस्तक पर शोभन उजियारी ॥

यह क्या कोई बिजली टूट पड़ी, जो नही समाई अम्बर में।
मानिन्द सिया के आकृति, जैसे थी खास स्वयम्वर में ॥
वह शशि एक तो चढ़ा व्योम, दूजा जल में प्रतिबिम्ब पड़ा।
दोनो को इसने मात किया, मैं देख रहा हूँ खड़ा खड़ा ॥
अनमोल गोल बिन्दी मस्तक पर, अपनी चमक दिखाती है।
क्या सांचे में हैं ढला जिस्म, इन्द्राणी भी शरमाती है ॥

दोहा

बनमाला बट पर चढ़ी, पीछे लक्ष्मण लाल।
जो भी कुछ करने लगी, देख रहा सब हाल ॥
बांधा रस्सा वट टहनी के, कर फांसी आकार।
बनमाला कहने लगी, स्वर कुछ मन्द उचार ॥
बिना सुमित्रानन्द के, सभी पिता और भ्रात।
अब न तो परभव मिले, करती हूँ निज घात ॥

मै सिवा लखण न वरूं और को, अपने प्राण गवांती हूं।
परणावे पिता खास इन्द्र को, उसको भी नहो चाहती हूँ ॥
कौन चीज फिर अन्य मनुष्य, इस कारण फॉसी खाती हूँ।
इच्छा नही मुझको जीने की, इस तन की बली चढ़ाती हूं ॥

दोहा

पाश गले मे डालकर, मरने को हुई तैयार।
तुरन्त आन लक्ष्मण ग्रही, बोले वचन उचार ॥

जिसकी इच्छा तुझे भामिनी खड़ा सामने तेरे है।
कर्तव्य तेरा कायरपन का, बिल्कुल पसंद न मेरे है ॥

देख मनुष्य को चमक पड़ी, किसने आ फांसी खोली है।
कोई नकली बना समझ लक्ष्मण, वनमाला ऐसे बोली है ॥

दोहा (वनमाला)

कौन यहाँ तू छिप रहा, आन किया मोहे तंग ।
इस असली रंग पे तेरा, चढ़े न नकली रंग ॥
चढ़े न नकली रंग, खड़ा क्यो बाते बना रहा है।
चले न तेरे दम गजे क्या पट्टी पढ़ा रहा है ॥
बनवास गये है राम लखन, किसको बहकाय रहा है ।
जली हुई को मुझे कौन तू , आकर जला रहा है ॥

दौड़

प्रण हित मरना ठाना है, प्राण यह तुच्छ जाना है ।
नही त्यागूंगी निश्चय 'अपना , शील धर्म के सिवा
नही मुझको कोई भी शरणा ॥

दोहा (वनमाला)

अलग जरा हट जाइये, मुझे नहीं कुछ होश ।
फांसी लेने दीजिये, रहे आप खामोश ॥

गाना नं० ४३
(वनमाला का)

क्यो रोकें मुझे, मै सताई हुई हूँ ।
तपे जिगर से दिल, जलाई हुई हूँ ॥ १ ॥
तुझे जिसकी चाहना, नही वह यहाँ पर ।
यह मुर्दा जिस्म, मै उठाई हुई हूँ ॥ २ ॥
जावो यहाँ से न, हमको सतावो ।
रंजो अलम् की दुखाई हुई हूं ॥ ३ ॥

लई जिस पे फांसी, सभी सुख तजे हैं ।
उसी गुल से लौ मै, लगाई हुई हूं ॥ ४ ॥
इसी में खुशी हूं, तजूं मैं जिस्म को ।
अदम के इरादे पे, आई हुई हूं ॥ ५ ॥
करो गर कलम सर, तो अहसान मानूं ।
यह लो मै तो सिर को झुकाई हुई हूँ ॥ ६ ॥

दोहा (लक्ष्मण)

गुण माला तू किस, लिये होती है बेजार ।
मैं लक्ष्मण वह सो रहे, राम और सिया नार ॥
रामचन्द्र सिया नार, हमी तीनो बन को जाते है ।
यदि नहीं विश्वास, देख लो तुमको दिखलाते हैं ॥
नामांकित मुद्रिका पढ़लो, तुम 'खुद ही' समझाते हैं ।
निश्चय कर लो सूर्य वंशी, क्षत्रिय कहलाते हैं ॥

दौड़

सिया के दर्शन पाओ, उतर अब नीचें आओ ।
सुमित्रा का जाया हूँ, सेवा करने मैं भाई के संग
बन मे आया हूँ ॥

दोहा

लक्ष्मण के ऐसे सुने, बनमाला ने बैन ।
परीक्षा कारण देखने, लगी उठाकर नैन ॥
दृष्टि झट झुक गई नीचे को, मानिन्द रवि के तेज बड़ा ।
शुभ थे बत्तीस सभी लक्षण और शूरवीर अति तना खड़ा ॥
बनमाला किया विचार नही, कोई और इन्हो की शानी की ।
नामांकित मुद्रिका पढ़ फिर दर्श किया सिया रानी का ॥

दोहा

खुली आंख सिया राम की; देखी सन्मुख नार।
लक्ष्मण ने फिर कह दिया, सभी बात का सार॥

सिया राम को हर्ष हर्ष मे वनमाला शीश झुकाती है।
और अगला पिछला हाल सभी, निज भेद खोल दर्शाती है॥
सतोप दिलाकर श्रीराम ने, सीता पास बैठाई है।
अब उधर महल मे, वनमाला की मात अति घबराई है॥

दोहा

वनमाला हा कहां गई रानी करी पुकार।
शोर एकदम से मचा, महलो के मझार॥

सुना हाल जब राजा ने, जैसे हृदय मे बाण लगा।
सब मारे मारे फिरते है, सेवक कोई महलों फिरे भगा।
और खडे सिपाही जगह-जगह, पल्टन सब तर्फों फैल गई।
जिम्मेवारी थी जिन जिनकी, उन सबकी तबियत दहल गई॥
सब फिरे गुप्तचर जगह-जगह, अब लगी तलाशी होने को।
और दूर दूर कई दिये भेज, जहां मिले रास्ते टोहने को॥
कुछ सेना निज साथ लई, राजा जंगल की ओर बढ़ा।
वहा पास सरोवर वृक्ष तले, कुछ इष्ट चिह्न सा नजर पड़ा॥
थे दो अलबेले शूर एक बैठा, और दूसरा पास खड़ा।
फिर नजर पड़ी वनमाला पर जब, राजा आगे और बढ़ा॥
वनमाला है विश्वास हुआ तो, भूप अति झुंझलाया है।
पकड़ो इनको आगे बढ़कर, योद्धो को हुक्म सुनाया है॥
वस चर्म उड़ा दो मार मार, जब तक न सत्य बतावेंगे।
यह दुष्ट चोर डाकू जन, अपने कर्मो का फल पावेगे॥

जब सुना भूप का कथन, शूरमा आग बभूका हो रूरे।
अब समय देख कर अनुज भ्रात भी, नाहर की मानिन्द घूरे॥

दोहा

बोली की गोली लगी, हुई जिगर के पार।
लक्ष्मण ललकारे उधर, धनुष बाण कर धार॥

धनुष बाण कर धार एकदम, दल में कूद पड़ा है।
घनघोर शब्द टंकार तड़ित, सम सुन दल कांप पड़ा है॥
लक्ष्मण की शक्ति को राजा, देखे खड़ा खड़ा है।
देख भागते शूर भूप का, हृदय उछल पड़ा है॥

दौड़

भूप मन मे घबराया, अश्व पीछे को हटाया।
भेद लक्ष्मण ने पाया, देख साफ मैदान अनुज ने ऐसे वचन सुनाया॥

दोहा

ऊंचे स्वर से कह रहे थे, कुछ करो विचार।
वृथा जोश मे आन कर, बढ़ा लई है रार॥

मैदान मे पीठ दिखा जाना, यह क्षत्रापन का धर्म नहीं।
क्या बनमाला क्या हम है, तुमने जाना कुछ भी मर्म नहीं॥
अपशब्द जबां से कह डाले, क्या आई तुमको शर्म नहीं।
अन्धे बने क्रोधानल मे, और पाया कुछ भी मर्म नहीं॥
पीठ दिखाकर क्षत्रापन क्यो, पानी बीच बहाते हो।
वह चीज नहीं कुछ तोप किले, जिन पर तुम जाना चाहते हो॥
लेने आये थे बनमाला, उसको भी आप विसार चले।
कुछ बचा हुआ जो गौरव था, वह आज धूल मे डार चले॥

इस वनमाला को ले जाओ, हम आपकी इज्जत चाहते है।
मत घबराओ अब खड़े रहो, हम निर्भय तुम्हे बनाते है॥
अपशब्द सहित यह बतलाओ, किसको तलवार दिखाई है।
जो दशरथ नन्दन रामचन्द्र का, लक्ष्मण छोटा भाई है॥

दोहा

सिया राम और लखन हैं, सुने भूप ने बैन।
फेंक दिये हथियार सब, लगे इस तरह कहन॥

प्रभु आप है मुझको ज्ञात नही, सब दोष क्षमा अब कर दीजे।
गम्भीर आप शक्तिशाली, अपशब्द मेरे सब जर लीजे॥
मै आज महा प्रसन्न हुआ, क्योंकि मन वांछित योग मिला।
यह राजपाट सब आपका है, क्या महल खजाना फौज किला॥

दोहा

सीधी दृष्टि जब बने, दुःख सब जाय पलाय।
रणभूमि मे परस्पर, हुआ प्रेम सुखदाय॥

बोले लक्ष्मण श्रीरामचन्द्र है, दोष क्षमा करने वाले।
हम तो सेवक उन चरणो के, जो आज्ञा सिर धरने वाले॥
फिर उसी समय भूपाल ने जा, श्रीराम को शीश नवाया है।
और विनय सहित अति नम्र होकर, कोमल वचन सुनाया है॥

दोहा (राजा)

निस्सन्देह मैंने किया, आज महा अपराध।
किन्तु दर्शन आपने, दिये अहो धन्यवाद॥

क्षमा सभी अपराध करो, फिर आप पधारो महलो में।
शुभ उत्तम बुद्धि कहां प्रभु, हम जैसे बन चर बैलो मे॥

सब इच्छा पूर्ण हुई मेरी, और प्रतिज्ञा बनमाला की।
ओर बीच मे जो कुछ विघ्न पड़ा, यह हुई समय की चालाकी ॥

दोहा

आपने निज कर्त्तव्य किया, हमें नहीं कुछ रोष।
अनुचित जो इसमें हुआ, सब कर्मों का दोष ॥
किन्तु घाव भर जाने पर, पीड़ा का नाम निशान नहीं।
जब दिल मे प्रेम उमड़ अवे, फिर वहाँ विरोध का काम नहीं ॥
यह सब दुनिया का चक्कर, एक व्यवहार मात्र से चलता है।
व्यवहार का जो अपमान करे, वही अपने कर मलता है ॥
कभी दृष्टि दोष से हितकारी भी, अरि नजर में पड़ता है।
उल्टे का सीधा बन जाता, जब पुण्य सितार चढ़ता है ॥
यह देवी बनमाला बैठी, राजन् अपने सग ले जाओ।
अब निर्भय हमने किया तुम्हें, कुछ भय न जरा मन में खावो ॥

दोहा

तन मन प्रसन्न भूपाल का, सुनकर अमृत बैन।
हाथ जोड़ कर नम्र हो, लगा रस तरह कहन ॥
कृपा सिन्धु कृपा निधान अब, गृह को चल क पावन करें।
इन शुष्क हृदयों के लिए आप, अमृत वर्षा का आवन करें ॥
अष्टांग ज्योतिषी से चलकर, अब साहे को सुधवाना है।
फिर लक्ष्मण जी संग, बनमाला का जल्दी विवाह रचना है ॥

दोहा

विनती करके ले गया, राज महल मे साथ।
उत्सव नगरी मे हुआ, सभी नमावे माथ ॥
सेवा करी राम लक्ष्मण सीता की, और सम्मान दिया।
रघुकुल दिनेश को सिंहासन पर, बैठाकर प्रणाम किया ॥

जब सभा ऐन भरपूर हुई, दर्शक जन दर्शन करते है।
उस समय 'महीध्रर' भूप राम, आगे यो गिरा उचरते है।

दोहा (राजा)

नम्र निवेदन है यही, सुनिये कृपा निधान।
किस दिन होना चाहिये, शादी का सामान॥
बोले राम सुनो राजन् , इस समय विवाह का काम नहीं।
भ्रमण हमारा बन मे है, और निश्चय कोई धाम नही॥
उसी समय सब कुछ होगा, जब पुरी अयोध्या आवेंगे।
बस विदा करो अब तो हमको, जहां लगा ध्यान वहां जावेंगे।

दोहा

इतने मे एक दूत झट, आया सभा मंझार।
ऐसे महीधर सामने, खोला कथन पिटार॥

दोहा (दूत)

क्षत्रिय कुल मणिमुकुट, संकट भंजन हार।
कृपा सिन्धु मेरी करो, नमस्कार स्वीकार॥
गौरवशाली भूपति, शूरवीर सिर ताज।
विन्ध्या पुरवर नगर से, आया हूं महाराज॥
अति वीर्य नृप ने है भेजा, उनका प्रणाम बताता हूं।
मै आया हूँ जिस कारण सारा, भेद खोल समझाता हूं॥
भरत भूप सङ्ग रणभूमि मे, युद्ध नित्य अति जारी है।
अवधेश भरत की सेना, अब तक हटी न जरा पिछाड़ी है॥
श्री भरत संग भूप बहुत आये, कुछ कहा न जाता है।
जहाँ युद्ध हो रहा घोर शब्द सुन, फलक जमी लर जाता है॥
अब दल बल लेकर चलो, भूप ने आप को जल्द बुलाया है।
बस आपके वहां पहुँचते ही, होगा निज पक्ष सवाया है॥

चौपाई (दूत)

काम पड़े पर करे सहाई, सोही मित्र जगत के माहीं।
विपद समय करे टालमटोला, सो तो पोल ढोल सम बोला॥

दोहा

मन में सोचा भूप ने, बने किस तरह काम।
हॉं ना कर सकता नही, बैठे लक्ष्मण राम॥
महीधर पड़ा विचार में, बोल उठे श्रीराम।
अहो दूत कहो किस लिये, लगा होन संग्राम॥

कहे दूत महाराज समझ, मेरी मे ऐसा आता है।
नृप अतिवर्य बलवान, भरत को आन मनाना चाहता है।
निर्भय स्वामी बलवान् हमारा, भरत भूप कोई चीज नहीं॥
है देर इन्हीं के जाने की, शत्रु का मिलना बीज नही।

दोहा

बुद्धिमान् शत्रु भला, शठ मित्र दुखदाय।
जैसे नीम से रोग क्षय, प्राण की पाक से जाय॥
कहे दूत से महीधर, दल बल कर तैयार।
आते हैं जा कर कहो, रण भूमि मंझार॥

छन्द

दूत भेजा उधर को, फिर राम से कहने लगा।
समझाके आऊं मित्र को, विश्वास यों देने लगा॥
शठता करी अतिवीर्य ने, जो भरत से झगडा किया।
वाघने विग्रह का मानो, सिंह को न्यौता दिया॥
मर्म कुछ जाना नहीं, युद्ध भरत से करने लगा।
जिनका हूं मैं सेवक मदद, मुझसे ही फिर चाहने लगा॥

जाता हूँ संधि परस्पर दोनो की मै करवाय दूं ।
यदि माना नहीं अतिवर्य तो, फिर मान सब गिरवाय दूं ॥

सुन राम बोले बात यह, हमको नहीं मंजूर है।
सब विकल चित बनता वहां, जहां पर बजे रणतूर है ॥

दोहा (राम)

हम जाते है उस जगह, पुत्र तेरा ले साथ।
आप कष्ट ना कीजिये, है स्पष्ट यह बात ॥

क्या शक्ति थी नट जाने की, झट वचन भूप ने मान लिया ।
कुछ सेना राम ने कुंवर सहित, ले उसी तरफ प्रस्थान किया ॥

हम आते है अतिवीर्य को, लक्ष्मण ने पत्र पठाया है।
और नगरी नंदा वर्त पास, जा तम्बू डेरा लाया है ॥

दोहा

देवी उस उद्यान की, कहे राम से आन।
मुझ को भी कर दीजिये, आज्ञा कोई प्रदान।

तुम लायक कोई काम न, बोले राम नरेश।
तब देवी कहने लगी, कुछ तो देवो आदेश ॥

यदि प्रबल इच्छा तेरी, तो कर इतना काम।
सेना सब ऐसे लगे, जैसे नार तमाम॥

फौज जनानी कर दई देवी ने तत्काल।
आश्चर्य मे लीन हो, जो कोई देखे हाल ॥

तब अतिवीर्य ने सुना फौज, आई तो अति हर्षाया है।
और किया पूर्ण विश्वास महीधर, मदद हेत खुद आया है।

लगा पता फिर थोड़ी सी. कुछ फौज जनानी भेजी है।
वह देख हाल अतिवीर्य को, आई झट अतितर तेजी है ॥
उपहास्य किया कोई कहे, महीधर भेजी फौज जनानी है।
विश्वासघात किया कोई कहे, कृतघ्नता दिल में ठानी ॥
फिर अतिवीर्य ने मन्त्री जन को, ऐसा हुक्म सुनाया है।
सब वापिस करदो सेना, यह क्या दुष्ट ने स्वांग रचाया है ॥
फिर द्वारपाल ने आकर के, इतने में अर्ज गुजारी है।
सब फौज जनानी तेजा से, घुस रही नगर मंझारी है ॥
घृत सिंचित अग्नि जैसे, एक दम से लपट दिखाती है।
या यों समझो जैसे लकड़ी, जल भुन कोयला बन जाती है ॥

दोहा

यों जल भुन कर भूपाल ने, आज्ञा दी तत्काल।
अर्धचन्द्र धक्का देवो, सब को बाहर निकाल ॥

जब सुभट गये धक्के देने, तो उधर मोर्चा अड़ा खड़ा।
अब लगी लड़ाई होने वहां, कहीं शीश और धड़ कहीं पड़ा ॥
हो रहा घोर संग्राम जहां, नृप हस्ती पर चढ़ आया है।
उस नारी फौज का देख तेज, अतिवीर्य दिल घबराया है ॥
फिर अतिवीर्य ने ललकार दई, आगे निज कदम बढ़ाये हैं।
अब फेर हौसला किया शूरमे झूझ एकदम आये है ॥
उधर शूरमा ललकारे, टङ्कार धनुष लक्ष्मण लाया।
मैदान छोड सब फौज भगी, नृप लक्ष्मण के काबू आया ॥

छंद

केश पकड़े अनुज ने बांधा है, मुश्क चढ़ाय के।
जा राम पे हाजिर किया, बाकी भगे घबराय के ॥

संकोच माया का किया, देवी ने सब नरतन हुवे ।
देखे तो क्या श्रीराम लक्ष्मण है, खड़े दर्शन हुवे ॥

श्रीराम के चरणों मे पड़ा, अतिवीर्य नृप तत्काल है ।
बोले क्षमा मुझ को करें, सब आप का धन माल है ॥
कुछ ज्ञात मुझको था नहीं, हे नाथ तुम ही हो खड़े ।
अन्याय का फल मिल गया, और धूर भी मम सिर पड़े ॥

दोहा

श्री राम कहने लगे, अति वीर्य सुन बात ।
जैसा मुझको भरत है, वैसा तू भी भ्रात ।

क्षमा किया अपराध सभी, अब आगे जरा विचार करो ।
तुम भरत भूप से सन्धी करके, निर्भय अपना राज्य करो ॥
अतिवीर्य कहे महाराज सुनो, अब दिल दुनिया से विरक्त हुवा ।
अब यौवन गया बुढ़ापा है, तप संयम ध्यान मे चित्त हुवा ।

चौपाई

राज विजय रथ सुत को दिया । सिंह गुरु पे संयम लिया ॥
तज जंजाल हुए मुनि राज । तप जप किया निज आत्मकाज ॥

दोहा

भरत भूप की आन मे, किया विजय रथ राय ।
दारुण दुःख सब दूर कर, झगड़ा दिया मिटाय ॥

नृप विजय रथ ने बहन रतीमाला, लक्ष्मण को परणाई ।
और विजय सुन्दरी भगिनी दूसरी, भरत भूप को है ब्याही ॥
बस फेर वहां से चले राम, संग सेना विजय पुरी आई ।
नृप महीधर ने सम्मान किया, वनमाला मन मे हर्षाई ॥

दोहा

महीधर से आज्ञा लई वन जाने की राम ।
लक्ष्मण से कहने लगी, सा वनमाला ताम ॥
प्राणदान दातार तुम, अब क्यों तजो निराश ।
दासी की यह विनती, चलूं साथ वन वास ॥

छन्द

दुख विरह का अतुल यह मुझसे सहा नहीं जायगा ।
याद कर कर आप की यह मन मेरा घबरायगा ॥
सीता की सेवा में करूंगी तुम करो श्रीराम की ।
सोच ले मन में जरा, मैं तो हूं साथिन जानकी ॥
बोले अनुज अयि भामिनी, ज्यादा न हठ अब कीजिये ।
वापिसी में साथ लेंगे मन को तसल्ली दीजिये ॥
समझाया वनमाला को लक्ष्मण राम आगे को चले ।
थकती जहाँ सीता वहाँ विश्राम लेते द्रुम तले ॥

दोहा

वन खंड से आगे बढ़े, क्षेमा जल पुर पास ।
उद्यान देख कहने लगे, मिला दृश्य यह खास ॥
थे बाग जलाशय स्वाभाविक, अद्भुत ही रङ्ग दिखाते हैं ।
क्या यही स्वर्ग का टुकड़ा है, जो कवि कथन कथ गाते हैं ॥
उसी जगह विश्राम किया, फल फूल अनुज कुछ लाये हैं ।
फिर संस्कार किया सीता ने, सिया राम अनुज ने खाये हैं ॥
जब अहार किया फल फूलों का बस और नहीं दरकार रही ।
सब देख देख खुश होते हैं, नहीं मिला दृश्य यह और कहीं ॥
फिर अनुज राम की आज्ञा पा, नगरी की सैर सिधाया है ।
नृप शत्रु दमन की प्रतिज्ञा का भेद अनुज ने पाया है ॥

शत्रु दमन प्रतिज्ञा

छन्द

भेद सब एक मनुष्य से श्री अनुज ने पूछा तभी।
वृत्तान्त यह उस पुरुष ने लक्ष्मण को समझाया सभी॥
शत्रु दमन राजा यहां, शक्ति का न कोई पार है।
भूप है आधीन कई, सब का यही सरदार है॥
है जित पद्मा पद्मनी, प्रत्यक्ष पुत्री भूप की।
तुलना न कर सकता कोई, उस पुण्य रूप अनूप की॥
मेरी शक्ति का बार अपने, तन पर सह लेगा कोई।
जित पद्मा मेरी पुत्री को, फिर विवाहेगा वही॥
आज तक आया न कोई, सहने को शक्ति भूप की।
मौत के बदले कोई, करता न चाहना रूप की॥
सुन अनुज लाई चोट, धौंसे पर करी न वार है।
फिर वहां पहुँचे लगा था, खास जहां दरबार है॥
देखी शोभा अनुज की, बांकी अदा का जवान है।
शत्रु दमन कहने लगा, मुझ को बता तू कौन है॥
कहे लखन दूत मैं भरत का, स्वामी के आया काम हूँ।
प्रतिज्ञा पूरी करने तेरी, आ गया इस धाम हूँ॥

दोहा

क्रोध भूप को आ गया, सुना दूत का नाम।
राज पुत्र बिन और को, विवाहना अनुचित काम॥

यह होकर दूत भरत का, मेरी पुत्री ब्याहने आया है।
तो समझ लिया मैंने अब इसके, काल शीश पर छाया है॥

अब मारूं एक तान शक्ति इसको, पर भव पहुँचा देऊं।
जो शक्ति इसका नाश करे, पहिले वह इसे दिखा देऊं ॥

दोहा (शत्रुदमन)

जो शक्ति सहनी पड़े, उसको जरा पहिचान।
परभव को पहुंचायगी, जिस दम भारी तान ॥

दोहा (लक्ष्मण)

सह सकता हूँ पॉच मैं, कौन चीज है एक।
परीक्षा अब कर लीजिये, खड़ा सामने देख ॥

फिर क्रोधातुर हो अति भूप ने, शक्ति हाथ उठाई है।
और देख सूरत उस लक्ष्मण की, जनता सारी घबराई है ॥
यह देख वार्ता एक दम सब, लक्ष्मण जी को समझाते हैं।
और बोली पद्मा उधर पिता से, क्यों यह प्राण गंवाते है ॥
बस यही हो चुका पति मेरा, इसके संग शादी कर दीजे।
न ब्याहूं और किसी को भी, यह शक्ति हाथ से धर दीजे ॥
जैसे घी डाला अग्नि में, भूपाल को ऐसे क्रोध चढ़ा।
निज शक्ति लाकर सभी, अनुज पर राजा ने प्रहार जड़ा ॥
किये दो प्रहार भुजाओ पर, और दो हाथो पर मारे हैं
लख आश्चर्य मे भूप हुआ, हैरान सभासद सारे है।
सोचा कि कहता दूत किन्तु, यह दूत नजर नहीं आता है ॥
यह शक्ति में बलवीर अतुल, जो तनिक नहीं घबराता ॥

दोहा

मन ही मन मे भूप को, आश्चर्य हुआ अपार।
मुस्काता हुआ इस तरह, बोला वचन उचार ॥

प्रहार पांचवां अब लड़के, हम तुझे माफ फर्माते हैं।
तब बोले अनुज क्यों मेरे, क्षत्रापन को बट्टा लाते है ॥

प्रहार पांचवे की नृप ने, फिर सरपे चोट लगाई है।
कुछ असर नहीं हुआ लक्ष्मण पर, यह देख सभा हर्षाई है॥

दोहा

राजकुमारी ने तुरत, पहिनाई वर माल।
परणो अब पुत्री मेरी, यो बोलो भूपाल॥
अनुज कहे उद्यान मे, बैठे है श्रीराम।
सेवक हूँ रघुवीर का, करूं बताया काम॥

श्रीराम सिया लक्ष्मण जी है, सुन राजा मन मे हर्षाया।
फिर विनय सहित तीनो को, अपने महलों के अन्दर लाया॥
अति प्रेम से भोजन करवाकर, भूपति ने प्रेम बढ़ाया है।
फिर आज्ञा ले श्रीरामचन्द्र जी, आगे को चल धाया है॥

दोहा

चलते-चलते आ गया, वंशस्थल गिरि देश।
वंशस्थल पुर नगर मे। पहुचे रामनरेश॥

निग्रन्थ मुनि

दोहा

नर नारी उस नगर के, देखे सभी उदास।
पूछा तब श्रीराम ने, बुला मनुष्य एक पास॥

कहे मनुष्य महाराज रात को, शब्द भयानक होता है।
और साथ एक तूफान चले, वह कष्ट सहा नहीं जाता है॥
दिन को यहाँ श्याम होते, कही और जगह जा सोते है।
उस महा उपद्रव से नरनारी, बच्चे बढ़े रोते है॥

दोहा

श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा, देखो सब रंग ढग।
जल्दी आकर के कहो, चले फेर हम संग ॥

छन्द

यह कथन सुन श्रीराम का, लक्ष्मण जी देखन को चला।
दो मुनि आये नजर, कुछ और ना वहां पर मिला ॥
लक्ष्मण ने आकर हाल जो, देखा था सब बतला दिया।
श्रीराम ने मुनियों के जा, चरणों मे डेरा ला लिया ॥

दोहा

विधि सहित वन्दना करी। पांचो अङ्ग नमाय ॥
कुछ दूरी पर द्रुम तले, बैठे आसन लाय ॥
श्रीराम बजाते हैं वीणा, लक्ष्मण सुरताल उच्चार रहे।
उस जंगल मे हो रहा मंगल, निज शुक्ल ध्यान मुनि धार रहे ॥
अनल प्रभसुर ने रात्रि में, रूप भयङ्कर किया भारी।
तूफान सहित सुर शब्द भयानक, करता आ रहा दुखकारी ॥

दोहा

मुनियों को देने लिये, दुख आया बैताल।
रूप भयानक अति बुरा, जैसे कोपाकाल ॥
श्रीराम सिया लक्ष्मण बैठे है, पुण्य प्रताप प्रचण्ड बड़ा।
सुर सह ना सका उस तेजी को, इस कारण उल्टा कदम पड़ा ॥
शुभ शुक्ल ध्यान शुद्ध होने से, मुनिजन को केवल ज्ञान हुआ।
जहाँ उत्सव करने सुरपुर से, देवो का आवागमन हुआ ॥
करके ज्ञानोत्सव देव सब, निज निज स्थान सिधाये हैं।
फिर विधि सहित कर नमस्कार, सियाराम ने शीश नमाये है ॥

यों बोले राम कहो भगवन, कारण था कौन उपद्रव का।
कृपया यह सब फरमा दीजे, मिट जावे भ्रम सभी दिल का ॥

दोहा

कुल भूषण कहे केवली सुनिये सभी स्वरूप।
पद्मनी नामा नगरी मे, विजय पर्वत भूप ॥

अमृत स्वर मतिवन्त दूत, उपयोगां जिसकी नारी थी।
और उदित मुदित दो पुत्र जिन्हो की, रूपकला कुछ न्यारी थी ॥
वसुभूति एक मित्र दूत का, उपयोगा पर आशक था।
वह जाति का था उच्चवर्ण मिथ्यामत धर्म उपासक था ॥

दोहा

प्रेमी को कहे प्रेमिका, अमृत स्वर को मार।
खटका सब मिट जायगा, भोगें सुख अपार ॥

एक दिवस भूप ने दूत काम, करने को कहीं पठाया था।
वसुभूति ने मार्ग में अमृत, स्वर परभव पहुंचाया था ॥
फेर अधम ने आकर, उपयोगा को यों समझाया है।
तू पुत्रो को दे मार बढ़े फिर राग यही मन भाया है ॥
यह लगा पता जब उदित मुदित को, क्रोध वदन मे छाया है।
वसुभूति को परभव पहुँचाने, का सब ढंग रचाया है ॥
उदित कुंवर ने एक समय वसुभूति परभव पहुंचाया।
मर इषदानल पल्ली मे, वसुभूतिने भील जन्म पाया ॥
वैराग्य भूप को हुआ छोड़, ससार ध्यान तप जप लाया।
सब शत्रु मित्र समान मुनिने. तजा क्रोध लालच माया ॥
सग उदित मुदित भी हुवे मुनि, निज आत्म कार्य सारन को।
मार्ग मे आ वही भील मिला, मुनिजन को धाया मारन को ॥
तब पल्ली पति ने छुड़वाया, गुण जनमात्र का माना है।

कुछ पल्ली पति और उदित कुवर का, पूर्व हाल सुनाया है ॥
जमीदार था जीव उदित का, पल्लि पति वहाँ पत्ती था।
छुड़वाया लुब्धक से जो, इसके भक्षक का आकांक्षी था ॥
पत्ती पल्लि पति आन हुआ, अनमोल मनुष्य तन पाया है।
और जैसी संगति मिले बने, वैसा ही मन वच काया है ॥

वह कृपक जन्मा उदित आन, और मुदित दूसरा भाई है।
इस कारण अण गारो की, पल्लि पति ने जान बचाई है ॥
उदित मुदित ने तप संयम को, आराध किया संथारा है।
महा शुक्र मे जा देव हुए, सुर करते जय जय कारा है ॥
जन्मान्तर से वसुभूति भी, नरतन को धार आ तापस।
अज्ञान कष्ट जिन किया बहुत, तन मे था भरा हुआ तामस ॥
मिथ्या मति का आ भरमाया, संसार बंधन का हेतु है।
वह उपना ज्योतिष्य चकर मे, जा देव धूसवर केतु है।

दोहा (कुल भूषण)

अरिष्ट पुरी नगरी भली, प्रियनन्दी भूपाल।
पटरानी पद्मावती, सुन्दर रूप रसाल ॥

उदित मुदित ने महाशुक्र तज, पद्मावती के जन्म लिया।
जहाँ राज पाट सुख आन मिला, पूर्व शोभन था कर्म किया ॥
श्री रत्नरथ और चित्ररथ, दोनों का नाम कहाया है।
छोटी रानी के उदर धूमकेतु, ने जन्म आ पाया है ॥

रखता था, विरोध निज भाइयो से, और अनुधर नाम कहाया है।
रत्नरथ को ताज दे नृप ने, संयम ध्यान लगाया है ॥

तप जप निर्मल कर राजऋषिने, उच्च देव पद पाया है।
अब सुन लीजे दशरथ नंदन, आगे जो हाल बकाया है ॥

श्री प्रभ नाम एक अन्य भूप के, सुन्दर राज दुलारी थी।
अनुधर कहता था मुझे विवाह दो, उसको यही वीमारी थी॥
नृप ने न विवाही अनुधर को, किसी अन्य भूप को परणाई।
जब आस निरास हुआ अनुधर, तो मन मे अति अरती आई॥
फिर लगा उजाडन देश भूप का, क्रोध में अन्धा बना हुआ।
शिक्षा न हृदय में धरी किसी की, मान मे ऐसा तना हुआ॥
तब पकड़ एक दिन राजा ने, निज कैद मे उसे ठुकाया था।
फिर रत्न रथ भूप ने आकर, उसको तुरत छुड़ाया था॥
जा बना तापसी तापस के डेरे, नहीं घर मे आया है।
अशुभ कर्म की चाल सदा, उल्टी श्री जिन फर्माया है॥
प्रमाद महा शत्रु आत्म को, सदा महा दुःख देता है।
और सम्यक्त्व धारी जीव कोई, शुद्ध ज्ञान चारित्र लेता है॥

दोहा (कुल)

बाल कष्ट वहाँ पर किया, फेर भ्रमा संसार।
कभी पशु कभी नर्क में, फिर तापस अवतार॥

अज्ञान कष्ट महा तप किया, करी कुगुरु की सेव।
अन्यतम जोतिष चक्र मे, अनल प्रभु हुवा देव॥

उधर रत्नरथ और चित्ररथ, दोनो ने संयम धारा है।
हुए अतिबल महाबल नाम बारहवे, स्वर्ग गये सुख भारा है॥
सुरपुर तज विमला रानी के, फिर हम दोनों ने जन्म लिया॥
कुल भूषण और देश भूषण, व्यवहार मात्र यह नाम दिया।

छन्द

बालपन्न से मात पितु ने, भेज हम गुरुकुल दिये।
अचार्य के वर्ष बारह तक, हमे सुपुर्द किये॥

विद्या गुरू वर घोष, फिर लाया हमें नृप पास है।
राजा ने फिर परीक्षा लई. दरबार लाकर खास है॥
बहु पारितोपिक दिया, भूपाल ने सम्मान से।
खुश कर दिये गुरु को पिता ने, सार प्रीति दान से॥
फिर पास माता के चले. हम शीश पितु को नाय के।
मता और बहनें नगर की, बैठी बहुत वहाँ आय के॥
एक महल पर बैठी दुलारी, नजर उस पे जा पड़ी।
हम अनुराग से देखन लगे, सूरत है क्या अद्भुत घड़ी॥

दोहा (कुल भू०)

माता को हमने करी, चरणों मे प्रणाम।
फिर पूछा यह कौन है, कहा मात ने ताम॥

अय पुत्र तुम्हारे पीछे से, जन्मी यह राजदुलारी है।
तुम रहते थे गुरुकुल मे यह, एक छोटी बहिन तुम्हारी है॥
हमने जब सुना बहिन अपनी, मन विरक्त हुआ सब भोगों से।
और समझ लिया नहीं बच सकते, दुनियां में ऐसे रोगों से॥

दोहा

राग किया निज बहिन पर, जो नहीं करने योग्य।
इस कारण हमने तजा, राज पाठ संयोग॥

यह धार लिया संयम हमने, फिर आत्म ज्ञान अभ्यास किया।
महा घोर प्रतिज्ञा धारी थी और कई मास उपवास किया।
फिर करते उग्र विहार इसी नगरी, आ ध्यान लगाया था।
मरने जीने की आशा तज, कायोत्सर्ग ध्यान जमाया था॥
और पिता धार अनशन पीछे. महा लोचन गरुड़ हुआ सुर वह।
जब अवधि ज्ञान से देखा हमको, आने को था गिरी ऊपर वह॥

था उसी समय श्री अतिवीर्य, मुनिराज को केवल ज्ञान हुआ।
यह पिता देव गया उत्सव पर, संग अनल प्रभ का ध्यान हुआ॥

चौपाई

उत्सव ज्ञान अधिक प्रकाशा, दया धर्म अमृत मुनि भाषा।
मानव देव परिषदा मांही, पूछत प्रश्न एक मुनि राई॥
अबके किस की संख्या आवे, जो मुनि केवल ऋद्धि पावे।
कृपया कर कहो अन्तर्यामी, कौन मुनि होगा शिवगामी॥

दोहा

ध्यानस्थ मुनि दो है खड़े, वंशस्थल के पास।
उन दोनो मुनि जनो को, होगा ज्ञान प्रकाश॥

सर्वज्ञ देव ने फर्माया, कुल भूषण और देश भूषण।
शुभ ज्ञान दर्श चारित्र तप, चारो मे नहीं कोई दूषण॥
केवल ज्ञान उन्हे होगा यह, अनल प्रभ ने सुन पाया है।
और उसी समय क्रोधातुर हो, उपसर्ग देने को आया है॥

दोहा

नित्यप्रति करता था यहाँ, शब्द भयानक आन।
और वैक्रिय शक्ति से, लाता था तौफान॥

कई दिवस हो गये किया, उपसर्ग बहुत दुखकारी है।
यहाँ केवल ज्ञान मे विघ्न हुआ, विपदा लोगो पर डारी है॥
अब देख तुम्हे सुन अनल प्रभ, हट गया पिछाड़ी घबराकर।
जब शुक्ल ध्यान निर्विघ्न हुआ, केवल प्रगटा हमको आकर॥

दोहा

सुन वाणी सर्वज्ञ की, प्रसन्न चित्त अवधेश।
उसी समय चरणन गिरा, साधी सेव विशेष॥

झट महालोचन सुर ने आकर, सिया राम से प्रेम बढ़ाया है।
कुछ प्रत्युपकार करूं मैं भी, ऐसे मुख से फर्माया है॥
बोला कुछ सेवा बतलाओ, जो इच्छा आपको देवेंगे।
तब बोले राम जब इच्छा होगी, याद तुम्हें कर लेवेंगे॥

दोहा

ज्ञानोत्सव करके गये, सुर निज निज स्थान।
तैयार हुए श्रीराम भी, करने को प्रस्थान॥
वंशस्थल पुरपति आन, चरणों मे शीश नमाता है।
श्रीराम को ठहराने लिये, विनती जनता से करवाता है॥
रामगिरीधर दिया नाम पर्वत का, सबने उस दिन से।
उत्सव हुआ अति भारी, और दान दिया खुले दिल से॥
अतिथियों के विश्राम हेत, प्रसाद वहाँ बनवाये हैं।
फिर समय देख श्री रामचन्द्र, ने आगे कदम बढ़ाये है॥

दंडकारण्य प्रकरण

चौपाई

उद्दंड दंडकारण्य अति आया, ❀प्रबलसिंह सम भय नहीं खाया।
गिरी गुफाघृह मानिंद पाया, ❀अब कुछ निश्चल आसन लाया॥
एक दिवस भोजन के बेले, ❀चारण मुनि दो पुण्य समेले।
द्विमासिक तप से तन सोहे, ❀त्रिगुप्त सुगुप्त नाम मन मोहे॥

दोहा

भोजन गृह में समय पर, बैठे दोनो भ्रात।
संस्कार सीता किया, बड़े प्रेम के साथ॥
बड़े प्रेम के साथ सिया ने, व्यंजन सभी बनाये है।
दो लब्धी धारक मुनि, वहां पर लेन पारणा आये है॥

देख मुनि श्री रामसिया, लक्ष्मणजी अति हर्षाये है ।
और उसी समय कर नमस्कार, तीनों ने आहार बहराये है ॥

दौड़

समागम मुश्किल पाया, चरणन गिर शीश झुकाया ।
दान देवो मन भाया, खुशी मे आकर देवो ने भी गंधोदक बर्षाया ॥

जटायु पक्षी

दोहा

अहो दान उद्घोषणा, करे व्योम मे देव ।
भेट करें कुछ राम की, सोचे अमर स्वयमेव ॥

अश्व सहित रथ दिया अचित एक रत्नजटी खेचर सुरने ।
गंधोदक वृष्टी करके सब, देव गये निज निज घरने ॥
यहां बार बार मुनि चरणन मे, रघुपति ने शीश नमाये है ।
गई फैल वासना गंधोदक की, सभी जीव सुख पाये है ॥

दोहा

गंधोदक की वासना, फैली बन मंझार ।
गंधाभिध नामक पक्षी, के साता हुई अपार ॥

साता हुई अपार जिस्म मे, लगी दाह थी भारी
पुण्य उदय चल आया, जहाँ थे राम मुनि तपधारी ॥
बैठ वृक्ष पर देख रहा था, लम्बी नजर पसारी ।
जाति स्मरण हुआ ज्ञान, भावना दिल मे शुद्ध विचारी ॥

दौड़

दृष्टि गई पूर्व जन्म में, तुरत फिर गिरा धरन मे ।
उठा सीता ने कर मे, मुनि चरणन गेरा पक्षी,
था भरा रोग तन पर मे ॥

दोहा

लब्धी धार मुनि के, चरण फरसे पक्षी ताम ।
देह कंचन वर्णी हुई, देख अचंभे राम ॥
देख अचंभे राम फेर, मुनि आगे अर्ज गुजारी ।
कौन कर्म का फल प्रभु इसने, भोगी विपदा भारी ॥
पूर्व हाल बतलाओ इसके, इच्छा यही हमारी ।
गला सड़ा जो तन था इसका, अब सुन्दर हितकारी ॥

दौड़

सुगुप्त मुनि यो फरमावे, कर्म के फल बतलावे ।
ध्यान सिया राम लगावे, खंदक दंडक पालक के,
सब भेद खोल दर्शावे ॥

श्री स्कंधकाचार्य चरित्र-अधिकार

नृप था सावस्थी नगर में, जित शत्रु बलवान ।
रानी जिसके धारिणी, शोभन गुण की खान ॥
धर्म न थी गुणवान पुत्र, एक जन्मा खंधक प्यारा ।
चौसठ कला प्रवीण, पुरंन्दर यशा पुत्री सुखकारा ॥
बहत्तर कला का ज्ञाता, स्कंदक जैन धर्म का प्यारा ।
रंग मंजीठी चढ़ा धर्म का, चर्चावादी भारा ॥

दौड़

कुम्भकार कट नगरी, दंडक राजा क्षत्री ।
पुरंदर यशा को ब्याहा, अब देखो आगे,
गति कर्म की कैसा रंग खिलाया ॥

दोहा (सुगुप्त मुनि)

पालक एक बजीर था, नास्तिक दुष्ट स्वभाव ।
धर्म ध्यान भावे नही, लाखो करो उपाय ॥
दंडक नृप ने एक, दिन भेजा पालक काम ।
जित शत्रु भूपाल पे, ले आया पैगाम ॥
ले आया पैगाम भूपने, सेवा की हित करके ।
धर्म स्थान ले गया दिलावे, शिक्षा इसे दिल धरके ॥
सुन कर्म धर्म सबही का, हृदय कमल अति हर्षे ।
मिथ्या वस पालक सुन, निंदा करे क्रोध मे भरके ॥

दौड़

निंदा सुन खंधक आया, तुरत शास्त्रार्थ लगाया ।
हुई तब चर्चा जारी, अन्त मे पालक हुआ निरुत्तर
खिष्ट सभा मे भारी ॥

दोहा (सुगुप्त)

हार सभा के बीच मे, गया स्वदेश मंझार ।
उपहास्य देख अपना अति, दिल मे द्वेष अपार ॥

चौपाई

खंधक का दिल हुआ वैरागी, पर उपकार करूं लवलागी ।
आज्ञा लेने माता पै आये, तब माता ने बचन सुनाये ॥
जान हथेली जो धरे, वह ले संयम भार ।
यदि पीछे गिरना पड़े तो, उससे भली बेगार ॥
उससे भली बेगार, क्योंकि, यहाॅ कष्ट समूह को सहना है ।
यदि कोई गर्दन पर धरे, तेग तो दीन वचन नहीं कहना है ॥
रागद्वेष दो कर्म बीज को, दिल में जगह न देना है ।
कोई कष्ट आनकर पड़े जिस्म पर, सम प्रणामे सहना है ॥

दौड़

न दृष्टि लोटावे, पैर आगे को बढ़ावे।
भीरुता दूर भगावे, प्रतिज्ञा पर रहे दृढ़ चाहे,
खेल जान पर जावे ॥'

दोहा (माता)

कहे श्री सर्वज्ञ ने, अष्ट प्रवचन सार।
इनको धारे बिन कोई, हुआ न भव से पार ॥

पाँच सुमति और तीन गुप्ती को, हरदम हृदय लाना है।
कहीं नीरस सरस जो मिले आहार, सब सम प्रणाम से खाना है ॥
कर्म जंग मे अड़कर के फिर, मरने से नहीं डरना है।
इस गंदे जिस्म की खातिर, क्षत्रिय कुल दागी नहीं करना है ॥

दौड़

एक दिन सबने मरना, धर्म बिन और न शरणा।
भाव ये हृदय मे धरना, चक्री तीर्थंकर गये छोड़,
यहाँ अमर किसी का घर ना ॥

गाना नम्बर ४४ (माता का स्कंधक कुमार को समझाना)

तर्ज—(निहालदे की)

बासी भी खाना मेरे स्कंधक, जमी का सोवना।
कठिन यह वृत्ति मेरे, स्कंधक सहने का नाही ॥
कटुक वचन मेरे बेटा, जब बरसेंगे बाण सम।
बाईस परिषह मेरे बच्चे तू, सहने का नाहीं ॥
चार महाव्रत धारणे होंगे, भाव से।
जीवित ही मरना है बेटा धरणी की न्याईं ॥

दोहा (खंधक)

माता तेरे सामने, लई प्रतिज्ञा धार।
सम दम खम को धारके, करूं धर्म प्रचार ॥

करूं धर्म प्रचार पूर्ण, कर्तव्य सभी कर दूंगा।
चाहे सिर कट जाय किन्तु, पीछे नही कदम धरूंगा ॥
सत्याग्रह अनादि नियम, जैन का हृदय यही धरूंगा।
धर्म प्रचार के लिये मात, कुर्बान जिस्म कर दूंगा ॥

दौड़

मुनि का बाना पाऊं, देश दंडक के जाऊं।
धर्म झंडा लहराऊं, अज्ञान अंध मे पड़े जीवों को,
सत्य धर्म दर्शाऊं ॥

दोहा (सुगुप्त)

माता ले गई पुत्र को, मुनि सुव्रत स्वामी पास।
हाथ जोड़ कहने लगी, सुनो प्रभु अर्दास ॥

सुनो प्रभु अर्दास, आपको अपना पुत्र देती हूं।
मोह कर्म वध का भय मुझको, इसलिये विरह को सहती हूँ ॥
अब माता पुत्र सम्बन्ध नही, खंधक को अंतिम कहती हूँ।
इस कर्म जंग मे अड़कर, पीठ न देना शिक्षा देती हूं ॥

दौड़

माता गई घर मंझारी, पुत्र ने दीक्षा धारी।
लिये महाव्रत सुखकारी, तप जप मे हुए लीन,
गुरू के हरदम आज्ञाकारी ॥

दोहा

खंधक मुनि के पांचसौ, शिष्य अरिदल चूर ।
शान्त रूप तप संयमी, विद्या में भरपूर ।।
विद्या में भरपूर हुए, एकत्र सम्मति मेलन को ।
घर नहीं छोड़ा सुनो मुनि, ये खाली पेट भरन को ।।
वह राज्य ऋद्धि सुख तजे, सभी स्व पर उपकार करण को ।
धीर वीर गम्भीर बनो, आपत्ति सभी जरन को ।।

दौड

प्रचार को जिसने चलना, तो जान हथेली धरना ।
निश्चय है एक दिन मरना, शान्त रूप हो सहो कष्ट, पर
पीछे कदम न धरना ।।

दोहा (शिष्यमंड)

सभी हम जो पांचसौ, कर्म जंग जुभार ।
तन मन सब तुमको दिया, करो जो हो स्वीकार ।।
करो जो है स्वीकार, आपको जान हथेली धरली है ।
प्रचार कार्य में जुड़ने को, अब कमर सभी ने कस ली है ।।
जो पड़े कष्ट वह सहन करें, चाहे टूटे नस-नस पसली है ।
यह जिस्म साथ नहीं जाना, हमने सोच सभी कुछ करली है ।

दौड़

पेट तो खर भी भरले, सूर रणक्षेत्र लड़ते ।
उपसर्ग सब ही सहते, जिन आज्ञा पालन मे देवें जान,
यही दिल धरते ।।

दोहा

दृढ़ संकल्प सबने किये । खंदकादिक मुनि महान ।
आज्ञा लेने प्रभु पै गये । करी चरण प्रणाम ।।

करी चरण प्रणाम प्रभु जी, हम जावे विचरन को ।
दण्डक राजा को समझाने, और उपकार करन को ॥
सत्य धर्म स्थापन, मिथ्या, नास्तिक पाप हरन को ।
पुरन्दर यशा को दृढ़ करन, निज पूर्ण करन प्रण को ।'

दौड़

प्रभु जी यो फर्मावे, उपद्रव हो दरशावे ।
होनहार बतलावे, सिवा तेरे सब का सिद्ध कार्य,
अन्त मोक्ष मे जावे ॥

दोहा

सर्वज्ञो के वचन को, कोई न टालन हार ।
होनहार होगी वही, यह भी परोपकार ॥
यह भी है उपकार पांचसौ के सिद्ध कार्य होवें ।
धर्म काम में लगे जिस्म तो, दुख समूह को खोवें ।
करेगे उग्र विहार स्वपर आत्म सब निर्मल होवे ॥
हर व्यक्ति के दिल अन्दर, हम बीज धर्म का बोवे ।

दौड़

ज्ञान वर्षा बरसा कर, मिथ्यात्व को दूर नसा कर ।
धर्म द्विविध दर्शाकर, अज्ञान रूप वन धसे,
हस्तिगण को ज्यो सिंह भगाकर ॥

दोहा

सोचा श्री संघ ने मुनि दण्डक देश मे जाय ।
नम्र निवेदन यूं करे, चरणन शीश नवाय ॥

गाना नं० ४५ (सघं० खं०)

अर्ज श्री संघ की स्वामिन्, देश दंडक के मत जावे ।
प्रतिज्ञा टल नहीं सकती, चाहे अन्तक निगल जावे ॥

सभी नास्तिक वहां बसते, दुष्ट पापी अनाड़ी हैं।
भरे अज्ञान से हृदय, साफ कैसे किये जावे॥
बहा कर ज्ञान का दरिया, मिथ्या अज्ञान धो दूंगा।
सुधारूंगा उन्हें सह लूं, चाहे महाकष्ट आ जावें॥
स्वल्प यह लाभ है वहां का, यहां अनमोल जिंदगानी।
जिसे हम कह नहीं सकते, वही न कष्ट आ जावे॥
आत्मा सब बराबर हैं, भेद है सिर्फ कर्मो का।
उन्हे सम्यक्त्व आ जावें, यहां चाहे प्राण भी जावे॥
विनय यह सार चरणों मे, आप यदि रुक नहीं सकते।
करें प्रचार नर्मी से, कहीं न विघ्न आ जावें॥
न्याय से तो वहां अन्याय, मिथ्या जड़ को खोना है।
हटूं ना मै सचाई से, चाहे पृथ्वी उल्ट जावे॥
वचन सर्वज्ञ का सुनकर, हमारा दिल धड़कता है।
महा पापिष्ठ वह जन हैं, पाप करने में सुख पावें॥
शुक्ल क्या दोप उनका है, सभी कर्मो के पर्दे है।
खुशी हैं हम लिये उपकार के, चाहे सर भी लग जावे॥
जब नास्तिक देश के मध्य गये तो, कष्ट भयानक आने लगे।
गन्ध हस्ती गण मे ऐसे मुनि, प्रचार मे कदम बढ़ाने लगे॥
अन्याय की जड़ को काट-छांट, सद्ज्ञान का नीर बहाने लगे।
मिथ्या तम का कर नाश, ज्ञान प्रकाश मुनि फैलाने लगे॥

दोहा

नास्तिक मत के शिरोमणि, अंध पक्ष में लीन।
लगे द्वेष से तड़पने, जैसे जल बिन मीन॥

पराजित होकर शास्त्रार्थ मे, अब नीच कर्म पर तुल आये।
मुनियो पर कंकर पत्थर फेंक, गाली गलौच मुंह पर लाये॥

भयभीत हुए कई भव्य जीव, मुनियो को आ समझाने लगे।
बोले आगे मत बढ़ो प्रभु, मृत्यु का भय बतलाने लगे ॥

दोहा

ऐसे वचनो को सुना, स्कन्धक ने जिस बार।
मुनि वीर गम्भीर यो, बोला वचन उचार ॥

गाना नं० ४६ (स्कन्धकाचार्य का)

सत्य प्रचार मे यह, जान रहे या न रहे।
परोपकार मे शान, रहे या न रहे ॥ १ ॥
फैला दूंगा मै शिष्यो को, राष्ट्र भर मे।
मिथ्या विप काटने मे, कान रहे या न रहे ॥ २ ॥
ज्ञान दर्श चारित्र का, डंका बजाऊँ सारे।
पॉव पीछे न हटे, प्राण रहे या न रहे ॥ ३ ॥
भूले भटको को, बतावेगे जिनवाणी।
साफ कह देगे यह सिर, जान रहे या न रहे ॥ ४ ॥
सर्वस्व लगा कर भी, करू कर्तव्य पालन।
खाने पीने का मुझे, ध्यान रहे या न रहे ॥ ५ ॥
हरगिज न डरेगे, किसी की धमकी से।
चाहे हाथ मे मैदान, रहे या न रहे ॥ ६ ॥
सुर नर मोक्ष तिर्यञ्च, नर्क है दुनिया मे।
आस्तिक धर्म रहे, इन्सान रहे या न रहे ॥ ७ ॥
सिद्ध ईश्वर, सच्चिदानन्द परमात्म।
आन रह जाय अमिट, जान रहे या न रहे ॥ ८ ॥
शुक्ल शुभ ध्यान है, दो कर्मो को उडाने वाले।
विन शुभ ध्यान के यह, जहान रहे या न रहे ॥ ६ ॥

दोहा (सुगुप्त)

ऐसे कह कर मुनि, फैल गये चहुं ओर।
नास्तिको के हृदयो मे, मचा अपूर्व शोर॥

कही दो-दो और कहीं चार-चार, मुनियों ने धर्म प्रचार किया।
था मिथ्या भंवर में पड़ा हुआ, बेड़ा कइयो का पार किया॥
थी आज्ञा आचार्य की, कुम्भकार कट नगर मे आने की।
निर्दोष देख स्थान स्वच्छ, सब आसन वहां जमाने की॥

चौपाई

विचरत कुम्भकार कट आये। बाग बीच निज आसन लाये।
सुन पालक कुमति दिल धारी। नीच स्वभाव सूअर समवारी॥
कहे पालक यह मुनि वही आये। बदला लेऊँ कोई करूं उपाय।
पूर्व बैर कर स्मरण मन मे। जल रहा भीतर द्वेष अग्न मे॥

दोहा

मुनिवर कुछ ही सोचते, पालक सोचे और।
होनी ने अपना किया, कर्तव्य महा कठोर॥

पालक ने चारो तरफ, पहरा दिया लगाय।
दारू गोला बाग में, शस्त्र दिये गड़वाय॥

राजा को कहने लगा, पालक पापी ढोर।
राजन क्या सोया पड़ा, त्याग निद्रा घोर॥

नृप कहे मन्त्री किस लिये, इतना है हैरान।
रात समय क्यो आये हो, कह दो सकल बयान॥

राजा नीति यो कहे, करो न पल विश्वास।
धोखे में आना नही, चाहे मित्र हो खास॥

खबर नहीं कुछ आपको. स्कन्धक पहुंचा आय।
राज्य लेने के वास्ते, गुप्ती भेष बनाय ॥

मन्त्री तेरी भूल है, यह मुनि है गुण धार।
त्याग दिया ससार सब, करते धर्म प्रचार ॥

निज कर्तव्य मैंने किया, जो मुझ पर था भार।
नमक खाय कर आपका, देऊँ सलाह सुखकार ॥

देऊँ सलाह सुखकार, बाग मे चलो संग अब मेरे।
शस्त्र दारु गोला देखो, गुफिया पांच सौ चेहरे ॥
सहस्र सहस्र पर भारी है, एक शूरवीर दल घेरे।
आलस्य मे जो पड़े रहे, तो मौत पुकारी नेड़े ॥

दौड़

चलो अब देर न लावो, देख आज्ञा फर्मावो।
यदि स्कंधक न होता, कष्ट नहीं देता तुमको सब काम मैं खुद कर देता ॥

दोहा (सुगुप्त)

गद्दी के होते गधे, जिन्हे न कुछ पहिचान।
जहाँ लगाये लग गये, तज गौरव का ध्यान ॥
मन्त्री को ले बाग मे, तुरत गए भूपाल।
दारु गोला शस्त्र सब, दिखलाया जंजाल ॥
दिखलाया भ्रम जाल, भूप को चढ़ा रोष अति भारी।
सोचा यदि किया आलस्य तो, करेगा दुष्ट ख्वारी ॥

मै स्वयं यदि दूं दण्ड इसे तो, निन्दा होगी भारी।
अधिकार दिया सब मन्त्री को, मति उल्टी यही विचारी॥

दौड़

दुष्ट का भेद न पाया, भूप अपने घर आया।
मन्त्री मन आनन्द पाया, आना जाना कर बन्द बाग मे कोल्हू
तुरत लगाया॥

दोहा (सुगुप्त)

दुष्ट जनो को साथ ले, पहुँचा मुनियो पास।
बोला अब तुमको नहीं, बचने का अवकाश॥

दोहा (पालक मंत्री)

शत्रु जो होवे मेरा, और शत्रु के यार।
मारे बिन छोड़ूं नही, घानी है तैयार॥

वह दिन करले याद तू, स्कंधक राज कुमार।
पराजित मुझे तूने किया, भरी सभा मंझार॥

भरी सभा मंझार किया, अब साधु बन आया है।
प्रचार करण निज धर्म, पांच सौ शिष्य संग लाया है॥
किन्तु अब तू बच नहीं सकता, काल उठा लाया है।
अद्‌भुत ढोंग बना, भद्र लोगो को भर्माया है॥

दौड़

यदि है जान प्यारी, चार है शर्त हमारी।
फेर यहाँ कभी न आवो, कुधर्म त्याग मांगो माफी।
मम धर्म ग्रहण कर जावो॥

दोहा (सुगुप्त मुनि)

स्कंधक मुनि ने जब सुनी, पद्मान्ध की बात।
गंभीर ऋषि कहने लगे, यो गौरव के साथ॥

दोहा (स्कंधक)

पालक क्यो घबरा रहा, फिरे मचाता शोर।
प्रबल सिंह आगे नही, चले स्यार का जोर॥
नही चले स्यार का जोर, यहाँ तो सारे शेर बबर है।
क्या दिखलाता धौंस, मरण की जान हथेली पर है॥
शस्तों का रख घर अपने, यहाँ सारे मुनि निडर है।
धर्म बली देने को प्रभु ने दान बताये सिर है॥
जिस्म यह नहीं हमारा, गया कहाँ ध्यान तुम्हारा।
सोच कर करो विचारा, सत्य धर्म कर ग्रहण मिटे,
अज्ञान तिमर तब सारा॥

दोहा

इतनी सुनकर मन्त्री, जल बल हो गया ढेर।
भृकुटि मस्तक डाल कर, लिए मुनि सब घेर॥

दोहा

खदक दिल मे सोचता, यह कोई अभव्य विशेष।
मुनियो को अब दृढ़ करू, देकर के उपदेश॥
दुर्जन को सज्जन करने का, भूतल मे कोई उपाय नहीं।
घन घोर घटा कितनी बरसे, चातक की तृपा जाय नही॥
बसन्त ऋतु मे सब हंसते, नहीं पत्र करीर के आता है।
भानु की इच्छा सब करते, पर उल्लु उसे न चाहता है॥
नागर के फल का अभाव, पीपल के फूल नहीं आता है।
फणीयर को जितना दूध मिले, उतना ही विष बन जाता है॥

जिसमें न ज्ञान का अंश जरा, उस को वृथा समझाना है।
ज्यूं बहरे को सुरताल सहित, निष्कारण गायन सुनाना है॥
जन्मान्ध के आगे आँसू डाल, नेत्रो का तेज घटाना है।
व्योम के पुष्पो की चाहना, वज्र पर कमल जमाना है॥
जो महा दीर्घ संसारी अथवा, कोई अभव्य प्राणी हो।
उसको न समझा सके कोई, चाहे आप्त की वाणी हो॥

दोहा(स्कधक)

द्रव्य क्षेत्र और समय में, जैसा अवसर होय।
फिर अपने कर्त्तव्य को, सोचे बुध जन कोय॥
कर्त्तव्य वही इस समय, धर्म को अपना शीश चढ़ाना है।
अनित्य सुखो के लिए, धर्म का गौरव नही गिराना है॥
किस तरह सत्य पर वीर बली, देते है सो दिखलाना है।
वीर शान्तरस ज्ञान सुधा, मुनियो को आज पिलाना है॥

दोहा

धर्म वीर हे मुनि जनो ? सुनो लगाकर कान।
समय अपूर्व आ गया, देने को बलिदान॥

गाना नं० ४६

स्कन्धकाचार्य का मुनियो को वैराग्यमयी उपदेश

पानी का बुलबुला जान, जिस्म यह अन्त खाक रल जायेगा।
अनमोल समय यह मिला आन, जो फेर हाथ नही आयेगा॥
मैदाने ज़ंग में अड़े सूरमा, मोक्ष जागीरी पायेगा।
पीठ दिखाकर भागे जो कायर, काग मांस नहीं खायेगा॥२॥
क्रोध मान अर्ति परिष हों, से जो मुनि चल जायेगा।
विराधक हो के मरेचौरासी, चक्कर मे रुल जायेगा॥३॥

अनन्त परमाणुओं से बना मनुष्य तन, अवश्यमेव खिर जायेगा।
रत्न पदार्थ जीव शुक्ल यह, छेद भेद नहीं पायेगा ॥४॥

दोहा (स्कधक)

सुनों मुनि अब कान धर. है कोल्हू तैयार।
बांध क्षमादि शस्त्र सब, हो जावो तैयार ॥
हो जाओ तैयार क्योंकि, अब जल्दी जग जुड़ने वाला है।
तुम क्षमा खड्ग से काट क्रोध का, शीश करो मुँह काला है ॥
मोह कर्म चांडाल दुष्ट यदि, लिया मारकार भाला है।
फिर सात अरि के नाश करन को, काफी खूब मसाला है ॥
भय न कुछ मन मे खावो , धर्म को शीश चढावो।
चित को शान्त बनाओ, ध्यान शुक्ल शुभ ध्याय शान्तमय होकर धर्म बचाओ ॥

गाना नं० (४७)

(स्कंधकाचार्य का मुनियो को उपदेश)

सुनों मुनि प्यारो यह संसार असार ॥ टेर—
यह संसार सशयो का हार, होवे ख्वार जो कोई पहिने।
सुत दार नार, परिवार यार, यह जिस्म सदा स्थिर नही रहने ॥
सहे दुख अपार नर्को के द्वार, जमदो की मार दु.ख क्या कहने।
तिर्यंच भार डंडो की मार, गल छुरी धार अग्नि दहने जी ॥
जो थे जिनेश, सेवें सुरेश. इन्द्र नरेन्द्र भी आकर के।
करणी के धार केवल अपार, ससार सार सुख पा करके ॥
योधा महान, धरते थे ध्यान, देते थे ज्ञान समझा करके जी।
सुवर्ण जैसे अंग जिन्हो के, उनकी भी हो गई छार ॥सुनो॥
जो कोई मित्र को कैद से काढ़े, फंद काट आजाद करे।
मत करो गिला संयोग मिला, जा मोक्ष शिला आवास धरे ॥

जो धर्म हेत लगता है रेत, निपजे है खेत सब काम सरें जी ।
चाहे सेल बिन्धे चाहे बर्छी बिन्धे, चाहे तेग काढ़ गर्दन धरदें ॥
चाहे अग्नि बाण लोहे को लाल, करके कमाल सिर पर धरदे
चाहे घानी डाल पीले, कसाल, नेत्र निकाल कर पर धरदें ॥
दश विध का धर्म खंती का मर्म, मत रखे भ्रमदिल मे सरधो जी ।
धर्म हेत जो लगे अंग तो, मिलता है शिवद्वार ॥ सुनो ॥२॥
हो जाओ तैयार सहने को मार, नही बार बार ये जन्म मिले
हो जाओ फिदा काया से जुदा हो फर्ज अदा सब दुःख टले ।
रहता है नाम सिध होय काम, शूरा सग्राम घानी मे पीले ।
मेरु समान हो जाओ जवान, अब क्षमा खड्ग करमे गहिये
शान्ति की तेग लो पकड़ बेग, संयम की टेक रखना चाहिये
जिनजी के पूत हो राजपूत, सिर देके कजा चखनी चाहिये जी ।
शूरवीर जो रखे धर्म को, चाहे पड़ें कष्ट अपार सुनो ॥३॥
जो क्षमा करे वह नही मरे, मुक्ति को वरे करो कुर्बानी ।
यह जिस्म जान गदा महान, रोगों की खान तुच्छ जिन्दगानी ॥
है शुद्ध स्वरूप चेतन अनूप, भूपों का भूप केवल ज्ञानी ।
यह जीव जुदा नहीं होता कदा, नही जलता नहीं गलता पानी ॥
धीरज को धरो ससार तरो, मुक्ति को बरो की जे करणी ।
हो जाओ लाल चिन्ता को टाल, जब करो काल मुक्ति वरणी ॥
सब कटे फंद कहे शुक्ल चंद, निर्मल ज्यूं चंद धार्मिक तरणी ।
मत डरना गीदड़ कर्मो से, हो जाओ होशियार सुनो ॥४॥

दोहा (सुगुप्त)

पालक तब कहने लगा, अब नही रही उधार ।
निदना आलोयना कर सभी, खड़े मुनि तैयार ॥
निर्यामक बन खंधक मुनि, संथारा तुरत कराते है ।
पैरो से लेते दुष्ट पकड़, घानी मे उधर चढ़ाते है ॥

क्षपक श्रेणी चढ़े मुनि, समदम खम हृदय लाते है ।
अन्त केवली बने बन्ध तज, अक्षय मोक्ष पद पाते है ॥
पिल रहा एक घानी मे क्रम से, और एक तैयार खड़ा ।
कर दिया मात बूचड़ खाना, बहे रहा खून कही हाड़ पड़ा ॥
उस यन्त्र से मानो निकली, एक रक्त नदी दिखलाती थी ।
गृध पक्षी घूम रहे नभ में, और चीलें झपट लगाती थीं ॥
जब पील दिये सब ही चेले, एक छोटा शिष्य रहा बाकी ।
था होनहार गुणवान कणी, मानो जैसी थी हीरा की ॥
जब उसे पीलने के हेतु, पालक ने हाथ बढ़ाया है ।
तब उसी समय खंधक ने, पालक को यो वचन सुनाया है ॥

दोहा (स्कन्धकाचार्य)

सन्तोष तुझे आया नही, अय पालक सुन बात ।
लघु शिष्य की न दिखा, मुझे सामने घात ॥
घात दिखा मत मुझको इसकी, कहना मान हमारा ।
पाला इसको प्रेमभाव से, ज्ञान सार दिया सारा ॥
शत्रु यदि हूं तो मै हूं, न इसने कुछ तेरा बिगाड़ा ।
तैयार खडा हू पील यन्त्र मे, पहिले जिस्म हमारा ॥

दौड़

पीत पहिले बस मुझको, द्वेष जिससे है तुझको ।
आपको समझाता हूं, यह दुख मत दिखला मुझको,
बस यही बात चाहता हूं ॥

दोहा (सुगुप्त)

मुनिराज के सुन वचन, बोला पालक बाद ।
तन मन खुश सब हो गया, लगा आन अब स्वाद ॥

छन्द (पालक)

स्वाद बदले का सभी, अब ही तो है आने लगा।
छोड़ दे लघु शिष्य को, किसको यह समझाने लगा ॥
जिस तरह तुझको मिले दुःख, काम वह करना मुझे।
पीलूंगा तड़पा करके इसको, दुःख मैं दिखलाऊं तुझे ॥
तूने सावत्थी नगर में; खिष्ट मुझको था किया।
सार यह मत का तुम्हारा, उस बदी का फल लिया ॥

दोहा (सुगुप्त)

लघु शिष्य ने सब सुनी, बातें करके ध्यान।
नमस्कार कर गुरु को; बोला मधुर जबान ॥

छन्द (लघु शिष्य)

नम्र निवेदन एक मेरा, गुरुजी सुन लीजिये।
बन गया अब सूत निरमल को, कपास न कीजिये ॥
सद्धर्म को अर्पण करूं सब, स्वाद अब आने लगा।
भय गुरुजी इस समय मैं, क्षत्रिय कब खाने लगा ॥

गाना नं० ४८ (लघु शिष्य का गुरु स्कन्धकाचार्य को कहना)

आपकी कृपा से अब मैं, अपनी सूरत देख ली।
मिट गया सारा भ्रम जब, असली सूरत देख ली ॥
थक गया मैं ढूंढता, लेकिन यह थे परदे नशीन।
ज्ञान दीपक से कि अब, परदे में सूरत देख ली ॥२॥
सब अनित्य रंगरूप की, खातिर भटकता मैं रहा।
आनन्द अपूर्व मिल गया जो, थी जरूरत देखली ॥३॥
जिह्वा और माला के दाने, फेरता मुद्दत रहा।
छोड़ दी जब अपने इस, मन की कदूरत देख ली ॥४॥

ज्ञानमय हूं मुझ में अब यह. कर्ममल कुछ भी नहीं।
ध्यान धरके शुक्ल सच्चिदानन्द, अमूर्त देख ली ॥४॥

दोहा (लघु शिष्य)

इस दिन के ही वास्ते, शीश मुंडाया आन।
वन्ध अनादि तोड़कर, लेऊं मोक्ष निर्वाण॥

अवश्यमेव एक दिन छुटे, यह जिस्म साथ नहीं जावेगा।
अनमोल समय यह मिला आन, फिर नही पता कब आवेगा॥
क्षपक श्रेणी चढ़ूं अभी, तन से मोह जाल हटाया है।
जिस दिन के लिये भटकता था, वस आज वही दिन आया है॥

दोहा (सुगुप्त)

ज्ञान दर्श चारित्र सम, और शान्त रस लीन।
सम दम खम शुभ भाव से, योग हुए शुद्ध तीन॥

इधर चढ़े परिणाम, उधर दुष्टो ने चढ़ाया घानी में।
पाकर केवल ज्ञान पहुंच गये, अक्षय राजधानी मे॥
सर्वज्ञ देव ने जो भाषा, कहीं आया फर्क न आना है।
हाल देख खान्दक ऋषि के, झट क्रोध वदन भर आया है॥

दोहा (सुगुप्त)

आयु का बल घट गया, कर न सके कुछ और।
होनहार का एक दम, पड़ा आन कर जोर॥

दोहा (स्कन्धकाचार्य)

अहो अतुल्य यह पाप है, ऐसा अनर्थ घोर।
नदी खून की वह गई, जरा मचा न शोर॥

छन्द (स्कन्धक)

क्या सभी अभव्य है, मुनि पांचसौ मारे गये।
हृदय सभी के पत्थर है, क्या वज्र के ढाले हुये॥

अच्छा जो मै जप तप किया, उसका मुझे यह फल मिले।
नाश मै इनका करूं, और तोड़ डालूं सब किले॥
बेच दी करणी सभी, खंदक ने नियाना कर दिया।
दुष्ट पालक ने मुनि, घानी मे उस दम धर दिया॥
श्वास पूरे हो गये गुस्से के, बस विराधक हुआ।
साधक हुआ संसार का, और मोक्ष का बाधक हुआ॥

दोहा (सुगुप्त)

स्कन्धक जाकर देवता, हो गया अग्नि कुमार।
इधर मांस ले व्योम में, पक्षी उड़े अपार॥

जिसको जो कुछ मिला वही, पक्षी वहाँ से ले दौड़ा है।
लालच के वश कोई ले गया, ज्यादा और कोई थोड़ा है॥

टुकड़ा एक रत्न कंबल का, रजोहरण जिसमे लिपटी।
खून मांस का भरा हुआ, एक चील उसी को आ चिपटी॥

लेकर उडी वहां से बैठी, राजमहल ऊँचे जाकर।
लगी जिस समय खान मिला, नही सार पड़ा नीचे आकर॥

जब देखा इसे महारानी ने तो, रजोहरण कम्बल पाया।
पुरन्द्र यशा मन घबराई, झट भूप महल में बुलवाया॥

दोहा (पुरन्द्र यशा)

प्राणनाथ यह देखिये, कंपा कलेजा आज।
क्या कोई मारा गया, बाग बीच मुनिराज॥

दोहा (सुगुप्त)

हाल देख भूपाल का, गया कलेजा कांप ।
छाती पर से एक दम, गया जिस तरह सांप ॥
हो गया नृप का फक चेहरा, न शक्ति रही बदन में है ।
क्या बतलाऊं अब रानी को, बस यही सोच रहा मन मे है।
लाचार कहा क्या बतलाऊं, गई डोर छूट नहीं हाथों मे ॥
यह महाघोर किया पाप आन, मैंने वजीर की वातो मे ।

दोहा (पुरन्द्रयशा)

दुःख सागर मे मग्न हो, वहा रही जल नयन ॥
कहन लगी भूपाल से, रानी ऐसे वैन ।

गाना नं० ४६

(शोकाकुल रानी पुरन्द्र यशा का)

अय पति तूने कराया, जुल्म यह अति घोर है ।
दुष्ट पालक सा अभव्य, दुनियां मे न कोई और है ॥१॥
पाच सौ शिष्यो सहित, भाई मेरा खन्धक मुनि ।
पीलते-पीलते यंत्र मे हा, जिनको हो गया भोर है ॥२॥
उफ तलक किसी ने न किया, अन्धेर कैसा छा गया ।
जहां किसी को दुःख मिले, वहां पर तो मचता शोर है ॥३॥
माताये सुन मर जायेगी, जिनके थे यह शोभन कुंवर ।
हाय उस दम वेदना, होगी सही किस तौर है ॥४॥
राज जन और फौज पल्टन, क्या किते नर नारी है ।
अब तो सब गारत बने, रहनी न यहां कोई ठौर है ॥५॥
अब सहूँ कैसे अतुल दुःख, जान भी जाती नहीं ॥
मैंने कर्म खोटे किये, आय के बल का जोर ॥६॥

यदि शुक्ल मुझ को पता, होता अनर्थ हो जायगा।
फिर पिया यह हाथ से, हरगिज न छुटती डौर है॥

दोहा (दंडक)

महा खेद मैंने किया, कुछ भी नहीं विचार।
ऐसे पापी दुष्ट को दिये, सभी अधिकार॥

गाना नं० ५० (दंडक का विलाप)

(अब मैं धरूँ, किस तरह धीर)

देख देख यह जुल्म भयानक, उठे कलेजे पीर ॥टेक॥
राज कुंवर खन्धक मुनि त्यागी, शूर वीर गम्भीर।
फूल कमल से बदन पील दिये, घानी सकल शरीर ॥१॥
बिल-बिल रोवे रानी मेरी, जिस का खन्धक वीर।
खबर सुनत ही प्राण तजेंगी, पीया जिनका क्षीर ॥२॥
ज्ञात मुझे होता नहीं रखता, ऐसा दुष्ट वजीर।
बात सुनेंगे सेवक जिनके, लेगें कलेजे तीर ॥३॥
शुक्ल समय बीता नही आता, बहे नयनो से नीर।
सब रोगों की एक औषधी, श्री जिन धर्म आखीर ॥४॥

दोहा (दंडक)

धिक् ऐसे संसार को, और मुझे धिक्कार।
अब दिल मे यह ही बसा, तप संयम लेऊं धार॥

इधर विचार किया नृप ने वहां, उपयोग देव ने लाया है।
सब देख बाग का हाल उसी दम, क्रोध बदन में छाया है॥
अग्नि कुमार उस सुर ने आकर, अग्नि तुरत लगाई है।
देख प्रचंड मची ज्वाला, जनता मन में घबराई है॥

हा हा कार मचा सारे, भागे सब जान बचाने को।
जहां पर कोई मनुष्य नजर पड़ा, सुर अग्नि लगा जलाने को॥
पुरन्द्र यशा की शासन देवी ने, आ करी सहाई है।
मुनि सुव्रत के पास, पहुंचा कर दीक्षा उसे दिलाई है॥
दंडक और पालक दोनो को, दुःख सुर ने दिये अति भारी।
दुःख अतुल भोगने को मंत्री, गया नर्क सातवीं मझारी॥
काल अनन्त अन्त नही आना, पालक ने दुःख भरना है।
अभव्य स्वभाव है जिस प्राणी का, कभी न उसने तरना है॥

दोहा (सुगुप्त)

दंडक नृप के देश मे, प्रलय हुई अपार।
नर्क और तिर्यच मे, गये बहुत नर-नार॥

उसी दिवस से यह अटवी, दंडकारण्य कहलाती है।
कर्म बड़े बलवान यहाँ न, पेश किसी की जाती है॥
उस दंडक राजा ने भव-भव मे, जन्म मरण दुख पाया है।
फिर जन्मा गंधाधिप पक्षी, महारोग बदन मे छाया है॥
अब मुनियो के दर्श से इसको, जाति स्मरण ज्ञान हुआ।
जब लगा देखने पूर्व जन्म, पालक खंधक का ध्यान हुआ॥
तब उसी समय यह गिरा धरण मे, पक्षी मूर्छा खा करके।
सीता ने हमारे पैरो पर, यह पक्षी डाला ला करके।

छन्द (सुगुप्त)

स्पर्श ओषधी लब्धि हमे, पक्षी का जिस दम तन लगा।
वेदना उपशम हुई, जो रोग था सब ही भगा॥
त्याग तन मन से किया, नहीं घात जीवो की करे।
बन गया धर्मी धर्म धारण, विशुद्ध मन से धरे॥
अब तुम्हारे शरण है, इसकी भी रक्षा कीजिये।

मानिन्द समझो भ्रात की, करुणा यह दिल धर लीजिये।
राम बोले जो कुछ कहा, सब आपने वह ठीक है॥
इसकी रक्षा के लिये, मम प्राण भी ना चीज है॥

—:इति स्कंधकाचार्य अधिकार:—

दोहा

शिक्षा दे जब मुनि चले, पड़े चरण श्रीराम।
धन्य श्री जिन धर्म है, धन्य आपका नाम॥
धन्य आपका नाम ज्ञान, श्री जिनका बतलाया है।
धन्य मात वह तात प्रभु, जिसने तुमको जाया है॥
सार सभी नर तन, पाने का तुमने ही पाया है।
सफल जन्म उनका जिनके, सम दम खम मन भाया है।

दौड़

मुनि वहां से चल धाये, ध्यान तप जप चित लाये।
प्रसन्न पक्षी तन मन से, रक्खा नाम जटायु,
अब सीता पे रहे मग्न से॥

दोहा

पक्षी का सुन्दर जिस्म, शोभे कलगी शीश।
सीता से अति प्रेम है, रहे पास निशदीश॥
सिया राम रथ मे बैठे, लक्ष्मण सारथि वन जाता है।
पक्षी उड़े अगाड़ी जिस दम, चलें सैर शोभाता है॥
पुरी अयोध्या के समान, दण्डकारण्य में रहते हैं।
अब सुनो हाल पाताल लंक का भी, संबंध यहाँ कहते हैं॥

—**—

शम्बूक

दाहा

पाताल लक का अधिपति, खर नामक भूपाल।
शूर्पणखा रानी अति, सुन्दर रूप रसाल॥
राजकुमार थे दो जिसके, शम्बूक और था सुनन्दन।
युवावस्था थी जिन की, शुभ रूप वर्ण जैसे कुन्दन॥
सूर्य हास खांडा सांधू, हर घड़ी यही शम्बूक चाहता।
नित्य विघ्न डालते माता पिता, यूं नहीं सफल होने पाता॥

दोहा

एक दिवस हठ मे खड़ा, बोला हो विक्राल।
विघ्न यदि देगा कोई, उसका आया काल॥

उसका आया काल, लगे क्यो सोता शेर जगाने।
मारू धर तलवार अक्ल, सारी आ जाय ठिकाने॥
सोच समझ नही करते कायर, अपनी अपनी ताने।
विद्या साधन जाय सूर, शबूक न हर गिज माने॥

दोहा

विघ्न जो कोई देवेगा, जान अपनी खोवेगा:
दण्ड कारण्य मे जाऊँ, द्वादश वर्ष सात दिन का,
साधन प्रारम्भ लगाऊँ॥

दोहा

सूर्य हास साधन असि, कुंवर के मन उत्साह।
होन हार लेकर गई, दण्डक वन के मांह॥

गाना नं० ५१

(तर्ज-) (कौन कहता है कि जालिम)

सर्वसिद्धी के लिये ब्रह्मचर्य एक प्रधान है ।
सत्य भाषण दूसरा निर्बद्ध मेढी समान है ॥१॥
समभाव और एकाग्रता, निज लक्ष में तल्लीन हो ।
निर्भिकनिरभिमान, और साधन सभी का ज्ञान है ॥२॥
सेवा भक्ति और विनय से, योग्य गुरु की हो कृपा ।
एकान्त सेवी मौन ग्राही, अटल श्रद्धा वान है ॥३॥
कार्याकार्य विचारक, और भाव ऊँचे हो सदा ।
गुरु धर्म शास्त्र देव संघ सेवा में जिसका ध्यान है ॥४॥
दान तपजप भावना, शुभ पुण्य का संचय भी हो—
शुकल साधन धर्म ध्यानि, शुद्ध खान अरु पान है ॥५॥
जैसी जिसकी भावना, सिद्धि भी तदनुसार हो ।
मंत्र का नम्बर बदलने, का भी जिसको भान है ॥६॥

दोहा

एकान्त भूमि शुद्धात्मा, जितेन्द्रिय व्रत धार ।
पांव बांध वह वृक्ष से, नीचे मुख सुविचार ॥
नीचे मुख सुविचार मन्त्र में, अपना ध्यान जमाया था ।
बारह वर्ष सात दिन का विद्या प्रारम्भ लगाया था ॥
था चहुं ओर बांसो का वन, जहां पवन अति गुंजार करे ।
पर क्या मजाल है दृष्टि की, अन्दर को जरा पसार करे ॥
शूर्पणखां वहां तीन दिवस के, बाद से आया करती थी ।
सुत शंबूक के लिये खाद्यपदार्थ, बन में लाया करती थी ॥
विद्या साधत बीत गये, यहां बारा वर्ष चार दिन है ।
सिद्धि प्राप्त लगी होने पर, मिले न रत्न पुण्य बिन है ।

तेज महान सूर्य समान गंधूर मे लगा चमकने को ॥
लटक रहा था जहां पर खांडा, शम्बूक लगा हर्षने को ।

दोहा

रूप ऋद्धि बुद्धि अति, सेवा भक्ति महान् ।
होनहार आगे सभी, बन जाते नादान ॥

रूप कहे मै ही मै हूं, ऋद्धि कहे मै कहलाती हूँ
बुद्धि कहे मै तुम दोनो का, एक ग्रास कर जाती हूं ॥
होनी लगी मुस्कराने, और बोली जब मै आऊँगी ।
रूप ऋद्धि बुद्धि आदि, कुछ हो सब पर छा जाऊँगी ॥

— —

विग्रह का बीज

दोहा

क्रीड़ा कारण आ गया, फिरता लक्ष्मण वीर ।
देवयोग आगे बढ़ा, कौंचरवा के तीर ॥

वंश जाल मे पड़ी नजर, सूर्य मानिन्द प्रकाश हुआ ।
क्या रवि आन बैठा इसमे, लक्ष्मण को ऐसा भास हुआ ॥
वंश जाल मे खड्ग अपूर्व, अपनी चमक दिखाता है ।
देख अनुपम शस्त्र वीर, योद्धा का मन ललचाता है ॥
झट हाथ पसार के खड्ग लिया, लक्ष्मण का मन हर्षाया है ।
अज्ञातपने से परीक्षा कारण, वंश जाल पे बाह्या है ॥
होनी ने अपना काम किया, शंबूक की आशा धरी रही ।
वह जीव बसा जा परभव मे, सम्पत्ति सब यहाँ पर पड़ी रही ॥

दोहा

लटक रहा था शीश जो, शबूक का दरम्यान ।
वंश जाल के संग कटा, पड़ा सामने आन ।।

देख भयानक दृश्य अनुज के, चोट हृदय पर आई है ।
क्योंकि यह निरपराधी कोई, मुझसे मरा वृथा ही है ।।
किया खेद अति लक्ष्मण ने- फिर आगे पैर बढ़ाया है ।
शीश कटा धड़ लटक रहा, यह नजर सामने आया है ।।

गाना नं० ५२

(शंबूक की मृत्यु पर लक्ष्मण का दुःख करना)

सैर करते आज मेरा, यहां क्यो आना होगया ।
बेगुनाह इस मनुष्य का, परभव में जाना होगया ।।१।।
कष्ट सह सह करके जिसने, था खड्ग साधन किया ।
हाय किस परिवार का हृदय जलाना होगया ।।२।।
देख वह रो रो मरेंगे, जिनका राजकुमार है ।
क्योंकि उनका आज यह अनमोल दाना खोगया ।।३।।
अब तो कुछ बनता नहीं, चाहे यत्न लाखों करूँ ।
जीव इसका तो शुक्ल, परभव रवाना होगया ।।४।।

दोहा

पछताता ऐसे अनुज, गया राम के पास ।
खड्ग सामने धर दिया, चेहरा अति उदास ।।

बोले राम अहो भाई, चेहरे पर अति उदासी क्यो ।
यह खड्ग कहां से लाये हो, और ठंडी लई उबासी क्यों ।।
कहे अनुज महाराज आज मैं, कौंचरवा के तीर गया ।
निरपराधी विद्या साधक, मारा एक रणधीर गया ।।

दोहा

जो जो कुछ बीतक हुआ, सभी बताया हाल।
रामचन्द्र फिर अनुज से, बोल उठे तत्काल ॥

दोहा (राम)

भाई तूने बो दिया, झगड़े का यह बीज।
जिसकी यह तलवार वह, नही मामूली चीज ॥

मामूली नही चीज फना, कर दिया शूर अलबेला।
है कोई उच्च राजवंशीय, न समझो उसे अकेला ॥
दल बल सेना आने वाली है, कोई रेलम ठेला।
देख अभी दीखेगा बन में, भरा हुआ रणमेला ॥

गाना नं० ५३

(रामचन्द्र जी का लक्ष्मण को कहना)

पहिन वस्त्र अभी तैयार, हो जाना मुनासिब है।
पानी आने से पहिले ही, बन्ध लाना मुनासिब है ॥१॥
ख्याल है सिर्फ सीता का, और बस फिकर न कोई।
एक यहां पर रहे दूजे का, जाना ही मुनासिब है ॥२॥
यहां का फैसला किये बिना, आगे न जाना है।
जो होता धर्म क्षत्रिय का, वह दर्शाना मुनासिब है ॥३॥
जो होना था सो हो बीता, ख्याल मन से भुला दीजे।
उल्लंघ नीति वह जावे तो, धनुष उठाना मुनासिब है ॥४॥

शूर्पणखा

दोहा

इधर अनुज से बात कर, हो बैठे होशियार।
शूर्पणखा ने महल मे, मन मे किया विचार॥

विद्या सिद्धि राजकुंवर की, जल्दी होने वाली है।
हृदय कमल खिला ऐसे, जैसे फूलो की डाली है॥
भोजन पान सभी सामग्री, तुरताफुर्त बनवाई है।
खुशी खुशी लेकर सामग्री, दण्डकारण्य मे आई है॥

दोहा

कौचरवा के तीर जब, आई गंधूर पास।
नजर उठा देखन लगी, दिल मे अति हुलास॥

वंश जाल है कटा हुआ, शंबुक पुत्र का शीश पड़ा।
वह दृश्य भयानक देखत ही, हुवा माता को अफसोस बड़ा॥
लगी देखने अन्दर को तो, शीश बिना धड़ लटक रहा।
क्या कारण यह आज हुआ, कर रही सोच मन भटक रहा॥
कर रुदन फाड़ रही अम्बर को, नैनों से नीर है बरस रहा।
मूर्छित होकर गिरी धरण, हृदय अन्दर से तड़प रहा॥
शूर्पणखा होकर सचेत, पुत्र का शीश चूमती है।
मूर्च्छित हो कभी गिरे धरण, कभी धड़ की तरफ घूमती है॥
बिना नीर मछली जैसे यो, तड़प रही खर की रानी।
और बोली अय बेटा तेरी, किस तरह गई यह जिंदगानी॥
अय बेटा तेरी खातिर मैं, सब सामग्री लाई थी।
इस बनखंड में शंबुक बेटा, मैं तेरी खातिर आई थी॥
बाकी है नाराज सभी, इस कारण कोई न आया है।
छैया मैया को खबर कहाँ, मैने तो तुझको जाया है॥

तू प्रातःकाल सदा उठकर, माता को शीश झुकाता था।
और माता माता कह कर मेरा, हृदय कमल खिलाता था ॥

दोहा (शूर्पणखा)

सिर पीटूं छाती धुनूं, हा शंबूक हा लाल।
और बता किसको कहूं, बन मे अपना हाल ॥

गाना नं० ५४ (शूर्पणखा का विलाप)

तर्ज—बहर तवील

छैया मैया को तजकर, किनारा गया,
मेरी जान जिगर का सहारा गया।
मुझे छोड़ अभागिन को तू चल बसा,
और सर्वस्व कैसे विसारा गया ॥१॥
मै तो आई खुशी से यहां दौड़ कर,
साथ लाया न जहर करारा गया।
जिसको खाकर के मै भी जाती उधर,
जिस जगह मेरा बेटा प्यारा गया ॥२॥
हाय लटकता यह धड़ है पडा सिर उधर,
इससे थर्रा कलेजा हमारा गया।
अय बेटा करूं तो करूं क्या बता,
मुझे जान जिगर अति मारा गया ॥३॥
मत जा साधन को विद्या कहा पेश्तर,
जिससे कटकर के सिर यह तुम्हारा गया।
कर चला गोद खाली कुंवर मात की,
मेरे घर का तो सारा उजारा गया ॥४॥

दोहा (शूर्पणखा)

क्या मेरे ही भाग्य थे, फूटे इस जग मांय।
विरह आपका हे कुंवर, मुझसे सहा न जाय ॥

गाना नं० ५५ (शूर्पणखा रानी का विलाप)

तर्ज—बिहाग

प्राण प्यारे लाडले सूरत, जरा दिखलाय जा।
रोवे खड़ी अम्मा तेरी, इसको तो धीर बंधाय जा ॥१॥
कौनसी साधी कुंवर, विद्या बता तो दे जरा।
भोजन मै लाई पास तेरे, यह जरा सा खाय जा ॥२॥
नौ मास रक्खा गर्भ मे, मैं लाल तुझको सुख दिया।
क्या कहे अम्मा मुझे, इतना तो शब्द सुनाय जा ॥३॥
बारह वर्ष अति दुःख सहा, फिर खो दिये निज प्राण हैं।
काटा है किसने सिर तेरा, यह तो जरा बतलाय जा ॥४॥

दोहा

शूर्पणखा ने इस तरह, किये बहुत विलाप।
अब रोने से क्या बने, सोच किया फिर आप ॥

जिसने मारा राजकुंवर, मै उसकी खोज लगाऊंगी।
जान का बदला जान ही लेकर, सुत का बदला पाऊंगी ॥
कैसे पता लगे मुझको, दुर्जन को स्वाद चखाऊं मै।
चिह्न देख कर पांवों का, अब उसका पता लगाऊं मै ॥

दोहा

जिधर गया लक्ष्मण उधर, चली चरण चिह्न देख।
नयनों से जल बह रहा, कर रही सोच अनेक ॥

पद चिह्न देखती जाय कभी, चहुं ओर को दृष्टि घुमाती है।
जब नजर पड़े वह राम लखन, तब ऐसा सोचती जाती है॥
क्या यह रवि चन्द्रमा है, या दो स्वर्गों के इन्द्र हैं।
क्या साक्षात् है नल कुबेर, अति रूप कला मे सुन्दर है॥

दोहा

काम बाण जिसको लगे, सुध-बुध दे विसराय।
शोक हुआ काफूर सब, बसे राम दिल मांय॥

लगी देख छिप वृक्षो में, काम बसा रग-रग अन्दर।
लाज शर्म उड़ गई हुई, बेशर्म जाति जैसे बन्दर॥
मध्य भाग में दोनों के, मानो हो रहा उजाला है।
वृक्षो पर यौवन बरसा, रंग हरा बहुत कुछ काला है॥

दोहा (शूर्पणखा मन मे)

रत्नों के पुतले बने, क्रान्ति रवि समान।
क्या सब दुनिया का मिला, रूप इन्हो को आन॥

क्या बिजली नक्षत्र व्योम से, बैठे टूट सितारे है।
रम गये हाड और सिंजी क्या, रग रग मे फूल हजारे है॥
हैं निश्चय पुण्यवान् किसी, यह भूप के राजदुलारे है।
और सभी कुछ हेच मुझे, बस लगते यही प्यारे है॥

दोहा

पलक नहीं झपके जरा, देख रही हर बार।
दृष्टिगोचर फिर हुई, उसी जगह सिया नार॥

देख हुई हैरान कहाँ से, यह चन्द्रमा चढ़ आया।
शरद् ऋतु मे प्रात:काल, जैसेकि सूर्य निकल आया॥
इन्द्राणी से अधिक रूप, फिर मै पसन्द कब आऊंगी।
रूप रोशनी और बढ़ा कर, पास इन्ही के जाऊंगी॥

दोहा

रूप देखकर शूर्पणखा, हुई विषय में लीन ।
इश्क बीच अन्धी हुई, न कुछ रहा अधीन ॥

रूप परिवर्तिनी विद्या, अब शूर्पणखा ने सुमरी है ।
बनी नई नवेली साक्षात्, जैसे कुबेर की कुमरी है ॥
तरुण अवस्था मोहिनी मूर्त, चलता पक्षी देख गिरे ।
फिर गई सामने रामचन्द्र के, इधर फिरे कभी उधर फिरे ॥

काम राग में अन्ध हो, अद्भुत बनी अनूप ।
ऐसी व्यक्ति को कहाँ, आत्म गौरव स्वरूप ॥

गाना नं० ५६ (शूर्पणखा का शृङ्गार वर्णन)

फिरे हंस गति से कामन, दामन कर सोलह शृंगार ॥टेर॥
मंजन कर बनाय अंजन, नेत्रो में लिया डाल ।
मस्तक ऊपर गोल बिन्दी, मोती से पिरोये बाल ॥
चूड़ामणि फूल शीश, गले में हीरो की माल ।
नाक मे बुलाक शोभे, मोती जड़ी साडी लाल ॥

बदल

गहनो की झंकार घणी है, बेशर में हीरों की कनी है ।
शोभा अति अधिक बनी है, नखरे का न पार ॥फिरे० ॥१॥
चांद और जड़ाऊँ बुजनी, कानो मे सुनहरी बाले ।
कौड शीस बिम्बोष्ठी, नाथ माहीं मोती डाले ॥
मृगानयनी सेवक ठोडी, जुल्फ जैसे नाग काले ।
गति है मराल हथिनी मस्त, जैसी चाल चाले ॥

बदल

चन्द्र बदनी कोयल बैनी, पहनी साड़ी ऊपर चोली ।
रसना पतली मीठी बोली, इन्द्राणी अनुहार ॥ फिरे० ॥

हाथ कड़े परिवन्द आरसी, चूडा पछेली ।
गजरा और जड़ाऊँ पहुची, मेंहदी से रची हथेली ॥
पहिने सब छाप छल्ले, अंगूठी ज्यूं मूंगफली ।
थी पुत्र विरहनी पर, काम बस नीत चली ॥

बदल

फूली नहीं समाती तन में, खुश हो रही घूम उस वन मे ।
जैसे बिजली चमके घन में, फिरे अकेली नार ॥ फिरे० ॥३॥
कडे छड़े रमझोल, मेहदी बिछुवे और मोर ।
ठुसक ठुसक चाले गहणे, सारे करते शोर ॥
पाँवो मे पायजेब सोहे, घूंघर वाली चहुं ओर ।
दुवक छुपक आई जैसे, पाड़ लाने चौर ॥

बदल

रही घूम विषय के बल में, गन्धहस्ती जैसे दल में ।
घड़ रही बनावट मन मे, करे इधर उधर सचार ॥फिरे० ॥४॥

दोहा

देख हाल यह राम ने. मन मे किया विचार ।
किस कारण उद्यान मे, फिरे अकेली नार ॥
शूर्पणखा को इस तरह, बोल उठे श्रीराम ।
इस दुर्गम उद्यान मे, कौन तुम्हारा काम ॥

कहो वृत्तान्त अपना सारा, किस कारण बन मे आई हो ।
और इधर-उधर क्या देख रही, कुछ भय न जरा मन लाई हो ॥
क्या कहीं चौला है गिरफ्तार, जिसकी तुम फिरो तलाशी मे ।
क्या आई पैदल इस बन मे, या बैठ विमान आकाशी मे ॥

दोहा (शूर्पणखा)

अव्वल तो उद्यान मे, बैठे दूर हजूर।
उपयोग नही दोयम लगे, उड़े व्योम मे धूर ॥

जरा पास आ करके अपना, सारा हाल सुनाती हूँ।
मै मनुष्य मात्र से डरी हुई, कुछ भय इस कारण खाती हूँ ॥
कुछ हाल पूछना चाहते है, अनुमान यही मैं पाई हूँ।
अब कान लगाकर सुन लीजे, मै पास सुनाने आई हूँ ॥

दोहा

पुत्री हूं भूपाल की, सोई शिखर आवास।
एक विद्याधर था जा रहा, बैठ विमान आकाश ॥

यह देख रूप मेरा मोहित; हो गया उसी दम विद्याधर।
मै निद्रागत मुर्दे समान थी, मुझे नहीं कुछ रही खबर ॥
बस डाल विमान में ले भागा, यह कह नहीं सकती गया किधर।
वह मुझे जिधर ले चला, और एक आ विद्याधर मिला उधर ॥

दोहा (शूर्पणखा)

निद्रा जब मेरी खुली, हुई बहुत हैरान।
देखा तो चहुं ओर है, बियाबान उद्यान ॥
यह देख मेरी सुन्दरताई, दूजा विद्याधर ललचाया।
और मुझे खोसने के कारण, झटपट इसको मारन धाया ॥
बैठा कर मुझको एक ओर, फिर लगे परस्पर लड़ने को।
यह ऐसा पापी रूप हुवे, तैयार मनुष्य दो मरने को ॥

दोहा

मैं बैठी वहाँ रो रही, किस्मत को लाचार।
हाय मेरा अब कौन है, इस बन के मंझार ॥

छन्द

लड़-लड़ के दोनो मर गये, खोटे व्यसन का फल मिला।
रह गई बन मे अकेली, कांपता मेरा दिला ॥
फिरते-फिरते थक गई, रस्ता न कोई इन्सान है।
धड़कता है मन मेरा, किन्तु न निकली जान है ॥
इस समय मेरा सहायक, धर्म या प्रभु आप है।
शान्ति मुझको मिल गई, बस कट गये संताप है ॥
कष्ट मेरा शील के प्रताप, से सब टल गया।
इस जन्म में बस आपसा, भर्तार मुझको मिल गया ॥

गाना नम्बर ५७

(रामचन्द्र और शूरपणखां का सम्मिलित गाना)

शूर्पणखा--कल खुश्क था यह जंगल, अब है महकार छाई।
चमकार पंचवटी मे, क्या रोशनी फैलाई ॥१॥
तुम किस के हो शाहजादे, कब से यहाँ पे आये।
दोनो ही खूबसूरत चेहरे, की क्या गोलाई ॥
राम--अयुध्यापुरी सुनी है, दशरथ के हम दुलारे।
सीता यह राजरानी, लक्ष्मण यह मेरा भाई ॥३॥
तेरह है साल गुजरे, फिरते है हम वनो मे।
रहती है तू कहाँ पर, यहाँ पे किधर से आई ॥४॥
शूर्पणखाँ—क्या तुम न जानते हो, राजा की हूं मैं पुत्री।
मेरी रूप रोशनी ने, खल्कत मे धूम पाई ॥५॥
राम—फिरती है क्यो अवारा, जगल मे इस तरह तू।
कामन नादान तेरे, दिल मे यह क्या समाई ॥६॥
शूर्पणखा—जादू भरी यह सूरत, दिल मे बसी है मेरे।
अब आपके है कर मे, दुख दर्द की दवाई ॥७॥

राम—तुम लखन को सुनाओ, अपनी यह दुख कहानी।
हट दूर हो यहाँ से, क्या गड़बड़ी मचाई ॥८॥
शूर्पणखा—लक्ष्मण तो तेरा भाई, नादान है अक्ल का।
मेरी तरफ तो उसने, न नजर तक उठाई ॥९॥
राम—किया था मैं इशारा, लक्ष्मण के पास जाओ।
फिर भी आ तुमने यहाँ पर, क्यों टिकटिकी लगाई ॥१०॥

दोहा (शूर्पणखा)

हाथ जोड़ विनती करूं, कर लीजे स्वीकार।
शादी मुझ से कीजिये, और न कुछ दरकार॥

दोहा

इतनी सुनकर बात को, चौंक पड़े श्रीराम
सोचा यह प्रपंच सब, कर रही आकर वाम।
देखो कैसे नार आन, त्रिया चरित्र फैलाती है॥
आप बनी भोली भाली, और पागल हमें बनाती है।
एक बात मुख से करती, और चार बनाती आँखों से॥
अंग-अंग है नाच रहा, जैसे दरख्त निज पातों से।

दोहा (राम)

बेशक इसको प्रेम है, पर है व्यभिचारिणी नार।
भेजूं लक्ष्मण की तरफ, देवे मान उतार॥

दोहा

रामचन्द्र कहने लगे, शूर्पणखा को वैन।
जा पर ले के पास तू, जरा लगा के सैन॥
राम—पास नहीं जिनके नारी, बस चाव उन्हीं को होता है।
जो फंसे प्रेम के फंदे में, वह फिरे उमर भर रोता है॥

एक नार है पास मेरे, दिन रात नींद नहीं आती है ।
जा लक्ष्मण के पास अर्ज कर, ब्याह करना जो चाहती है ॥

दोहा

कामान्धी को खबर ना, गई अनुज के पास ।
हाथ जोड़ करने लगी, चरणो मे अरदास ॥

शूर्प०—हे नाथ विनती दासी की, करुणा कर हृदय धर दीजे ।
पास आपके भेजी हूँ, अब विवाह मेरे संग कर लीजे ॥
लक्ष्मण एकदम भुंझलाया, बोला ज्यादा बक बक न कर ।
जात है तू औरत की, वरना अभी उड़ा दूं तेरा सिर ॥

दोहा (लक्ष्मण)

क्यो कामन अन्धी हुई, फिरती शर्म उतार ।
पहिले मेरे भ्रात को, बना चुकी भर्तार ॥

कहां गया वह सत्य तेरा, जो पति दूसरा चाहती है ।
बन की कही चुडेल आन, नखरे हमको बतलाती है ॥
शूर्पणखां सहमी जाती, लक्ष्मण बेधड़क सुनाते है ।
सिया राम उधर हंस हंस कर, दोनो हाथो ताल बजाते हैं ॥

दोहा

चल हट यहां से अलग हट, गले न तेरी दाल ।
और कही पर आप यह, डालो अपना जाल ॥

बड़े भ्रात से करी प्रार्थना, भाभी लगे हमारी है ।
देख अरिसा जरा दिखाऊं, क्या यह शक्ल तुम्हारी है ॥
टिम टिमा कर खड़ी सामने, नयनो को फडकाती है ।
झूठ बोलते हुये जरा भी, मन मे नहीं लजाती है ॥
छल फरेब करती घर घाल्लो, रूप बना कर आई है ।
क्या इसी शक्ल पर दो पुरुषो, ने कहती जान गंवाई है ॥

हट यहां से क्यों इधर उधर, चमकाती डोले बिन्दी है।
तुझ जैसी नहीं और कोई, दुनियां मे नारी गन्दी है॥

दोहा (लछमण)

पीठ दिखा यहां से जरा, शर्म न तुझे लगार।
भरा मुल्क चारों तरफ, करो देख भर्तार॥
करो देख भर्तार यहां पर, चले न चाल तुम्हारी।
उल्लू जैसी शक्ल गधी, भी चाहे शेर सवारी॥
मायाचारिणी मिथ्याभाषिणी, बनती राजदुलारी।
मारूं हन्टर अभी अक्ल, आजाय ठिकाने सारी॥

दौड़

कहां दुःख दिया आन के, सताती जान जान के।
चपल चालाक बाक है, और कहीं जा करो ठिकाना।
यहां न कोई गाहक है॥

दोहा

कोरी कोरी जब सुनी, लछमण की फटकार।
शूर्पणखां को आ गया, सहसा रोष अपार॥
जैसे नागिन फण मारे, ऐसे दो हाथ मारती है।
कुछ बना नहीं काम समझ, पुत्र का मोह चितारती है॥
बोली तूने ही मेरे शंबूक, का शीश उतारा है।
अब तभी श्वांस लेऊंगी मै, कटवा कर गला तुम्हारा है॥

दोहा (लछमण)

हम भी बैठे है यहां, इसी लिये तैयार।
कह देना आवें जरा, हो करके हुशियार॥
जा उन उनको दे भेज यहां, जिनको परभव पहुँचाना है।
है सूर्य वंशी यहां राम लखन, तूने क्या हमको जाना है॥

अनुचित कहती शब्द चली, पाताल लंक मे आई है।
खरदूषण को शंबूक के, मारे की खबर सुनाई है॥

दोहा (शूर्पणखां)

महा घोर अन्याय क्या, प्रलय होगया आज।
एक लाल शंबूक बिना, सूना होगया राज॥

हाय निर्दयी ने कैसे, शबूक की गर्दन काट दई।
और बनचर जीवों को सब, टुकड़े टुकड़े करके बांट दई॥
कुछ मुझसे भी वह पापी, अनुचित छेड़ाखानी करने लगे।
जब मैंने उनको धमकाया, तो लड़ने का दम भरने लगे॥

दोहा

सुत मारा जिस दिन सुना, रोष गया तन छाय।
उसी समय भूपाल ने, योद्धा लिये बुलाय॥

चौदह सहस्र महायोद्धा, दंडकारण्य में आये हैं।
महा गर्द गगन मे छाय गई, आँधी से ज्यादा छाये हैं॥
सब देख हाल यह अनुज, भ्रात को रामचन्द्र समझाते हैं।
अब सावधान हो जा भाई, शत्रु टिड्डी दल आते है॥

दोहा (राम)

अय लक्ष्मण तुम यहां रहो, जनक दुलारी पास।
अरि दल के आऊं अभी, उड़ाकर होश हवास॥

हाथ जोड़ लक्ष्मण बोले, महाराज विनती सुन लीजे।
तुम रहो पास सीता जी के, मुझको रण मे जाने दीजे॥
मैंने ही कांटे बोए हैं, मै ही उनका मुँह तोड़ूंगा।
सब करूं चपट मैदान धनुष, लेकर जब रण दौड़ूंगा॥

दोहा (लक्ष्मण)

जब तक जीए जगत् में, सेवक लक्ष्मण वीर।
तब लग तुमको क्या फिकर, हे भाई रणधीर ॥
बस हाथ शीश पर धर दीजे, मैं जाने को तैयार खड़ा।
और अभी दिखाता हूँ करके, देखो यह साफ मैदान पड़ा ॥
तब बोले राम अच्छा तुम जाओ, हम यहाँ पर रह जाते हैं।
किन्तु एक बात हम और कहें, सुनता जा जरा सुनाते हैं ॥

दोहा (राम)

कह देना ललकार कर. पहले सुनलो बात।
शम्बुक की हमने न की, जान बूझकर घात ॥
फिर भी गलती का खरदूषण, तुम दण्ड हमें दे सकते हो।
शम्बुक की मृत्यु का योग्य, कोई हर्जाना भी ले सकते हो ॥
यदि इस पर न ध्यान करें तो, फिर मैदान मे डट जाना।
और किसी तरह भी अरि जन का, फिर धोखा भाई मत खाना ॥
यह ज्ञात मुझे कोई दुनिया में, नहीं तुझे जीतने-वाला-है।
फिर भी यह साथ में ले जाओ, महा वज्रमयी जो भाला-है ॥
घिर जाओ कहीं शत्रुओं मे तो, सिंह नाद शब्द करना
मैं उसी समय आ जाऊँगा, तुम भय न कोई दिल मे धरना ॥

दोहा

हंस कर बोले लखन जी, हे भाई रणधीर।
नम्र निवेदन है मेरा, धरो हृदय में वीर ॥

दोहा (लक्ष्मण)

चढ़ते जल में प्रवेश करे, वह अपने प्राण गंवायेगा।
क्रोधातुर को शिक्षा देने वाला, निज काल बुलायेगा ॥

प्रारभिक ज्वर में हे भाई, औषधि जहर बन जाती है।
और राग द्वेष मे अंधो को, शुभ शिक्षा कभी न भाती है॥

दोहा (राम)

बुद्धिमान् हो तुम लखन, हर फन मे होशियार।
जाओ अब रणरंग मे, करो अरि की छार॥

रणभूमि

दोहा

शीश नमा करके चले, सुमित्रा का लाल।
या यों कहदें चल दिया, खर दूषण का काल॥
जा ललकारा सामने, करी धनुष टंकार।
मची खलबली फौज में, भाग हो गये चार॥
गड़गड़ाहट घनघोर शब्द, सुन सब दल का मन कांप पड़ा।
यह क्या आफत आती है, खर दूषण का दिल हांप पड़ा॥
आधि शक्ति तोड़ लखन ने, बाणो की झड़ी लगाई है।
आंधी अगे जैसे तृण, ऐसें सब फौज भगाई है॥
जैसे बादल व्योम बीच, दल मे योधा यों गर्ज रहा।
या बालू के घर गेरण को, वारि वाह जैसे बरस रहा॥
शूर्पणखां ने देख हाल यह, दातों मेंअंगुली डाली है।
फिर बोली हाय स्तिम लक्ष्मण, कर देगा सब दल खाली है॥
बिजली के मानिन्द कड़क रहा, इससे अब कैसे पार पड़े।
शक्ति हीन हो गए योद्धा सब, झांक रहे है खड़े खड़े॥
बिना वीर रावण के यहां न, पेश किसी की चलनी है।
एक नपूते ने सबका हृदय, किया छलनी छलनी है॥

दोहा

लंका को अब चल दई, शूर्पणखा तत्काल ।
रावण से कहने लगी, जो बीता सो हाल ॥
तुम बैठे मैं लुट गई, भाई करो विचार ।
पहिले सुत मारा गया, अब मरता भर्तार ॥

छन्द

वीर तेरे भानजे का सर, अलग धड़ से किया ।
दो मनुष्य जंगल मे हैं, डेरा निडरपन से किया ॥
रोष कर तेरा बहनोई, लेके दल सारा गया ।
विश्वाश नहीं मुझको रहा, जीता के या मारा गया ॥
चौदह स्हस्र संग अकेला, वीर लक्ष्मण लड़ रहा ।
शेर जैसे बकरियों में, यों लपक के पड़ रहा ॥
सब खत्म कर देगा यदि, न आप वहाँ पहुंचे बीरन ।
फैल ऐसे जायगा, मानिन्द रवि जैसे किरण ॥
अब तो गोते खारही. नैया मेरी मझधार है ।
डोब देना या बचाना, आपके अखत्यार है ॥

दोहा

शूर्पणखा के बचन सुन, रावण करे विचार ।
मूर्ख जाति नारी की, सोच न जिसे लगार ॥

प्रथम तो इस दुष्ट बहन ने, कुल को दाग लगाया है ।
एक तुच्छ मनुष्य क्या खरदूषण, वह ही इसके मन भाया है ॥
फेर नहीं यह आन गमी शादी मे, मुख दिखलाती है ।
अब गर्ज पड़ी तब आन खड़ी, नयनों से नीर वहाती है ॥

और कहती है दो मनुष्यो पर, चौदह हजार चढ़ धाये हैं।
फिर भी बतलाती खतरा है, नहीं दो काबू में आये है ॥
प्रथम तो यह ठीक नही, यदि है भी तो क्या हमे पड़ी।
मर जाने दो उन दुष्टो को, रोने दो इसको खड़ी खड़ी ॥
बीज नाश हो जाये तो, कुल का कलंक मिट जायेगा ॥
यदि सम्मुख नहीं पीठ पीछे, कहते सो भी हट जायेगा।
दो चार घड़ी सिर पीट पीट, कर अपने रस्ते जावेगी।
किया कर्म जसा इसने, उसका वैसा फल पावेगी ॥

दोहा

शूर्पणखा दिल सोचती, बना नहीं कुछ काम।
बतलाऊं इसको वही, जो थी सुन्दर वाम ॥

है महा लम्पटी इन बातो का, कान इधर झट लायेगा।
कम से कम यह तो निश्चय है, एक बार वहां पर जायेगा ॥
जैसे बीन बजाने पर बस, नाग मस्त हो जाता है।
ऐसे ही मस्त करूं इसको, अब यही समझ मे आता है ॥

दोहा (शूर्पणखा)

लाज शर्म को छोड़ कर, बोली रावण साथ।
अति आश्चय की सुनो, एक और है बात ॥

नारी जिनके पास एक, सहस्राशु जैसे चढ़ा हुआ।
या मानो बनरूपी रजनी के, गल चन्द्रमा पड़ा हुआ ॥
स्फटिक रत्न जैसा तन है, जैसे साचे मे ढाली है।
मानिन्द दामिनी के क्रान्ति, चालि गति हस निराली है ॥
नलकुमरी न तुलना करती, न उपमा कोई जहान मे है।
अमृत यदि कुछ है दुनियां मे, तो उसकी एक जबान मे है ॥

अद्भुत है लक्षण सारे शुभ, अनुपम दमक दिखाती हैं।
और स्वर्गपुरी की इन्द्राणी भी, उसे देख शर्माती है ॥
एक अंगूठे की बराबरी, न तेरा रणवास करे ॥
नख तेज अति पड़े हुवे, सब खिला चमन प्रकाश करे ॥
आश्चर्य की बात गधे के, गल हीरो का हार पड़ा।
एक रहे रखवाली उसकी, एक लड़े रण बीच खड़ा ॥
रत्न चीज जितनी दुनियां में, सबकी सब वह तेरी है।
तुम उसे बनाओ पटरानी, यह तीव्र भावना मेरी है ॥
सर्प बीन पर मस्त हुआ, जैसे निजफण लहराता है।
कर्मोदय भूप कुमार्ग पर, चलने का ढग बनाता है ॥

दोहा

जादू करके कर गई, शूर्पणखा प्रस्थान।
विषय वर्धक वचन सुन, रावण हुआ गलतान ॥

परनारी का ध्यान जिस समय. जिस प्राणी को आया है।
तो समझ लेवो कि बस, उसकी किस्मत ने चक्कर खाया है ॥
कुल गौरव मिलाकर मिट्टी मे, अपयश का पिंड भराता है।
और गुण वैभव की राख बनाकर, अन्त मे फिर पछताता है ॥

दोहा

परनारी पैनी छुरी, पॉच ठौर से खाय।
फल किंपाक समान यह, दिल अन्दर धस जाय ॥
तन छीजे यौवन हरे, पत पंचो मे जाय।
जीवित काढ़े कालजा, मुआ नर्क ले जाय ॥

घ्राणेन्द्रिय के वशीभूत हो, भंवरा प्राण गंवाता है।
भिच भिच मरे फूल मे, पर नही उसे काटना चाहता है ॥
स्पर्शेन्द्रिय के वश में होकर, गज बलिष्ठ तन को खोवे।
रसनेन्द्रिय के पराधीन हो, मीन गहन जल में रोवे ॥

काम राग मे मस्त हुवे, मृगो की डार गोली खाते।
चक्षु इन्द्रिय के बस पतग, दीपक की लौ मे मर जाते॥
एक एक इन्द्रिय ने इनको, दुःख सागर मे गेर दिया।
यहा आन बिचारे रावण को, पाचो विषयो ने घेर लिया॥

दोहा

वीतराग उपदेश मे, धर्म चार प्रकार।
दान शील तप भावना, यही धर्म का सार॥

चित्त वित्त अनुसार दान भी, कई विध से बतलाते है।
निर्मल आत्म बने तभी जब, संयम ध्यान लगाते है॥
शुद्ध भावना भाने वाले, जीव अतुल सुख पाते है।
पर शील पालना अति कठिन, यहां कायर जन गिर जाते है॥

गाना नं० ५८

(ब्रह्मचर्य महिमा)

जीव रे तू शील रंग धर अंग।
बाकी सभी कुरंग है रे, यही करारा रंग॥ टेर॥
अग्नि भी शीतल बने रे, सर्प होय फूलमाल।
शेर हिरन मानिन्द बने रे, अन्धपना लहे व्याल॥१॥
पर्वत सम मार्ग बने जी, विष भी अमृत होय।
विघ्न यहां उत्सव बने जी, दुर्जन सज्जन होय॥२॥
सागर छोटा सर बने जी, अटवी निज घर बार।
मुश्किल सब आसान हो जी, शील अति सुखकार॥३॥
जो कुशील के वश पड़े जी, तब उपजे मोहग।
शुभ करनी को तिलाञ्जलि जी, तप जप जावे भाग॥४॥
अपयश की डौंडी पीटे जी, कुल के लागे दाग।
द्वार दिखावे नर्क का जी, फूट जाये सब भाग॥५॥

चन्द्र रहे नित्य बारहवाँ जी, अष्टम सूर्य जान ।
बीज नाश कुल का होवे जी, दुर्गति का महमान ॥६॥
शीलवती सीता सती जी, वसुधा मे विख्यात ।
गौरव तजे न अपना जी, बेशक होवे तन घात ॥७॥

दोहा

इधर सिया पूरी सती, धर्मज्ञ अति गुणवान् ।
गुण जब रावण ने सुना, लगा काम का बाण ॥
रग रग मे विष फैल गया, कुमति के चक्कर मे आकर ।
पुष्पक विमान मे बैठ गया, दशकन्धर जल्दी से जाकर ॥
होनी बस कामांध बना, रावण बन को चल धाया है ।
पास सिया के देख राम, पीछे विमान टिकाया है ॥

दोहा (रावण)

खड़ा खड़ा नृप सोचता, है यह अद्भुत रूप ।
तीन लोक मे भी नहीं, ऐसा रूप अनूप ॥
नहीं पिछाड़ी हटे नैन, चेहरे पर रूप बरसता है ।
जैसे चातक मेघ बिना, ऐसे मन मेरा तरसता है ॥
या जैसे बिन पानी के कहीं, मछली का नहीं गुजारा है ।
बिना मिले यह पुण्य समूह, मेरा न कहीं सहारा है ॥
अद्भुत रूप अनूप चिह्न, क्या तन पर पड़े सभी आला ।
मानिन्द मोर की गर्दन के, कुदरत ने है सुरमा डाला ॥
जो भगिनी ने बतलाया था, उससे भी बढ़कर पाई है ।
सचमुच बनरूपी रजनी मे, चन्द्रमा बन कर आई है ॥
किन्तु आज क्या हुआ मुझे, नही पैर अगाड़ी बढ़ता है ।
मानिन्द सिंह के आज सामने, राम नजर क्यो पड़ता है ॥

नक्ष तेज यह रामचन्द्र के, हृदय मेरा हिलाते है ।
जो सजे खड़े वस्त्र शस्त्र से, काल रूप दिखलाते है ॥

दोहा (रावण)

आगे पैर बढ़े नहीं, पीछे घटता मान ।
गिरफ्तार चौला हुआ, बने किस तरह काम ॥

जब तक बैठे है राम सामने, सिया हाथ न आयेगी ।
अब करूं याद विद्या अवलोकिनी, भेद वही बतलायेगी ॥
जनक सुता हर लेने का, यही एक ढंग निराला है ।
आगे बैठा शेर हटूं, पीछे तो भी मुंह काला है ॥

दोहा

अवलोकिनी विद्या तुरत, करि याद भूपाल ।
आन खड़ी हुई सामने, लगी पूछने हाल ॥

लगी पूछने हाल आज, किस कारण मुझे बुलाई ।
बतलाओ जो काम मेरे, लायक मै करने आई ॥
मुश्किल से आसान करूं जैसे बच्चे को दाई ।
उसी बात मे हूॅ प्रसन्न, जो हो तुमको सुखदाई ॥

दौड़

सभी कारण बतलाइये, आज मुझको अजमाइये ।
हाथ अपने दिखलाऊं, शक्ति के अनुसार काम जो हो,
पूरा कर लाऊं ॥

दोहा (रावण)

काम आज ये ही मेरा, पाऊं सीता नार ।
और नहीं चाहना मुझे, करो यही उपकार ॥

आगे प्रबलसिंह बैठा, पीछे हठ गिरू समुद्र में।
खैंच लिया मन सीता ने, बस झुरू खड़ा बन अन्दर में ॥
सिर धुन कर विद्या बोली, राजन् क्या पाप कमाता है।
दूर करो यह दुष्ट ध्यान, यदि सुख सामग्री चाहता है ॥

दोहा (अवलोकिनी देवी)

सतियों में है शिरोमणी, रामचन्द्र की नार।
शील रत्न खंडे नहीं, करे जिस्म की छार ॥
यदि कोई चाहे मस्तक से, मंदर गिरि तोड़ गिरादूंगा।
प्रमादी बनकर प्रबलसिंह की, मूंछें पकड़ हिलादूंगा ॥
अन्तक न आवे पास कभी, चाहे काल कूट विष खालूंगा।
और करू हाजमा लोहे के, दांतों से चने चबालूंगा।
शायद किसी के द्वारा यह, अनहोनी भी कर सकता है ॥
पर स्वयं इन्द्र भी सीता को, आकर नहीं फुसला सकता है ॥

गाना नं० ५६ (अवलोकिनी)

मान ले कहना हमारा, मोड़ दिल इस पाप से।
है बुरा परिणाम हित करके, कहूं मैं आपसे ॥१॥
है पवित्र आत्मा, पूरी न छोड़े धर्म को।
क्यो बनाता भस्म, ऋद्धि को जला इस आग से ॥२॥
आशिविष तेरे लिये, है लंका को बारूद सम।
राख कर डालेगी सबको, यह जरा से शाप से ॥३॥
सूर्यवंशी की वधू, मानिंद व्याधि के तुझे।
कर किनारा तज बदी, बच नरक के संताप से ॥४॥

दोहा (रावण)

मन मे है सीता बसी, मुझे न सूझे और।
पटरानी इसको करू, चाहे मिले दुःख घोर ॥

घोर नरक स्वीकार मुझे, ऋद्धि की कुछ दरकार नहीं।
बिना सिया के दुनियां मे, मुझको कुछ लगता सार नहीं॥
वे ही ढंग बता मुझको, जैसे सीता पा सकता हूं।
फिर राजी से नाराजी से, जैसे हो समझा सकता हूं॥

दोहा

अवलोकिनी विद्या कहे, तजो ख्याल यह नीच।
फिर भी सोच विचार क्यो, हृदय की लई मीच॥

यदि फूट गई किस्मत तेरी तो, मै क्या यत्न बनाऊँगी।
जिस कारण मुझे बुलाया है, सो तो अब कुछ बतलाऊँगी॥
जब तक है श्री राम यहाँ पर, सिया हाथ न आनें की।
सुरपति भी यदि आ जावे, तो पेश न उसकी जाने की॥

दोहा (अवलोकिनी)

लक्ष्मण जब लड़ने गया, राम किया संकेत।
सिंहनाद तेरा शब्द, सुन आऊं रणखेत॥

यदि भीड़ पड़े कोई तुम पर तो, मुझ को शीघ्र बुला लेना।
तूं सिंहनाद कर शब्द मेरे, कानो तक जरा पहुंचा देना॥
तुम करो शब्द अपने मुख से, बस रामचन्द्र उठ धायेगा।
पीछे सीता रहे अकेली, काम तुरन्त बन जायेगा॥
सुनते ही तजवीज भूप का, हृदय कमल प्रकाश हुआ।
बोला विद्या से तुम जावो, बस काम मेरा सब पास हुआ॥
अब पुण्य मेरा वृद्धि पर है, सब काम ठीक बनता जाता।
सीता को हरण करूं जल्दी, अब समय बहुत निकला जाता॥
अहा कैसा समय मिला, मन वांछित फल मै पाऊँगा।
छलकर भेजूं अब रामचन्द्र को, सीता हर ले जाऊँगा॥

राम लखन को तो दल मे, खरदूषण मार मुकावेंगे।
ले चले सिया को लंका में, अपना आनन्द उड़ावेंगे ॥

दोहा

सिंह नाद रावण किया, छुप रण भूमि ओर।
सुनते ही सिया राम के, दिल में मच गया शोर ॥

सिया राम से कहे युद्ध मे, लक्ष्मण तुम्हें बुलाता है।
घेर लिया कहीं शत्रु ने, इस कारण शब्द सुनाता है ॥
इक जान टके सी लक्ष्मण की, और गोल अरि का भारी है।
जल्दी जाकर ललकारो तुम, फिर जूझेगा बलधारी है ॥

दोहा

करे प्रेरणा हर समय, बनो सहायक जाय।
रामचन्द्र इस बात को, सोच रहे मन मांय ॥

(राम)

जो लक्ष्मण को घेर सके, नहीं जननी ने कोई जाया है।
यह आकर के किसी शत्रु ने, ऐसा प्रपंच बनाया है ॥
वह महा बली योद्धा लक्ष्मण, निश्चय न किसी से हारेगा।
करे शीश धड़ से न्यारे, सब दल का होश बिगाड़ेगा ॥

दोहा

रामचन्द्र यों कर रहे, दिल मे निजी विचार।
होन हार आकर यहाँ, बैठी आसन मार ॥

बार बार सिंह नाद शब्द, रावण निज मुख से करता है।
वहां श्री राम से करे प्रेरणा, सीता का दिल डरता है ॥
कहे रामचन्द्र वन बीच, अकेली कैसे जाऊँ छोड़ तुझे ॥
नहीं हारता लक्ष्मण, सारी दुनियां से विश्वास मुझे ॥

दोहा (सीता)

हे स्वामिन दिल मे जरा, कुछ तो करो विचार ।
तुम्हे बुलाने के लिये, लक्ष्मण रहा पुकार ॥

गाना नं० ६० (सीता का राम से)

जावो जावो जी महाराज, लक्ष्मण ने सिंह नाद सुनाया ॥टेर॥
प्रेमऐसा जिनका तुम साथ, दिवस कहो दिवस रात कहो रात ।
तजे सुख राज पाठ सब ठाठ, बनो मे संग तुम्हारे आया ॥१॥
जहाँ पर पड़ा कष्ट कोई आन, अगाड़ी हुआ आप सिरतान ।
सुना जब चले बनो मे राम, अवध का खाना तक न खाया॥१॥
हमारी सेवा करी दिन रात, समझा तुझे पिता मुझे मात ।
नजर नीची न ऊँची बात, कभी न मुंह की तर्फ लखाया ॥३॥
लिया शत्रु ने देवर घेर, जल्दी जावो मत लावो देर ।
फेर मे पड़े फेर से फेर, समय बीता न हाथ कभी आया ॥४॥
मानो प्रीतम मेरी बात, करो शत्रु की जाकर घात ।
मिले ना तुमको ऐसा भ्रात, पसीने की जां खून बहाया ॥५॥
किया तुमने उनसे संकेत, पड़ा अब काम बीच रण खेत ।
हर घड़ी शब्द सुनाई देत, शुक्ल यह दिल मेरा घबराया ॥६॥

दोहा (राम)

यही सोच मैं कर रहा, अय सीता मनमाय
दुविधा के अन्दर फंसा, कहूं तुझे समझाय ॥

गाना नं० ६१

लखन को जीते कोई, साक्षी यह मन देता नही ।
जाऊँ अकेली छोड़ तुमको, यह भी मन कहता नहीं ॥१॥
सोचो यह शत्रु का इलाका, घोर फिर उद्यान है ।
हाल क्या तेरा बने, कुछ भी कहा जाता नहीं ॥२॥

शब्द सुन सुन के कलेजा, आ रहा मुंह की तर्फ ।
यदि सहायक न बनूं यह, भी तो दिल चाहता नहीं ॥३॥
प्रेरणा तेरी ने सीता, फेर डाला मन मेरा ।
अब तो भाई के मिले बिन, दिल सब्र लाता नहीं ॥४॥

दोहा

कर्मगति होकर रहे, क्रोड़ों करो उपाय ।
धनुष बाण श्रीराम ने, कर मे लिया सजाय ॥

कुछ सीता के कहन से, कुछ प्रेरा सिंहनाद ।
पहिन कवच अब चल दिये, अरुणावर्त को साध ॥

बायां नेत्र श्रीराम का, चलते समय है फड़क रहा ।
दाहिना फड़के सीताजी का, यह देख, कलेजा धड़क रहा ॥

दायें से बायें हिरण गये, और तीतर बायें बोल रहा ।
पीछे को शकुन हटाते हैं, यह रामचन्द्र मन तोल रहा ॥

अशुभ कर्म जब उदय होय, काफूर अक्ल बन जाती है ।
इस उल्ट फेर में आन फंसे, नहीं समझ बात कोई आती है ॥

मन सोच रहे श्रीराम सिया को, अभी छोड़ कर आया हूँ ।
मै पता भ्रात का लूं जल्दी, जाकर जिस कारण धाया हूं ॥

यही बात मन सोच राम ने, आगे कदम बढ़ाया है ।
अवकाश सिया हरने का, पीछे दशकन्धर ने पाया है ॥

खुशी खुशी अब लपक-झपक, रावण कुटिया पर आया है ।
और भोली भाली शक्ल बना कर, ऐसे वचन सुनाया है ॥

सीता हरण

गाना नं० ६२

[रावण और सीता का सम्वाद—गाना]

(रावण) कुछ नीर पिलादे, प्यासा मैं आया तेरे द्वार पर।
कुछ ख्याल कर उपकार कर ॥ टेर ॥

(सीता) विमान पास फिर देर लगी क्यो, जाते निज स्थान पर।
तू कौन कहां से आया,
(रावण) लंकापुर से ॥
(सीता) क्या जल कही तुझे न पाया ?
(रावण) प्या निज कर से।
(सीता) जलाशय हरजां निर्मल जल, झरने बहे पहाड़ पर ॥१॥
(रावण) वह जल हम नही पीते है,
(सीता) किस कारण से।
(रावण) बस निर्मल पर जीते है,
(सीता) तो कारण से ॥
(रावण) जल्द पिलावो देर न लावो, कांटे पड़े जबान पर ॥२॥
(सीता) पीलो यह धरा हुआ है,
(रावण) दो अन्दर से।
(सीता) शीतल ही भरा हुआ है,
(रावण) फिर दो कर से ॥
(सीता) हम नहीं आते बाहर कुटी से, मत ज्यादा तकरार कर ॥३॥
(रावण) क्या प्यासे जावे दर से,
(सीता) ऐसा न कहो।
(रावण) तो भर दो लोटा कर से,

(सीता) प्यासे न रहो ॥
(रावण) किस कारण फिर देर लगाई, जल्दी से उपकार कर ॥४॥
(सीता) कैसा है मनुष्य हठीला,
(रावण) खुदगर्ज न हो ।
(सीता) रुक बैठा जैसे कीला,
(रावण) जो मर्जी कहो ॥
(सीता) पीलो वह जल का लोटा तुम, मैं नहीं आती द्वार पर ॥५॥
(रावण) इससे नहीं प्यास बुझेगी,
(सीता) यह और पड़ा ।
(रावण) इससे तो और जगेगी,
(सीता) मुझे भ्रम पड़ा ॥
(रावण) यदि पिलाना है तो पिला प्रेम जल वरना बस इंकार कर ।६।
(सीता) तू जल पीने नहीं आया,
(रावण) हाँ समझ गई ।
(सीता) तुझे काल घेर कर लाया,
(रावण) वाह खूब कही ॥
(सीता) भाग यहाँ से वरना मारे, रघुवर तुझे पछार कर ॥७॥
(रावण) मैं हूं लंका का वाली,
(सीता) हो सकता है ।
(रावण) तू बन मेरे घर वाली,
(सीता) क्या बकता है ॥
(रावण) जो मर्जी कहो शब्द फूल सम, शोभे रसना सार पर ॥८॥
(सीता) यह धड़ से शीश उड़ेगा,
(रावण) क्या आफत है ।
(सीता) जब चिल्ले धनुष चढ़ेगा,
(रावण) क्या ताकत है ॥

(सीता) असुरनरेन्द्र थर्रति, अरुणावर्त की टंकार पर ॥९॥
(रावण) मै महाबली त्रिखण्डी,
(सीता) बिल्कुल खर है।
(रावण) है राम हकीर पाखण्डी,
(सीता) शेरे नर है ॥
(रावण) हरगिज न शोभे कौवे गल, तू रत्नों का हार वर ॥१०॥

दोहा (रावण)

आया हूं मैं लंक से. कर तेरा अनुराग।
निश्चय हृदय मे धरो, खुले आपके भाग ॥
तुम त्रिखण्डी की पटरानी, बन गई चाल शुभ कर्मो की।
अब चन्द दिनो मे ज्ञात हो जाओगी, तुम इन सब मर्मो की ॥
अब जल्दी पुष्पक विमान मे बैठो, दूर सभी यह शर्म करो।
पलके पर मौज उड़ाओगी, दिल मे न रंचक भर्म करो ॥

दोहा

रावण ने अनुचित वचन, कहे इस तरह भाष।
सीता के भी उड़ गये, एक दम होश हवास ॥
देख अनुपम रूप भूप की, खुशी का न कोई पार रहा।
अब राजी से नाराजी से, बैठो विमान मे मान कहा ॥
वज्र घात हुआ हृदय पर, मानिंद फूल मुर्झाई है।
ऊंचे स्वर से रोई सीता, नयनो मे जल भर लाई है ॥

दोहा

प्रबल वीर रस धार कर, बोली सीता नार।
दुष्ट यहां से भाग जा, क्यो मरता बदकार ॥
आकर के श्रीराम तेरा यह, धड़ से शीश उड़ादेगे।
महा वज्रावर्तज धनुष बाण से, तेरे प्राण गवादेगे ॥

हाथ बढ़ा कर रावण ने, झट पट विमान बैठाई है।
फिर बैठ के आप विमान मे, झट चलने की कला दबाई है।
परवश वह सीता हाय हाय कर, ऊँचे स्वर से रोती है।
हाथों से सिर पीट पीट कर, अपने तन को खोती है॥
सब देख हाल यह, तुरत जटायु पक्षी पीछे धाया है।
निज चोंच पंख और पंजों से, रावण संग युद्ध मचाया है॥
सीता को छुड़वाने कारण, तन मन से जोर लगाया है।
पक्षी नहीं हटा हटाने से, फिर क्रोध भूप को आया है॥
पकड़ जटायु को कर से. दो बाजु तोड़ बगाया है।
वह पंख हीन लाचार जटायु, शरण धरण की आया है॥

कुछ फिकर नहीं पक्षी को, अपने दु ख का या मर जाने का'
एक शल्य बड़ा है हृदय में, सीता को हर ले जाने का॥

निर्भयता से जारहा रावण, वैदेही रुदन मचाती है।
यह मुझे ले चला दुष्ट कोई, आ करो सहाय बताती है॥

हे राम पति देवर लक्ष्मण, रावण से मुझे छुड़ालो तुम।
हा खेद पुकार कोई नहीं सुनता, हो बैठे सब ही गुम शुम॥

हाय ससुर दशरथ तुम ही, कुछ आज सहाय्य करो मेरी।
हे जनक पिता कहाँ गये, विदेहा माता मै जाई हूं तेरी॥

ह भामंडल वीर कहीं, सुनता हो मुझे छुड़ा लेना।
कोई परोपकारी मनुष्य मात्र, रावण से मुझे बचालेना॥

क्या निश्चल सब ही पत्थर की, मूर्ति के मानन्द बने।
क्या आज मेरी किस्मत लौटी, दुखिया की कोई न बात सुने॥

सास और परिवार सभी, कहते थे तू मत जा बन में।
यह किस्मत उलट गई मेरी, बस एक नहीं लाई मन मे॥

परवाह नहीं कुछ मरने की, मै अभी जवान को काढ़ मरूं ।
पर राम प्राण तज देवेगे, इसका कहो क्या मै इलाज करूं ॥

दोहा

सीता ऐसे कर रही, दुःख में रुदन अपार ॥
सुनने वाला कौन था, उस बन मे नर नार ॥

अर्क जटी का पुत्र एक, जो रत्न जटी कहलाता था ।
विमान के द्वारा शूरवीर वह, कम्बुक द्वीप मे आता था ॥
रुदन सुना जब सीता का, कुछ मन मे जरा विचारा है ।
यह सिया बहन भामडल की, जो जिगरी मित्र हमारा है ॥
श्री दशरथ की कुल वधू, रामचन्द्र की नार कहाती है ।
रावण हर के ले चला लंक मे, अपना दुख सुनाती है ॥
यदि लड़ूं मैं रावण से तो, निश्चय प्राण गंगाऊंगा ।
पर कुछ भी हो क्षत्रापन को, हरगिज नही लाज लजाऊंगा ॥
जो कर्त्तव्य अपना पालूंगा, बेशक फल हाथ नही आवे ।
जो वक्त पड़े करदे टाला, वह क्षत्रिय नर्क बीच जावे ॥
खिला फूल जो आज बाग मे, वह एक दिन कुमलावेगा ।
इस तन पिंजरे को छोड़, जीव मात्र परभव को जावेगा ॥

दोहा

कर्त्तव्य अपना समझ कर, खैंच लई तलवार ।
रावण के सन्मुख अड़ा, यो बोला ललकार ॥

दोहा (रत्नजटी)

दुर्बुद्धि दुरात्मा, नामर्द चोर के चोर, ।
कहां सिया को ले चला, देखूं तेरा जोर ॥

देखूं तेरा जोर करूं पापी, धड़ से सिर न्यारा।
निर्भय हो जा रहा लंक, नहीं जाना मिले सुखारा ॥
छोड़ अभी सीता को नहीं, मारूं धर तान दुधारा।
रामचन्द्र की नार चुरा, फांसा निज गल में डारा ॥

दौड़

बेशर्म शर्म न आई, क्या अबला नार चुराई।
भुजा फड़कें हैं मेरी, झेल मेरा ये वार, जान संकट मे आगई तेरी॥

दोहा

रावण यो कहने लगा, जरा जरा मुस्काय।
गीदड़ की आवे कजा, ग्राम सामने जाय ॥
उछल कूद कर मेंढक सा, किसको तलवार दिखाता है ॥
प्रबल सिंह के ऊपर भी, आकर क्या धौंस जमाता है ॥
जान बचाकर भाग अरे, मूर्ख क्यो प्राण गंवाता है।
कोई गरीब मार न हो जावे, मुझको विचार यह आता है ॥

दोहा

झगड़ा दोनों में बढ़ा, लगा होन संग्राम।
रत्नजटी ने लगा दई, अपनी शक्ति तमाम ॥
तीव्र हवा में टिक नही, सकता पक्का आम।
इसी तरह तूफान सम, रावण था उस धाम।

छन्द

काट शस्त्र तोड़कर विमान सब बेपर किया।
लाचार हो नीचे गिरा, कर्तव्य पूरा कर दिया ॥
कंबू गिरी पर आ गिरा, कंबू ही नामा द्वीप है।
गिरते गिरते छिल गया, सारा जिस्म क्या पीठ है।

मूर्च्छित हुआ वहाँ से, फिसल कंदर के अन्दर जा पड़ा।
सीता सहायक देख, अपना यो कहे रावण खड़ा ॥

दोहा (रावण)

जनक सुता रहो रंग मे, सुख मे दुःख न दिखाय।
भाग्य हीन संग राम के, फिरती थी वन मांय ॥
मैं तीन खंड का नाथ, मेरे चरणो मे राजे गिरते हैं।
उन सब के हृदय कांप उठे. जब मेरे नेत्र फिरते है ॥
भूचर खेचर क्या तीन खंड के, भूप सभी आधीन मेरे।
क्या रोती है पटरानी बन जावेगी, खुल गये भाग्य तेरे ॥
थी कौवे रूप राम गल तू, रत्नो की माला पड़ी हुई।
तब लौट गई थी किस्मत तेरी, अब दीखे कुछ चढ़ी हुई ॥
शोभे दूध शंख अन्दर, और जैसे लाल अंगूठी मे।
ऐसे तू मेरे संग शोभे, शस्त्र शूरे की मुट्ठी मे ॥
शशि सहित रजनी शोभे, हस्ती शोभे दो दांतो से।
मौन सहित मूर्ख शोभे, और चतुर आदमी बातो से ॥
मोर शीश कलगी शोभे, शूरा शोभे रण के अन्दर।
यो तेरी शोभा रंग महल मे, नहीं शोभती वन अन्दर ॥
सब महारानियो के ऊपर, पटरानी तुझे बना दूंगा।
जो भी आज्ञा तुम देओगी, मस्तक पर उसे उठा लूंगा ॥
निर्भय निजमन से हो जाओ, तुमको न कभी सताऊंगा।
मै चाकर बनकर रहू तेरा, किंकर बन हुक्म बजाऊंगा ॥
शुभ जगह सदा मोती शोभे, मन मे कुछ ध्यान लगाले तू।
धैर्य धर दस बीस दिनो तक, और मुझे अजमा ले तू ॥
जो स्वयं हृदय से न चाहे, उस नारी का है नियम मुझे।
बस यही जरा सी अटक हटा दे, साफ साफ अब कहूं तुझे ॥

अपने सिर का ताज मान, निज मुख से शव्द सूना दे तू।
हंस करके मुख से कहो जरा, मम हृदय कमल खिला दे तू॥
जो कुछ इच्छा तेरी सो कर, तू तीन खंड की रानी है।
दासो का दास बन रहूँ तेरा, बस यही मेरे मनमानी है॥

दोहा

सिया न ऊपर को लखे, राम चरण में ध्यान।
उत्तर कुछ देती नहीं, समझे पशु समान॥
ऊंचे स्वर से रो रही, करे अति विलाप।
इसी बात का हो रहा, रावण को संताप॥

दोहा (रावण)

स्यानी होकर के सिया, क्यो बनती अनजान।
देखो तो वह सामने, लंका कोट महान्॥

सुवर्णमयी लंका सीता, वह देख सामने आती है।
शुभ हवा देख यह देव रमण से, मस्त सुगंधि लाती है॥
तेरा ऊंचे स्वर से रोना यह, गौरव मेरा घटाता है।
सुन लोग कहेंगे क्या रोनी, सूरत दशकंधर लाता है॥
फिर आती है कुछ शर्म मुझे, कैसे महलो मे ले जाऊं।
तब सभी रानियां पूछेगी, तो क्या मैं उनको बतलाऊं॥
सब रुदन छोड़ कर खुश चेहरा, हर बार तुझे समझाऊं मैं।
कुछ तो बोलो क्या चाहती हो, सो ही सेवा मे लाऊं मैं॥

दोहा

सीता के चरणो में लगा, धरने मुकुट नरेश।
जनक सुता पीछे हटी, करके रोष विशेष॥

जैसे हवा चले पूर्व की, ध्वजा तुरन्त पश्चिम जाती ।
यदि चले पश्चिम की तो, फटखारा खा पूर्व आती ॥
मन मे सोच रही सीता, अपना नहीं धर्म गवाऊंगी ।
समय यदि आया तो रसना, खैंच तुरन्त मर जाऊंगी ॥

दोहा (सीता)

शील रत्न ही रत्न है, बाकी सब पाषाण ।
कहा श्री सर्वज्ञ ने, मिले अन्त निर्वाण ॥

जो नाक कान दोनो तोड़े, किस काम का वह फिर सोना है ।
यह ऐसा मुझको रूप मिला, बस रात दिवस का रोना है ॥
इस पापी रूप के कारण, पहिले, माता पिता ने दुख पाया ।
फिर भामण्डल भाई का मन था, इसी रूप ने भरमाया ॥
और इसी रूप को अटवी मे, चोरो ने घेरा लाया था ।
उस समय श्री लक्ष्मण जी ने, उन सबको मार भगाया था ॥

दोहा (सीता)

कर्मों ने मुझ पर बुरा, डाला अब यह जाल ।
अनुमान सभी यह कह रहे, आने वाला काल ॥

दुर्निवार यह आपत्ति, पापी मम धर्म गवांयेगा ।
प्राणान्त यहाँ पर मै कर दूं, पीछे रघुपति मर जायेगा ॥
धर्म हेत सब को त्यागो, सर्वज्ञ देव बतलाया है ।
यह बाकी सब संयोग जगत् के, झूठी सारी माया है ॥

राज्य पति परिवार सभी, अवसान मे एक दिन छूटेगा ।
यह तन मेरा चमकीला भांडा, अवश्यमेव ही फूटेगा ॥
चोट पड़ी अब सिर पर आकर, तो फिर क्या घबराना है ।
सर्वस्व चाहे अर्पण करदूं, आत्म का धर्म बचाना है ॥

शील की खातिर तजो प्राण, ऐसी आज्ञा है श्रीजिन की।
अशुभ कर्म जब उदय आ गया, तो फिर आस करूं किन की॥
मौत के आगे डर क्या है, आत्म शक्ति दिखलाऊं मैं।
अब के बोला जो कुछ मुख से, तो कोरी बात सुनाऊं मैं॥

दोहा (रावण)

अय सीता रोना तेरा, डाले मम सिर धूल।
प्रसन्न चित्त मुख से जरा, वर्षा प्यारी फूल॥

दोहा (सीता)

मुंह पीछे को फेर के, बोली त्यौरी तान।
अधम महा पापिष्ठ तू, बिल्कुल पशु समान॥

आश्चर्य की बात गधे भी, इतर फुलेल फिरें टोहते।
आज तलक दुनिया मे देखे, कुरड़ी पर फिरते खोते॥
उल्लूवत् नजर नही आता, तुझको तो आँख बना जाकर।
प्रबल सिंह की ले खुराक, गीदड़ कहाँ छिप सकता धा कर॥

मिले धूल में सब लंका, शेखी क्या जता रहा मुझको।
मै नारी नहीं नागिनी हूं, तज अभी साफ कहूँ तुझको॥
धिक्कार तेरी शूरमताई, जा मुझे चुराकर लाया है।
गौरवहीन काम नही करता, क्षत्रिय कुल का जाया है॥

गाना नं० ६३ (सीता की रावण को फटकार)

चल हट उल्लू गधे हैवान, बेहूदे गंवार दहकानी॥टेर॥
अक्ल के शत्रु दुर्गुण धाम, देख मै किस नर की हूं वाम।
चढ़ें लंका पर लक्ष्मण राम, होवे काफूर तेरी राजधानी॥१॥
पै प्रबल सिंह की नार, देवर लक्ष्मण अति बलधार।

तेरा धड़ से ले सिर तार, बनावे क्या मुझको पटरानी ॥२॥
तेरी सम्पति ऐशोआराम, खाक की मुट्ठी करूं तमाम ।
मेरे भर्तार एक श्रीराम, बके मत कौवे सुनी कहानी ॥३॥
मुझे तू पैनी बर्छी जान, विष या कालकूट सामान ।
किया तै दुष्ट कर्म नादान, बचे न अब तेरी जिंदगानी ॥४॥
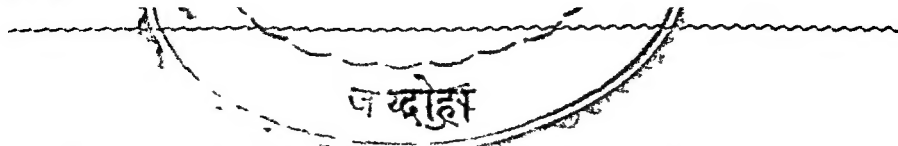
दोहा

वचन काट करते हुये, सुने खुशी से भूप ।
जैसे सर्दी मे लगे, मीठी सबको धूप ॥

जैसे बाराती जन गाली, जान बूझ कर सहते है ।
सुन अयोग्य भाषा अधिकारी को, हजूर ही कहते है ॥
यही हाल कामांधे का, कुछ नही समझ मे लाता है ।
वर्ताव देख वैदेही का, रावण मन को समझाता है ॥

दोहा (रावण)

सीता की सब गालियाँ, मानो लगते फूल ।
जो मर्जी मुख से कहे, मुझे रंज न मूल ॥

प्रेम पुराना राम सग है, नया नया यह काम सभी ।
किया तंग तो ऐसा न हो, खेल जान पर जाय कभी ॥

प्रेम पशु का भी जैसे अपने रक्षक से होता है ।
फिर यह तो राजदुलारी है, त्रिया हठ भी नहीं छोटा है ॥

अब रोती हुई इसको महलो मे ले जाना नहीं अच्छा है ।
सुन न लेवे रुदन कोई, जितना नर नारी बच्चा है ॥

देव रमण उद्यान बीच, एकान्त इसे ठहराना है ।
प्रेम भाव से शनैः-शनैः फिर, सीता को समझाना है ॥

दोहा

ऐसा मन मे सोच कर, दशकंधर बलवीर।
देव रमण का ही हुआ, निश्चय ध्यान आखीर॥

सामन्त मन्त्री स्वागत करने, उधर सामने आते है।
नगरी और विशेष सजी, जय जय को ध्वनि सुनाते हैं॥

छोड़ सभी को सुरति भूप ने, देव रमण को लाई है।
शुभ रक्ताशोक वृक्ष नीचे, श्री जगदम्बा बैठाई है॥

सब मेवा और मिष्टान्न थाल, वहां थे भोजन के लगे हुये।
जहाँ मीठे स्वर से कोयल बोले, फूल बाग मे खिले हुये॥

त्रिजटा नाम आदि दासी, सब आगे पीछे फिरती है।
फल-फूल हार गजरे अद्भुत, ला ला सेवा में धरती हैं॥

शक्ति नही ज़बां लेखनी मे, सब सेवा का गुन गान करे।
अद्भुत वस्त्र क्या आभूषण, लाकर सारे सामान धरे॥
सब लंका भर में खुशी हुई, नृप नार अनुपम लाया है।
महा कष्ट के आरे चले सिया पे, रावण मन हर्षाया है॥

दोहा

इच्छाएं सब तज दई, राम चरण में ध्यान।
शुक्ल प्रतिज्ञा सिया की, सुनो लगाकर कान॥

दोहा (सीता)

लक्ष्मण और श्रीराम का मिले न जब तक क्षेम।
खान पान का तब तलक, है मेरा भी नेम॥
प्रबन्ध बाग का ठीक बना, लंका को भूप सिधारा है।
सामन्त मन्त्री अधिकारी, क्या जन समूह संग भारा है॥

कर्म शुभाशुभ जीवो को, कैसा सुख दुख दिखलाते है।
सम ज्ञान दर्श चरित्र विन, यह नष्ट नहीं हो पाते है॥

दोहा

सीता बैठी बाग में, रावण लका मांय।
लक्ष्मण की श्री राम जी, करने गये सहाय॥

भाग दूसरा हुआ खतम. सीता का हरण हुआ इसमे।
कोई छूटे कर्म विना भुगते, यह शक्ति बतलाओ किसमे॥
रामचन्द्र का हाल शेष, सब पढो तीसरे हिस्से मे।
धन्य 'शुक्ल' वह पुरुष धर्म पर, कायम रहे परिषह में॥

❀ पूर्वार्धस्य द्वितीयो भागः समाप्तः ❀